शार्दूल-वंश-प्रकाश

(प्रथम जिल्द)



लेखक
कुंवर रघुनाथसिंह शेखावत कालीपहाडी



भूमिका लेखक
कुंवर देवीसिंह मण्डावा



प्रकाशक
श्री शार्दूल शेखावाटी इतिहास शोध संस्थान
कालीपहाडी, झुंझनू (राजस्थान)



प्रथम सस्करण
महाशिवरात्रि
वि स २०३३
ई सन् १९७७
हिजरी १३९७



मूल्य-
जनता सस्करण-पन्द्रह रुपये
पुस्तकालय सस्करण-पच्चीस रुपये



मुद्रक-
रामेश्वरलाल शर्मा
नव भारत प्रेस, झुंझनू



ठाकुर शार्दूलसिंह [झुन्झुनू]

विक्रम एव शौर्य के प्रतीक,
राजनीतिक सूझबूझ एव तलवार के धनी

तथा

हिंदू धर्म रक्षक
झुंझनू-अधिपति

ठाकुर श्री शार्दूलसिंह बहादुर

की

पावन स्मृति को
यह ग्रंथ सादर समर्पित

ग्रंथकार



कु० रघुनाथसिंह शेखावत एम ए

विशिष्ठ सम्मतियाँ

"रघुबीर निवास"
सीतामऊ (मालवा)
४५८ ६६० नवम्बर १, १६७६

इन पिछले वर्षों मे क्षेत्रीय इतिहास की ओर विशेष ध्यान दिया जाने लगा है। 'शेखावाटी के इतिहास' सबधी कुछ ग्र थ निकले हैं, जिन में श्री देवीसिंह मण्डावा कृत 'शादू लसिह शेखावत' और श्री मु जनसिंह भ भड कृत 'रावशेखा' उल्लेखनीय हैं। उनसे इस क्षेत्र के इतिहास के अब तक अज्ञात परतु महत्त्वपूर्ण अ शो पर नया प्रकाश पडता है। उसी परम्परा मे अब श्री रघुनाथ सिंह कालीपहाडी कृत 'शादू ल वश प्रकाश प्रकाशित होने जा रहा है। अपने इस ग्र थ की रचना करते समय लेखक ने पूववर्ती पुस्तको म भी जानकारी एकत्र करने का प्रयत्न किया है। यत्र तत्र पूववर्ती लेखको के मतो को विवेचना करते हुए अपनी विभिन्न स्थापनाओ को भी प्रस्तुत किया है। इस इतिहास लेखन के सदभ मे लेखक ने कई ऐतिहासिक यात्राए भी की और विभिन्न ऐतिहासिक दुर्गों, स्थलो, भग्नावशेषो का स्वय देखा भाला था तथा वहा के शिलालेखों, ऐतिहासिक कागज पत्रो अथवा भित्ति चित्रो का अध्ययन किया। कई एक स्थनों के फोटो-चित्र भी लिए थे, जो इस ग्र थ मे प्रकाशित किये जा रहे हैं। इस ग्र थ की मुख्य विशेषताए ये है।

कछवाहो को पूववर्ती वशावली देकर शेखाजी के वशजो की विभिन्न प्रमुख शाखाओ के आदि पुरुषो का स्पष्टीकरण कर दिया है। राव शेखा स लेकर शादू लसिह के पिता जगरामसिंह तक का सक्षिप्त विवरण देने के बाद शादू लसिह की जीवनी विस्तार के साथ लिखी है। तदनन्तर शादू लसिह के वशजो का विभिन्न शाखाओ का विस्तृत विवरण देने के साथ उन सब की वशावलिया भी दे दी गई हैं। यो ग्र थ एक प्रकार से शादू लसिह के वशजा सम्ब धी जानकारी का उपयोगी सग्रह हो गया है। इस वश विषयक भावी सशोधको के लिए यह ग्र थ बहुत

सहायक होगा। इन पिछली दो शतियो की क्षेत्रीय घटनाओ की जो जानकारी इस पुस्तक मे सग्रहीत है, उससे वहा की राजनतिक तथा सामाजिक परिस्थितियो पर भी काफी प्रकाश पडता है। यह ग थ सग्रहणीय अवश्य बन गया है।

— डा० रघुबीरसिंह डी० लिट०

महरनगढ म्युजियम, जोधपुर फोर्ट
जोधपुर

राजस्थान प्राचीन काल से ही वीर क्षेत्र रहा है। यहा विभिन्न राजपूतवशो के अनेक राज्य रहे हैं। इस राज्य मे असख्य प्राचीन ऐतिहासिक अवशेष दुर्ग, मन्दिर, छत्रिया शिलालेख आदि उनकी कीर्तिगाथा के प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। पुरातत्व विद्वानो, पर्यटको और विद्यार्थियो के अध्ययन हेतु राजस्थान भारत का एक प्रमुख स्थान है।

राजस्थान का इतिहास समूचे भारत के इतिहास की एक महत्वपूर्ण कडी है। यहा अनेक राजपूत शाखाओ के राज्यो के अलग अलग इतिहास लिखे गये हैं पर तु राजाओ की विशेष घटनाओ के वर्णन को छोडकर इतिहासकारो ने दूसरे अनेक योद्धाओ के प्रति आख मूदली। यही नही बल्कि राजाओ के साथ लडने वाले साम ता के वीर वशजो ने युद्ध क्षेत्र मे अपने प्राण न्यौछावर किये हैं उन पर भी बहुत कम प्रकाश डाला गया है। जब तक सभी विभिन्न राजपूत शाखाओ का अलग अलग इतिहास नही लिखा जाता है तब तक राजस्थान का इतिहास अधूरा है।

'शादू ल वश प्रकाश" लगभग ४२६ पृष्ठो मे पूर्ण हुआ है जिससे सिद्ध होता है कि लेखक ने शादू लसिंहोत शेखावतो का इतना विस्तार पूर्ण वर्णन लिखकर अथक परिश्रम और लगन का परिचय दिया है। *साथ ही घटनाओ की आधार सूचक टिप्पणिया देकर इस ग्रथ की* प्रमाणिकता व उपयोगिता और भी बढादी है।

कु वर रघुनाथसिंह जी ने अथक परिश्रम कर शादू लसिंह जी के वशजो की इस प्रमुख शाखा को इतिहास मे जोडकर राजस्थान के

इतिहास मे एक कडी जोडी है यानी इन्होने राजस्थान के इतिहास के एक अज्ञात पक्ष को प्रकाश मे लाकर सराहनीय काय किया है। इसमें उनकी लगन, श्रम, धर्य, व्यापक दृष्टि, गहरी सूझबूझ और इतिहास की सच्ची पकड का पता चलता है।

लेखक को इस महान योगदान के लिए मैं हार्दिक बधाई देता हू और आशा करता हू कि इसी प्रकार दूसरे नवयुवक इतिहासवेत्ता विभिन्न राजपूत शाखाओ के इतिहास लिख कर इनका अनुकरण करें ताकि समूचे भारत के इतिहास की एक महत्वपूर्ण कडी जुड जाय।

–सगतसिंह राठौड़
डाइरेक्टर महरनगढ म्युजियम
जोधपुर

राजस्थानी शोध सस्थान, चौपासनी
५ दिसम्बर' ७१

भारतीय स्वतत्रता के पश्चात् जातीय इतिहास और साहित्य के प्रति विद्वानो मे अनुराग उत्पन्न हुआ है समाज को भी अपने पूर्व पुरुषो के इतिहास की महत्ता तथा आवश्यकता की अनुभूति हुई है। फलत विगत वर्षो मे राजस्थान के इतिहास और साहित्य से सम्बन्ध मे अनेक शोधपूर्ण ग्र थ प्रकाश मे आये है।

राजस्थान के इतिहास मे शेखावाटी प्रदेश का सदैव से ही स्मरणीय स्थान रहा है। शेखावाटी की उवरा भूमि ने अनेक युद्ध वीर धर्मवीर, दानवीर तथा स्वातन्त्र्य वीर उत्पन्न किए हैं। भारतीय स्वतत्रता के सशस्त्र सघर्षो तथा शान्तिपूर्ण जन आन्दोलनो मे शेखावाटी के धनीमानी जना का विविध प्रकार का सहयोग किसी से छिपा हुआ नही है।

शेखावाटी के गौरवपूर्ण इतिहास को प्रकाश मे लाने की दिशा में शेखावाटी के सपूत सतत प्रयत्नशील रहे है। शार्दूलसिंह शेखावत, The Shekhawats and Their Lands, राव शेखा, स्वतत्रता सेनानी डूगजी जवाहर जी आदि पुस्तको के पश्चात् 'शार्दूल वश-प्रकाश' का प्रकाशन एक श्लाघनीय चरण है।

'शादू ल वश प्रकाश' के लेखक कु वर रघुनाथसिंह कालीपहाडी एक अध्ययनशील विद्वान हैं। उन्होने विभि न स्रोता से शेखावत इतिहास की सामग्री का सकलन चयन कर यह पुस्तक प्रकाशित की है। जहा पुस्तक मे शार्दूलसिंहोत शेखावतो के इतिहास का समग्र परिचय दिया गया है। वहा क्षत्रियो के छतीस राजवशो, राजपूत जाति का सक्षिप्त इतिहास तथा जयपुर के ताजमी ठिकानो की सूचि आदि उपयोगी सामग्री भी सकलित की गई है। यो कहना चाहिए कि लेखक ने 'शादू ल वश प्रकाश के व्याज से शेखावत विस्तार के इतिहास की आधार भूत सामग्री विद्वानो के समक्ष प्रथमबार विस्तार से प्रस्तुत की है।

पुस्तक विश्व विद्यालयो, सावजनिक पुस्तकालयो शोध विद्वानो और इतिहास प्रेमियो के लिए अनुपेक्षणीय है। ऐसे सुन्दर प्रयास के लिए श्री रघुनाथसिंह जी कालीपहाडी अभिवन्दनीय हैं।

–सौभाग्यसिंह शेखावत
सहायक निदशक राजस्थानी शोध सस्थान,
चौपासनी

शारदा सदन कालेज
मुकुन्दगढ (राज०)
दिनांक २८ १० ७६

कु० श्री रघुनाथसिंह कालीपहाडी रचित 'शार्दूल व श प्रकाश' महाराव शेखा के वशज शेखावतो से सम्बद्ध महत्व पूर्ण इतिहास ग्रन्थ है। राजस्थान, विशेषकर शेखावाटी के इतिहास, समाज और सस्कृति के अध्ययन की दृष्टि से प्रस्तुत ग्र थ अतीव उपादेय सिद्ध होगा। यह ग्रन्थ श्री शेखावत के उक्त इतिहासानुराग एव अथक परिश्रम का परिचायक है। अपने सिमित साधनो मे भी लेखक ने इस प्रमाणिक बनाने का भरसक प्रयत्न किया है। प्रेस की कुछ खटकनेवाली भूलो के अलावा लेखक का यह काय प्रश सनीय है।

डा० प्रतापसिंह राठौड
हिन्दी विभाग

Indian Council of Historical Research,
New Delhi
Thikana Kharwa
खरवा दुर्ग
१६-२-७७

श्री रघुनाथसिंह जी, कालीपहाड़ी (झुंझनू) ने "शार्दूल वंश-प्रकाश" नामक पुस्तक लिखकर शेखावाटी और शेखावतों के इतिहास में एक नई कड़ी जोड़ने का सराहनीय प्रयास किया है।

ठा. शार्दूलसिंह जी के जीवन के पूर्वार्द्ध की अधिकांश घटनायें केवल दंतकथाओं पर आधारित और विशृंखलित थी। विद्वान लेखक ने इस ग्रंथ में उन्हें क्रमबद्ध करने और साथ ही उपलब्ध ऐतिहासिक प्रमाणों के आधार पर उन घटनाओं को सही रूप में स्थापित करने का यथा साध्य प्रयत्न किया है। ठा. शार्दूलसिंह जी के पश्चात् उनके पुत्र, पौत्रों एवम् वर्तमान वंशजों तक के कार्यकलापों का उल्लेख करके इस कृति को उपयोगी बना दिया है। इतिहास के अनुराग एवम् अन्वेषक विद्वानों के लिये यह कृति सहायक सिद्ध होगी।

इस प्रशंसनीय प्रयास के लिए विद्वान लेखक साधुवाद के पात्र हैं।

सुरजनसिंह झाझड़
Research Assistant
for Ajmer Project

'शार्दूल वंश प्रकाश' नामक पुस्तक शेखावतों के गौरव का क्रमबद्ध संकलन है। विद्वान साथी की यह अनुपम भेंट इतिहास प्रेमियों बुद्धिजीवियों एवं अन्य पाठकगणों के लिए स्फूर्तिदायक व नया उत्साह वर्द्धक सफल प्रयास है। मैं उन्हें निजी रूप से बधाई देता हूं।

दौलतराम गर्ग एम. ए.
(इतिहास व अंग्रेजी)
एल. टी.

कु० रघुनाथसिंह शेखावत कृत 'शादू ल वश प्रकाश' पाच खण्डों में विभाजित २१ अध्यायो मे लिखा गया शेखावाटी के विगत आठसौ वर्षो का व विशेष तौर से भु भुनू नरेश शादू लसिहजी के वशधरो का पहला एव प्रमाणिक इतिहास है । सामान्यत हम अपने आसपास के इतिहास से अभिज्ञ रहते हैं । इस कमी को अध्यावसायी लेखक ने पूरा करने का प्रशसनीय प्रयत्न किया है । स्वतन्त्रता के लिए लडे गये राजस्थान के युद्धो में 'हरिपुरा' एव माण्डण के युद्ध अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं । इन युद्धो का लेखक ने अपने इस ग्र थ मे प्रमाणिक वर्णन देने का प्रयत्न किया है जबकि राजस्थान के कुछ इतिहासो मे इन युद्धो का नाम मात्र का वर्णन मिलता है ।

शेखावाटी मे चली आ रही जन श्रु तियो का लेखक ने पूर्ण अध्ययन किया है और इस इतिहास मे उन जन श्रु तियो का सही दृष्टि कोण प्रस्तुत किया है । इतिहास मे पाद टिप्पणियो का बहुत महत्व होता है । लेखक ने इनका पूर्ण प्रयोग किया है जिससे इतिहास की प्रमाणिकता और भी बढगई है । इसके साथ ही लेखक ने विभिन्न मतो का सकलन कर जहातक बन पडा है अपना सही मत देने का प्रयत्न किया है । पुस्तक के अवलोकन से प्रतीत होता है कि लेखक मे इस क्षेत्र मे कार्य करने की बडी सम्भावनायें हैं ।

अन्त मे मै कहना चाहूगा कि शेखावाटी वासियो के लिए तो यह प्रिय ग्रन्थ होगा ही इसके साथ ही विद्वान शोधकर्त्ताओं व इतिहास प्र मियो के लिए भी उपयोगी होगा । लेखक को मैं अपनी शुभ कामनाए अर्पित करता हू ।

मदनलाल याज्ञिक
प्रधानाचार्य पीरामल उ० मा० विद्यालय
बगड

'शादू ल वश प्रकाश' आद्योपान्त पढा । बडा सुरुचि पूर्ण है साथ ही ऐतिहासिक सत्य घटनाओ पर अच्छा प्रकाश पडता है । लेखक श्री रघुनाथ सिंह जी काली पहाडी ने तिमिराच्छादित घटनाओ को प्रकाश

ग्राम घूम कर जो आकडे लेखक ने प्राप्त कर ,सकलित किए हैं वे सत्य व शोध पूर्ण हैं। युवा लेखक की प्रौढ लेखनी से जिन सत्य घटनाओं का उद्घाटन हुआ है वह निश्चय ही श्री शादू ल वश के इतिहास के लिए एक अमूल्य निधि है।

लक्ष्मण सिंह शेखावत
अडूका

श्री रघुनाथसिंह ने शेखावाटी के राजव शो पर जो शोधपूर्ण इतिवृत प्रस्तुत किया है वह न केवल इस दृष्टि से उपयोगी है कि इसके बिना राजस्थान के राजपूत कुलो का इतिहास अधूरा रहेगा अपितु इस दृष्टि से भी कि भारत में अपने आर्थिक और व्यावसायिक बुद्धिबल की धाक जमाने वाले वणिक समाज को ज म भूमि के प्रति पालक कैसे संघर्षो से जूझते रहें हैं।

मैं आशा करता हू कि श्री रघुनाथसिंह जी के इस प्रयास की सवत्र सराहना होगी और ये अपने शोध काय को इसी निष्ठा व विद्वता से सम्पूर्ण कर सकेंगे। यह अपने ढग का प्रथम प्रयास होने से भी अभिन द नीय है।

रावत सारस्वत
दिनाक १२ सितम्बर, १६७६ स मरुवाणी

ROOP NIWAS
Nawalgarh,
Rajasthan
8th Feb 1977

प्रिय रघुनाथसिंह जी

पत्र आपका तारीख 29-1-77 का मिला। 'शादू ल वश प्रकाश" जो आपने लिखी उसकी एक प्रतिलिपि आपने जो कुछ समय पहले भेजी थी, उसको देखी। इसमे कुछ त्रुटिया नजर आती हैं जो शायद इतिहास के जानकार आपको बतायगे लेकिन आपने यह सग्रह करने मे जो परिश्रम व प्रयास किया है वह प्रशंसनीय है जिसके लिए आप बधाई के पात्र हैं। मुझे आशा है कि इतिहास के प्र मी इस पुस्तक से लाभ उठायेंगे व आगे और खोज के लिए प्रयास करेंगे।

भवदीय
मदनसिंह

हकीम यूसुफ हुसेन 'यूसुफ' कुरेशी झुंझनू (राज)
तारीख ११-२ १९७७

"शार्दूल वंश प्रकाश" यकीनन एक ऐसा महत्त्वपूर्ण ग्रंथ है जिससे इस इलाके के प्राचीन इतिहास एवं वर्तमान हालात की काफी जानकारी हासिल होती है। श्री रघुनाथसिंह ने जिस लगन और छान बीन के साथ इस तारीख को मुरत्तब किया है। वो निसंदेह सराहने योग्य है।

इस ग्रंथ के महत्त्व और लेखक के परिश्रम को मद्दे नजर रखते हुए, इतिहास के बारे में अपने ही कुछ मकूले (कथन) पेश करता हूं—

१ इतिहास वो विशाल दर्पण है जिसमें सम्पूर्ण साक्षात् नजर आता है
२ इतिहास नये काफलों के लिए रोशनी का सबसे बडा मीनार है।
३ इतिहास जिन्दा कोमों का अमूल्य खजाना है।
४ इतिहास मुर्दा कोमों के लिए ऐसा ही है जैसा भेंस के लिए बीन।

अन्त में उर्दू लेखकों की विशेष परम्पराओं के अनुसार इस ग्रंथ के रचनाकाल की तारीखें प्रस्तुत करना भी अपना फर्ज समझता हूं—
तारीखी नाम

तारीख	अर्ज	झुंझनू
1211	8	178=1397 (हि स)

श्री	ओम	शार्दूल	वंश	प्रकाश
510	47	541	356	523=1977 (वि स)

झुंझनू	शेखावाटी	का	उज्जवल	इतिहास
178	1328	21	40	467=2034(ई स)

हकीम यूसुफ झुंझनवी
11-2-77

भूमिका

रघुनाथसिंह कालीपहाडी ने 'शादूलवंश प्रकाश' नामक पुस्तक की रचना की है। (ये शादूलसिंह जी के पुत्र सालिमसिंह जी के वंशधर हैं) इनकी इतिहास मे काफी रुचि है तथा विषय मे अच्छा प्रवेश है। गावों में प्रचलित मान्यताए व वंशावलियों का इन्होंने अच्छा संग्रह किया है। पिछले सौ वर्षों का शेखावाटी का इतिहास काफी महत्वपूर्ण रहा है जिसका विस्तार से लिखा जाना आवश्यक था परन्तु वह विस्तार से नहीं लिखा गया है फिर भी पुस्तक उपयोगी है।

शादूलसिंह जी तथा उनके वंशजो के कुछ महत्वपूर्ण कार्यो पर यहा प्रकाश डालना अनुपयुक्त नहीं होगा।

शेखावाटी का आमतौर से और शादूलसिंह जी व उनके खानदान का विशेष रूप से राजस्थान के इतिहास मे महत्व रहा है। महाराजा सवाईजयसिंह जी ने जब जोधपुर पर चढाई की थी उस समय की सेना का जो वर्णन मिलता है। उसमे जागीरदारो की सेना की गणना जयपुर सेना मे सम्मिलित है परन्तु शादूलसिंह जी की ३००० घुडसवार व १००० पैदलो का उदयपुर, बीकानेर शाहपुरा, भरतपुर, नागौर, करौली बूदी इत्यादि के साथ अलग से वर्णन किया गया है जो उस समय के शेखावाटी के महत्व को बतलाता है।

राजा अभयसिंह जी जोधपुर व बीकानेर के राजा जोरावर सिंहजी म स १७९२ मे सरहद पर मुकाबला हुआ तब जोधपुर ने शादूलसिंहजी को मदद पर आने को कहलवाया। मुहता बख्तावर सिंह की ख्यात मे लिखा है कि शादूलसिंह जगरामोत भारी फौज लेकर श्री जी (महाराजा बीकानेर) के मुकाबले मे आया। (मु० ब ख्यात पृ० १८)

स० १८०० म बख्तसिंह नागौर और जोरावरसिंह बीकानेर मे मुकाबला हुआ तब बख्तसिंह ने किशनसिंह शेखावत को मदद पर बुलवाया परन्तु अन्त मे बिना युद्ध के मामला तय हो गया (म ब ख्यात पृ ५६)

स १८१४ मे महाराजा गजसिंह बीकानेर ने कूच करके तोलियासर डेरा किया और रावत लालसिंह दौलतरामोत पर हमला करने की तैयारी की तब शेखावतो को मदद पर बुलाने के लिए पुरोहित जगरूप और चौहान रूपराम को भेजा। ददरेवा के डेरे शेखावत नवलसिंह और केशरीसिंह चार हजार फौज के साथ आकर सम्मिलित हुए। मगसिर वदि ३ को डूगराणा पर हमला हुआ। शेखावतो ने गढ मे प्रवेश किया और साव त दौलतरामोत मारागया, उसका सिर शेखावत लेकर आये। रायसलाणा के डेरे लालसिंह (भादरा) नवल सिंह शेखावत क मारफत हाजिर हुआ जिसके कसूर माफ किये। इसके बाद रावतसर पर चढाई की। रावत आनन्दसिंह (रावतसर) नवलसिंह शेखावत क डेरे आकर श्री जी को माफी की अर्ज करवाई। नजराना २५००० तय हुआ। इस प्रकार मामला सुलझाने पर शेखावतो को विदा किया (म व ख्यात पृ ६६)

जवाहरसिंह भरतपुर ने पहलीबार जब स १८२३ (ई १७६६)मे जयपुर पर चढाई की उस समय शार्दूलसिंह के पुत्र नवलसिंह ने मध्यस्थ होकर दोनो मे सधि करवाई (F M E Vol II Page 513)

महाराजा जयसिंह के पुत्र ईश्वरी सिंह व माधोसिंह क बीच जब जयपुर की गद्दी के लिए झगडा चला। उस समय अधिकतर शेखावत ईश्वरीसिंह के पक्ष म थे। जोधपुर उस समय माधोसिंह के पक्ष मे था। जोधपुर महाराजा ने म धोसिंह की स ायता के लिए करणीदान बारहठ (प्रसिद्ध ग्र थ सूरज प्रकाश के रचयिता)को ईश्वरीसिंह का साथ छोडकर माधोसिंह के पक्ष मे करने को भेजा। उसने शिवसिंह (सीकर) तथा शार्दूलसिंह के पुत्र व पौत्रो से बडी कोशिश की परन्तु वह जोरावर सिंह के पुत्र बख्तसिंह के सिवाय किसी को भी माधोसिंह के पक्ष मे नही कर सका।

महादाजी सिन्धिया ने जब जयपुर पर चढाई की उस समय जयपुर की शेखावतो को दबाने की नीति क कारण वे अप्रसन्न थे। इस लिए महाराजा विजयसिंह (जोधपुर) ने सम्भवत जयपुर के कहने पर ही शेखावतो को जयपुर की मदद पर आने को जोर दिया जो उनके नरसिंह

दास नवलगढ के नाम के पत्रो से विदित होता है। खेतडो के बाघसिह के सिवाय सब शेखावत तु गा के युद्ध मे जयपुर के साथ गये। (ठि० नवलगढ व मण्डावा मे नरसिह दास के नाम के पत्र)

पजाब केशरी महाराजा रणजीत सिह के भी शेखावतो के साथ मधुर सम्ब ध थे। सिस सतलज को लेकर जब उसका अ ग्रेजो से युद्ध होने वाला था तब उसने अपनी व अपने सहयोगियो की एक लाख सेना इकट्ठी की थी। उस समय उसके मदद मागने पर श्यामसिह बिसाऊ व ज्ञानसिह मण्डावा ने अपनी जमियते फौंच तोपखो जो श्यामसिह की सेवा मे था, उसकी अध्यक्षता मे लाहौर भेजी थी। अ त मे रणजीत सिह का अ ग्र जो से समझौता हो गया था।

(पुराने कागजात)

सल्हेदीसिह जी क वशजो ने बहल आदि इलाको पर अधिकार कर लिया था तब नजफकुलीखा ने धोखे से अमरसिह को मार कर बहल पर पुन अधिकार कर लिया था। इसीलिए उनका यह प्रयत्न चलता रहता था कि बहल पर वे किसी प्रकार अधिकार करें। श्यामसिह जो बिसाऊ काफी शक्तिशाली हो गये थे। कि उन्होने व सल्हेदीसिह जी के कानसिह जी ने मिलकर बहल व उसके पास के इलाके पर अधिकार कर लिया था। इस पर अ ग्रेजो ने जयपुर को वे इलाके वापिस दिलाने को लिखा परन्तु उन्होने अपनी असमर्थता प्रकट की तब अ ग्रेजो ने बिसाऊ पर एक सेना भेजना तय किया इस पर श्यामसिह ने वह इलाका छोड दिया।

श्यामसि का महत्व किसी समकालोन कवि ने अपनी कविता मे इस प्रकार किया है।

बसो बिसाऊ चोगणो फौज न आवे फर।
बदसाहा मालूम हुई स्यामतणी समसेर॥

शेखावतों को मुगल दरबार मे काफी मनसब भी मिली हुई थी। पहले व्यक्ति सूजणकरण जी थे जिन्हें अकबर ने मन सबे दी थी। उनके छोटे भाई रायसल दरबारी तो उनस आगे बढ गये थे। अकबर क समय तक इनका तीन हजारी मनसब था जो जहागीर के समय म पाच हजारी तक पहु च गया था। शार्दूलसिह के बाद उनके पुत्र नवलसिह को तीन

हजारी जात दो हजारी सवार और बहादुर का खिताब था। इसी तरह राजा बाघसिंह खेतड़ी को भी मनसब मिला था।

इस समय पचपाना की वही स्थिति थी जो प्रतापसिंह नरुका की परन्तु उन्होने मुगलो की कमजोरी तथा मराठो की अस्थिर नीति के कारण शेखावतो ने अपना सम्बन्ध सीधा मुगलो से रखने के बजाय जयपुर से जोडना ज्यादा श्रेयस्कर समझा और इस कारण वे धीरे धीरे करदाता के रूप मे होते गये।

शेखावाटी व पचपानो के महत्व के कारण इनके विवाह सम्बन्ध काफी ऊंचे ठिकानो मे होते रहे जिनके कुछ उदाहरण निम्न प्रकार हैं। टोडरमल भोजराजोत की पुत्री का विवाह नागौर के अमरसिंह के पुत्र राजा रायसिंह से हुआ था। जिनके इन्द्रसिंह जन्मे। (मारवाड की ख्यात) शार्दूलसिंह के पुत्र किशनसिंह की पुत्री जतन कवर का विवाह महाराजा विजयसिंह जोधपुर मे स० १८१६ मे हुआ था। (बांकीदास की ख्यात) नवलसिंह की पुत्री चन्दन कवर का विवाह बीकानेर के महाराज कुमार राजसिंह से माह सुदि ७ स० १८०६ को हुआ। (म व ख्यात पृ० ८०) संवत् १८२८ मे महाराज कुमार राजसिंह जी की पुत्री का विवाह महाराजा पृथ्वीसिंहजी जयपुर मे हुआ तब नवलसिंह जी ने भात मे ५०,०००) का धन व हाथी घोडे दिये। (म व ख्यात पृ० १११) केशरीसिंह की पुत्री का विवाह कोटा के महाराजा उम्मेदसिंहजी से हुआ। केशरीसिंहजी के पोते रणजीतसिंहजी की पुत्री राजकवर का विवाह महाराजा रतनसिंह बीकानेर से हुआ जिसके पुत्र महाराजा सरदारसिंह थे। श्यामसिंह बिसाऊ की पुत्री का विवाह बून्दी के राजा उम्मेदसिंह से हुआ। खेतडी के राजा अजीतसिंह की एक पुत्री का विवाह प्रतापगढ महाराज कुमार से तथा दूसरी का विवाह शाहपुरा के महाराजा उम्मेदसिंह से हुआ था।

नवलगढ के ठाकुर करणसिंह की एक पुत्री का विवाह जोधपुर महाराजा जसवन्तसिंह II से हुआ। तथा दूसरी पुत्री का विवाह महाराजा प्रतापसिंह से हुआ। मण्डावा के ठाकुर आनन्दसिंह की पुत्री का विवाह किशनगढ के महाराजा जवानसिंह से हुआ जिनके पुत्र यज्ञनारा-

यशसिंह, महाराजा मदनसिंह के बाद किशनगढ के राजा हुए तथा ठाकुर जैतसिंह मण्डावा की पुत्री चतर कवर का विवाह करौली महाराजा भवरपाल से हुआ था। ये विवाह सम्बन्ध उस समय के पचपाना के महत्व को सिद्ध करते हैं।

जयपुर राज्य में शेखावतो के अलावा अन्य जागीरदारो की मुद्रा प्रचलित नही थी। जोधपुर मे कुचामन तथा बूडसू के तावे के सिक्के थे। मेवाड मे सलूम्बर के तावे के सिक्के थे।

शेखावाटी मे कई ठिकानो के सिक्के थे। बख्तसिहजी चौकडी ने जब स० १८०७ मे बादशाही परगना सिघाना पर अधिकार किया और फिर उन्ही से जयपुर के मामले के इजारे पर ले लिया था। उस समय सिघाने मे मुगल टक्साल थी जिसमे तावे के पैसे बनते थे क्योकि सिघाने के पास तावे की खान थी जिसका वर्णन अबुल फजल ने 'अकबर नामा' मे किया है तथा अब वही खान 'खेतडी कोपर माइन्स' के नाम से प्रसिद्ध है। शेखावतो का सिघाना पर अधिकार हो जाने के बाद उन्होंने भी वहा तावे के सिक्के बनाने जारी रखे। पचपाना के अलावा शेखावाटी मे सीकर के चादी के सिक्के थे जो चारो ओर चलते थे। ये सिक्के जयपुर के 'माधोपुरी' सिक्के की नकल पर थे परन्तु इसकी धातु ज्यादा अशुद्ध थी।

पचपाना मे खेतडी के चादी के सिक्के थे जो कालूड की नकल पर थे जिनका वर्णन वेब ने भी अपनी पुस्तक 'करे सीज ऑफ राजस्थान' मे किया है। इसके अलावा मण्डावा का चादी का सिक्का था जो सीकर की नकल पर था तथा उसका कमल और भी डिटेरियोट हो गया था। आज से तीस चालीस वर्ष पूर्व मण्डावा का सिक्का सीकर के बाजार मे चलता था तथा यह सीकर के म्यूजियम में सग्रहीत था।

इनके अलावा बिसाऊ का सिक्का भी बताया जाता है परन्तु उसके बारे मे कोई जानकारी प्राप्त नही है। उपयुक्त तीनो सिक्के तथा सिघाना के सिक्के तो मैने देखे है। इस प्रकार शेखावतों की अलग मुद्रा होना भी इनका महत्व बतलाती है।

जिस प्रकार रियासतो मे पहले दूसरी रियासतो के वकील रहते थे उसी प्रकार झुन्झुनू मे पटियाला रियासत का वकील रहता था तथा यहां पर पटियाला का डेरा तो अभी तक था।

इतिहास मे कईबार विद्वान किसी घटना की बिना ऐतिहासिक पुष्टि के ही लिख देते हैं और वे असत्य धारणायें जनसाधारण के हृदय स्थल मे बैठती जाती हैं। अत विद्वानो को चाहिये कि अपनी बात को पूर्णरूप से परखने के पश्चात् ही लिखें।

रघुनाथसिह एक इतिहास के विद्वान हैं और वे इतिहास मे रुचि रखते हैं परन्तु इन्होने कुछ बातो को बिना ऐतिहासिक क ही लिख दिया है। मेरी राय मे उन्ह पुन दृष्टिपात करके लिखना चाहिए। उनमें मुख्य रूप से ये घटनायें हैं।

(१) लेखक ने 'केम्ब्रिज हिस्ट्री' के आधार पर वज्रदामा को गजनी से युद्ध करते हुए काम आना लिखा है। इसका डाइनेस्टिक हिस्ट्री ऑफ नार्थ इण्डिया व अन्य किसी भी कछवाह इतिहास मे वर्णन नही मिलता है। दूसरी बात गजनी का ग्वालियर का आक्रमण असफल रहा था ऐसी हालत में वज्रदामा का उससे युद्ध करते हुए मारा जाना अमान्य है।[1]

(२) टाड राजस्थान के अनुसार यहा राजा रायमलजी का हल्दी घाटी के युद्ध में राजा मानसिंह के साथ जाना लिखा है। इस युद्ध के समय राजा रायसलजी अभिद्धि में आ चुके थे। उनका वर्णन खैरा-वाद तथा गुजरात के युद्ध में किया गया है। ऐसी हालत म किसी भी

1 वज्रदामा का पौत्र कीर्तिराय गजनवी ने जब सन् १०२२ वि स [१०७६ मे हमला किया था तब ग्वालियर पर शासन करता था। अत यह सिद्ध है कि इससे पूर्व वज्रदामा मृत्यु को प्राप्त हो चुका था। उसकी मत्यु का उल्लेख केम्ब्रीज हिस्ट्री मे मिलता है और कहा नही जबतक अन्य प्रमाण न मिलें, हमें केम्ब्रिज हिस्ट्री के उल्लेख को ही मानना पडेगा। गजनवी के विरुद्ध आनन्द पाल की कन्नौज, ग्वालियर, कालिंजर तथा अजमेर आदि कई राजाओ ने मदद की थी। अत गजनवी के विरुद्ध लडते हुए वज्रदामा के मारे जाने सम्बन्धी केम्ब्रिज हिस्ट्री का मत मुझे समीचीन लगता है। —लेखक

समकालीन मुगल ग्रन्थ में उनका नाम इस युद्ध में नही होना सिद्ध करता है कि वे हल्दीघाटी के युद्ध में नही थे। जब वे इस युद्ध में थे ही नही उस हालत में राजा रामशाह और उसके पुत्रो का उनके हाथ से मारे जाने का प्रश्न ही नहीं उठता।[1]

दूसरा प्रश्न उन्होने नागौर को विजय किया। नागौर को मालदेव के अंतिम समय में ही अजमेर के मुगल सुबेदार हुसैन कुली खा ने अधिकार में कर लिया था (मा० इ० रेऊ भाग १ पृ० १४१) उसके बाद अकबर और जहांगीर के राज्य में मुगलो के ही अधीन था। इसलिए 'सीकर इतिहास' में प० झाबरमल का नागौर रायसल द्वारा विजय करना लिखना इतिहास सगत नही है।[2]

(३) तिरमलजी से नागौर का जहांगीर द्वारा खालसे करना भी तर्क सगत नही है। नागौर अकबर के समय में ही तिरमल से छीनकर कुंवर जगतसिह आमेर को सौंप दिया था वहीं पर जगतसिह की मृत्यु हुई और उसकी कछवाहिनिया सती हुई। जहांगीर ने तिरमल के बाद कासली अवश्य खालसे की थी।[3]

(४) लूमास युद्ध में कायमखानियो द्वारा तोपो का प्रयोग करना न्याय सगत नही है क्योंकि लूमास के युद्ध में झुझुनू व फतहपुर के छोटे नवाब थे। झुझुनू व फतहपुर के बडे नवावो के पास भी तोपें नही थी तो ऐसी हालत में छोटे नवाबो के पास तोपें नही हो सकती था।[4]

---

1 हल्दीघाटी के युद्ध म मानसिंह के नेतृत्व म शाही सेना के साथ कछवाहो की बड़ी फौज लड़ी थी खण्डेला का रायसल दरबारी हल्दीघाटी के युद्ध म अवश्य लडा होगा जसा टाड महोदय ने लिखा है बिना पुष्ट प्रमाणो के हम टाड के कथन का निमूल कसे कह सकते है ? – लेखक

2 मने झाबरमल जी का मत उद्धृत किया है उस समय नागौर अकबर के अधिकार म था तो ऐसी परिस्थिति म भी हो सकता है। कि नागौर पर कभी अकबर के दुश्मनो का हमला हुआ हो और उसम रायसलजी गये हो।—लेखक

3 शुद्धि पत्र म ठीक कर दिया गया है।

4 लूमास के युद्ध म कायमखानियो द्वारा तोपो के प्रयोग का कोई लिखित

(५) पष्ठ २५७ पर सालिमसिह जी टाई के आदमियो द्वारा लालसिह कांधलोत भादरा को पकडना सत्य नही हो सकता क्योकि लालसिह इस युग मे एक प्रतिभावान एव शक्तिशाली व्यक्ति था जिससे महाराजा बीकानेर भी घबराते थे तथा उन्होने महाराजा सवाई जयसिह को लालसिह को ठीक करने को कहलवाया तब महाराजा जयसिह ने शादूलसिह को सेना देकर भेजा और उन्होने लालसिह को पकड कर जयपुर भेजा जिसे जेल मे रखा गया। इसलिए इतने शक्तिशाली व्यक्ति को आसानी से पकडना सम्भव नहीं था।[1] वहा पर किस्सा प्रचलित है कि शायद उसके पीछे वही हमला हो। सम्भव है शादूलसिह ने जब लालसिह पर चढाई की तब अपने साथ अपने पोते सालिमसिह को भी ले गये हो और सम्भवत आगे चलकर उसी का रूपान्तर हो गया हो।

इस प्रकार की कुछ त्रुटियां रह गई हैं लेखक से आशा करता हू कि उनको ठीक करेंगे।

अन्त मे मै कहना चाहूगा कि श्री रघुनाथसिह जी ने काफी प्रयास के साथ शादूलसिह जी के वश तथा झुझुनू इलाके की ऐतिहासिक सामग्री का सकलन किया है। यह पुस्तक इस क्षेत्र के इतिहास मे रुचि रखने वाले विद्वानो, शोधशास्त्रियो एव अन्य पाठको के लिए बडी उपयोगी होगी ऐसी पुस्तकें भावी पीढी के लिए बहुत उपयोगी होती हैं। इतिहास एक ऐसा विषय है जो कभी पूर्ण नही हो सकता। अत शेखावाटी के इतिहास पर भविष्य मे शोध करने वाले विद्वानो के लिए यह एक उपयोगी सामग्री का काम देगी। रघुनाथसिह जी ने जिस परिश्रम के साथ यह पुस्तक तैयार की है उसके लिए वे बधाई के पात्र है। आशा है भविष्य मे वे अपने शोध-कार्य को और भी प्रगतिशील बनायेंगे।

— कु॰ देवीसिह मण्डावा

उल्लेख नही मिलता परन्तु इस रणक्षेत्र म जहा आज खेत हैं। एक खेत के मालिक राजपूत ने मुझे बताया कि पश्चिम के अमुक टीलो पर कयामखानियो ने तोपें लगाई थीं तथा पूर्व की ओर शेखावतों की फौज थी। अधिक शोध करने पर लेखक का मत भी सही हो सकता है और आपका भी। — लेखक

1 लालसिह को पकडना कोई असम्भव बात नही। — लेखक

प्रस्तावना

॥ श्री ॥

श्री शादूल वश प्रकाश मे श्री रघुनार्थसिह जी कालीपहाडी ने बहुत खोज और शोध से इतिहास की घटनाओं का उल्लेख किया है । कई दत-कथाओ और निर्मूल गाथाओं को शुद्ध रूप दिया है। शेखावतो के आरम्भ से वतमान काल तक की तवारीख देने का परिश्रम और साहस किया है । यह महान काय प्रशसनीय है ।

राव शेखा, राजा रायसल, ठा शादूलसिह तथा राव शिवसिह इस वश के मुख्य महान् पुरुष हुए हैं । इनके वशजो मे अनेक वीर, देश भक्त, धमपालक सरदार होते रहे हैं, जिनकी जीवनिया इस ग्रथ मे दी गई हैं ।

मुझे आशा है कि इति स प्रेमीजन इस पुस्तक को उत्तम और उपयोगी मानेंगे और भावी इतिहासो के लिए लाभप्रद होगी ।

श्री रघुनार्थसिहजी की शेखावतो के इस प्रमाणिक इतिहास का काय सफलता से सम्पन्न करने के लिए अनेक ध यवाद ।

—हरनार्थसिह
डू डलोद ।

(५) पृष्ठ २५७ पर सालिमसिंह जी टाई के आदमियो द्वारा लालसिह बाघलोत भादरा को पकड़ना सत्य नहीं हो सकता क्योंकि लालसिह इस युग मे एक प्रतिभावान एव शक्तिशाली व्यक्ति था जिससे महाराजा बीकानेर भी घबराते थे तथा उन्होने महाराजा सवाई जयसिंह को लालसिह को ठीक करने को कहलवाया तब महाराजा जयसिंह ने शादूलसिह को सेना देकर भेजा और उन्होने लालसिह को पकड कर जयपुर भेजा जिसे जेल मे रखा गया। इसलिए इतने शक्ति शाली व्यक्ति को आसानी से पकडना सम्भव नहीं था।[1] वहा पर किस्सा प्रचलित है कि शायद उसके पीछे वही हमला हो। सम्भव है शादूलसिंह ने जब लालसिह पर चढाई की तब अपने साथ अपने पोते सालिमसिंह को भी ले गये हो और सम्भवत आगे चलकर उसी का रूपान्तर हो गया हो।

इस प्रकार की कुछ त्रुटियां रह गई हैं लेखक से आशा करता हू कि उनको ठीक करेंगे।

अन्त में मै कहना चाहूगा कि श्री रघुनाथसिंह जी ने काफी प्रयास के साथ शार्दूलसिंह जी के वश तथा झुझुनू इलाके की ऐतिहासिक सामग्री का सकलन किया है। यह पुस्तक इस क्षेत्र के इतिहास मे रुचि रखने वाले विद्वानो, शोधशास्त्रियो एव अन्य पाठको के लिए बडी उपयोगी होगी ऐसी पुस्तकें भावी पीढी के लिए बहुत उपयोगी होती हैं। इतिहास एक ऐसा विषय है जो कभी पूर्ण नही हो सकता। अत शेखावाटी के इतिहास पर भविष्य मे शोध करने वाले विद्वानो के लिए यह एक उपयोगी सामग्री का काम देगी। रघुनाथसिंह जी ने जिस परिश्रम के साथ यह पुस्तक तयार की है उसके लिए वे बधाई के पात्र है। आशा है भविष्य मे वे अपने शोध-काय को और भी प्रगति शील बनायेंगे।

— कु॰ देवीसिंह मण्डावा

उल्लेख नही मिलता पर तु इस रणक्षेत्र म जहा आज खेत हैं। एक खेत के मालिक राजपूत ने मुझे बताया कि पश्चिम के अमुक टीलो पर कयामखानियो ने तोपें लगाई थी तथा पूर्व की ओर शेखावतों की फौज थी। अधिक शोध करने पर लेखक का मत भी सही हो सकता है और आपका भी। — लेखक

1 लालसिंह को पकड़ना कोई असम्भव बात नहो। — लेखक

प्रस्तावना

।। श्री ।।

श्री शार्दूल वंश प्रकाश में श्री रघुनाथसिंह जी कालीपहाड़ी ने बहुत खोज और शोध से इतिहास की घटनाओं का उल्लेख किया है। कई दंत-कथाओं और निर्मूल गाथाओं को शुद्ध रूप दिया है। शेखावतों के आरम्भ से वर्तमान काल तक की तवारीख देने का परिश्रम और साहस किया है। यह महान कार्य प्रशंसनीय है।

राव शेखा, राजा रायसल, ठा० शार्दूलसिंह तथा राव शिवसिंह इस वंश के मुख्य महान् पुरुष हुए हैं। इनके वंशजों में अनेक वीर, देश भक्त, धर्मपालक सरदार होते रहे हैं, जिनकी जीवनियां इस ग्रन्थ में दी गई हैं।

मुझे आशा है कि इतिहास प्रेमीजन इस पुस्तक को उत्तम और उपयोगी मानेंगे और भावी इतिहासों के लिए लाभप्रद होगी।

श्री रघुनाथसिंहजी को शेखावतों के इस प्रमाणिक इतिहास का कार्य सफलता से सम्पन्न करने के लिए अनेक धन्यवाद।

—हरनाथसिंह
डूंडलोद।

नम्र निवेदन

"सादूलो जगराम रो, सिह्ल बुरी बलाय ।
राम दुहाई फिर गई, लुकती फिरै खुदाय ।।"

बचपन मे मैं जब बारहठो, राजनटो आदि की ओजस्वी वाणी में ऐसे दोहो को सुनता तो हृदय में एक लहर सी उत्पन्न होती और मैं भी ऐसे दोहो का गुनगुनाता रहता । इसी अवस्था मे पूज्य माताजी मुझे साहसी राजकुमारों की कहानिया सुनाया करती थी, वे कहानिया भी मुझे बहुत प्रभावित करती । धीरे धीरे इतिहास के प्रति मेरी रुचि बढने लगी । अब मैं सोचने लगा कि मैं कौन हूँ ? मेरे पूवज कैसे थे ? उन्होने कौन कौन से साहसिक काय किये । ऐसे प्रश्नो का उत्तर पाने के लिए मेरा मन बेचन हो उठता तो अपने मन की जिज्ञासा शात करने के लिए मैं इतिहासो के पन्न पलटने लगा । ऐतिहासिक पुस्तको का ज्यो ज्यो अध्ययन बढने लगा त्यो त्यो इतिहास क प्रति मेरी रुचि और भी बढने लगी और उसी रुचि का प्रतिफल ही यह 'शादू ल वश प्रकाश' है जिसको आपके हाथो मे सोपते हुए प्रसन्नता का अनुभव कर रहा हू ।

शेखावाटी के इतिहास पर पूववर्ती इतिहासकारो के कई ग्रथ हमारे सामने आये हैं। जिनमे प झाबरमलजी कृत (सीकर) व (खेतडी) का इतिहास, रामचन्द्रजी शास्त्री कृत 'शेखावाटी प्रकाश ' सूयनारायण जी शर्मा कृत 'खण्डेले का इतिहास,' रावल हरनाथ सिहजी कृत 'The Shekhawats and Their Lands' शेखावतो की वशावली कु॰ देवीसिह जी मण्डावा कृत 'शादू लसिह शेखावत' सुरजनसिहजी कृत 'राव शेखा' आदि है । इनसे पूव भी हमारी इस भूमि मे इतिहास प्रमी व साहित्यिक विद्वान हुए हैं । फतहपुर के न्यामत खा 'जान' कृत

'बयामखा रासा' (पद्य राजस्थानी) इतिहास के लिए बहुत उपयोगी पुस्तक है। कवि हरिनाभ कृत 'केसरीसिंह समर' व कविया गोपाल जी कृत शिखर वशोत्पत्ति भी इतिहास के लिए उपयोगी है। भूथालालजी कृत 'माधो वश प्रकाश' सीकर के इतिहास की अच्छी जानकारी प्रदान करता है। इनके अतिरिक्त ठा० भूरसिह जी मलसीसर भी शेखावाटी इतिहास के जाने माने विद्वान हो चुके हैं जिन्होंने शेखावाटी इतिहास सम्बधी काफी सामग्री एकत्र की थी। ठा० सूरजबक्ससिह चनाना व ठा० तख्तसिह जी मलसीसर भी इतिहास प्रेमी हुए हैं। उन्होंने भी शेखावाटी इतिहास की सामग्री एकत्र की थी इस समय ठा० सुरजनसिह झाझड, कु० देवीसिहजी मण्डावा, यूसुफ जी हकीम झुझुनू आदि विद्वान भी शेखावाटी इतिहास के शोध काय मे लगे हुए हैं।

मैं उन विद्वानो को नही भूल सकता जिनके मार्ग दर्शन एव सहयोग से मैं इस काय को पूर्ण करने मे सफल हो सका हूँ। श्रद्धेय डा० रघुबीरसिंह जी सीतामऊ का हृदय से अत्यन्त आभारी हूँ कि जो तन की दृष्टि से दूर रहते हुए भी मन के अत्यधिक समीप हैं, जब कभी मैं इतिहास के उलझे हुए प्रश्नो के निर्णय लेने मे असमर्थ रहता तब आप मेरा शका समाधान कर लेखनी को दिशा व सबल प्रदान करते। मैं इनके इस स्नेह और औदार्य का प्रतिकार कैसे चुका सकता हू। केवल हृदय ही महसूस कर सकता है।

स्व० रावल हरनाथसिह जी डूण्डलोद ने मुझे पिता तुल्य स्नेह दिया और इतिहास के प्रकाशन मे आर्थिक मदद कराने मे भी उनका पूर्ण योगदान रहा तथा पुस्तक की प्रस्तावना लिखकर जो मुझ पर कृपा की है उनको कभी भुलाया नही जा सकता। ईश्वर से प्रार्थना करता हू कि उनकी आत्मा को चिर शान्ति प्रदान करे। श्रद्धेय ठा० सुरजनसिहजी झाझड का हृदय से अत्यन्त आभारी हू जिन्होने समय समय पर घण्टो बठ कर मेरे साथ इतिहास सम्बधी चर्चाए की। कु० देवीसिह जी मण्डावा ने अपने व्यस्त समय मे से समय निकाल कर पुस्तक की भूमिका लिखकर कृपा की तथा समय समय पर ऐतिहासिक उलझे हुए प्रश्नों को सुलझाने मे मदद की, उनको भी हृदय से आभार प्रदर्शित करता हू।

तृतीय खंड

चतुर्थ खंड

पंचम खंड

प्रथम खण्ड

अध्याय १

इतिहास का महत्व

किसी भी राष्ट्र व जाति को जीवित रखने के लिए यह जरूरी है कि समय समय पर उसका इतिहास लिखा जाता रहे। राष्ट्र या जाति को ऊपर उठाने, उसको आगे बढाने और उसका भविष्य सुधारने मे उसके इतिहास का अपूर्व योग होता है। 'इतिहास' शब्द 'इति ह आस' इन तीन सस्कृत शब्दो से बना है और उसका वास्तविक अर्थ 'ऐसा ही हुआ' होता है।

जिस राष्ट या जाति के पास उसका इतिहास है तो वह राष्ट्र या जाति के लिए पथप्रदशक का काम करता है। कोई भी राष्ट्र या जाति तब तक ऊपर नही उठ सकती, जब तक कि उसका इतिहास न हो। यदि राष्ट्र व जाति को जीवित रखना है, उसे आगे बढाना है तो अवश्य उसका इतिहास रखना होगा। एक फ्रेंचलेखक मिसले ने कहा है—

'History is the story of a nation Pulsating with life and tellin in clear words that it can not die if it makes history

'कोई जाति मर नही सकती जब तक कि उसका इतिहास निर्माण होता रहे । वास्तव मे इतिहास देश व जाति के पूवजो की थाती है इतिहास वह अपार्जित विद्या है, जो उस जाति के भूले भटको को सही मार्ग प्रदर्शित करती है वही देश व जाति का सूय है । यदि किसी जाति का इतिहास नष्ट कर दिया जाय तो वह जाति स्वत नष्ट हो जायेगी । लाड मैकाले के अनुसार

A People which takes no pride in the noble achievement of remote on cestors will never achieve any thing worthy to be remembered with pride by remote descendants

('जो जाति अपने पूवजो के श्रेष्ठ कार्यो का गव नही करती, वह कोई ऐसी बात ग्रहण नही करेगी जो कि बहुत पीढी पीछे उनकी सतान उसे सगव करने योग्य हो ।')

किसी भी जाति के श्रेष्ठ कार्यो का गव उस जाति की सतान को होना जरूरी है । वे उस जाति के इतिहास से ही मिल सकते हैं । इसलिए इतिहास का समय २ पर लिखाजाना अत्यावश्यक है । इतिहास वह अमूल्य निधि है जिसे बच्चो को सबसे पहले देना चाहिए ताकि अपने पूवजा के श्रेष्ठ कार्यों की छाप उनके जीवन पर पड जाय । ROLES का कथन है-

'History is the first thing that should be given to Children in order to form their hearts and under standing

(इतिहास वह वस्तु है जो बच्चों के हाथ में सबसे पहले दी जानी चाहिए, क्योंकि इससे उनके कोमल हृदयों पर देश प्रेम व वास्तविक बुद्धि की मुहर लग जाती है।)

सिसरो ने इतिहास की महत्ता बताते हुए लिखा है—

'History is the light of truth and the teacher of life

(इतिहास सत्य का प्रकाश और जीवन का शिक्षक है।)

अतः किसी देश या जाति को अपना उत्थान करना है, उसे श्रेष्ठ बनना है और निज संतानों में देश व जाति का गौरव भरना है, तो उस देश व जाति को अपना इतिहास धरोहर के रूप में रखना होगा।



अध्याय १

राजपूत जाति का संक्षिप्त इतिहास :—

राजपूत जाति आदि काल से ही हिंदुओं की सिरमौर रही है। इसने अपने देश और स्वाभिमान के लिए बड़े से बड़ा त्याग और बलिदान करने मे कभी पग पीछे नही हटाया। सिर कटाया पर झुकाया नही। यह जाति अपनी आन बान और शान की रक्षा के लिए विश्वविख्यात है। राजपूत जाति का इतिहास लिखने से पूर्व हमे उसकी उत्पत्ति का ज्ञान कर लेना परमावश्यक है, जिससे इस शौर्यवान और वीरोचित आदर्शों की स्थापना करने वाली जाति का इतिहास ऐतिहासिक दृष्टिकोण से हमारे सम्मुख आ सके।

राजपूत शब्द की व्याख्या –

राजपूतो की उत्पत्ति कैसे हुई ? इसके पूर्व राजपूत शब्द की व्याख्या करनी आवश्यक है, जिससे इस शब्द का सही मूल्यांकन किया जासके ? तथा 'राजपूत' शब्द का अर्थ जाना जासके। कुछ विद्वान 'राजपूत' शब्द की व्याख्या करते हुये लिखते हैं कि – राजपूत, फारसी या अरबी भाषा का शब्द है किन्तु मेरे मतानुसार यह सही नही है। 'राजपूत' शब्द संस्कृत शब्द 'राजपुत्र' से निकला है और कई दृष्टियों से यह सही बैठता है। प्राचीन काल मे 'राजपूत' शब्द का प्रयोग राजकुमारो तथा राज-वंश के अन्य लोगों के लिए होता था। वी०एम० भटनागर अपनी पुस्तक 'मध्यकालीन राजस्थान का इतिहास' पृष्ठ ८ पर राजपूत शब्द की व्याख्या करते हुये लिखते हैं–कि 'राजपूत शब्द अरबी अथवा फारसी भाषा मे उत्पन्न नहीं हुआ है यह संस्कृत शब्द राजपुत्र से निकाला हो सकता है क्योंकि मुसलमानो ने इस वर्ग जाति को सम्बोधित करने के लिए राजपूत शब्द का प्रयोग किया।'

'राजपूत' शब्द का प्रयोग सबसे पहिले सातवीं शताब्दी के दूसरे भाग में हुआ और उसके पूर्व कभी इसका प्रयोग नहीं हुआ अतएव राजपूतों की उत्पत्ति के सम्बन्ध में विद्वानों में बड़ा मत भेद हो गया।

इतिहास इस बात का साक्षी है कि प्राचीन काल में प्रायः सभी नरेश क्षत्रिय ही हुआ करते थे। अतः 'राजपुत्र' क्षत्रिय राजकुमारों के लिए प्रयोग किया जाता था। समय परिवर्तन के साथ 'राजपुत्र' आगे चलकर 'राजपूत' शब्द से पुकारा जाने लगा। इन सब दृष्टियों से ज्ञात होता है कि 'राजपूत' शब्द संस्कृत शब्द राजपुत्र से ही निकला हुआ शब्द है।

राजपूतों की उत्पत्ति –

'राजपूत' शब्द की व्याख्या के बाद हमें देखना है कि राजपूतों की उत्पत्ति कैसे हुई? इस के सम्बन्ध में विद्वानों के विभिन्न मत हैं कुछ विद्वानों ने राजपूतों की उत्पत्ति विदेशियों से बतलाई है, कुछ का मत अग्निकुल पर आधारित है और कुछ राजपूतों को प्राचीन क्षत्रियों की सन्तान बतलाते हैं। अब हम विभिन्न विचार धाराओं का वर्णन करते हुये मूल्यांकन करेंगे कि कौनसी विचारधारा ऐतिहासिक सत्य की कसौटी पर खरी उतरती है?

(१) राजपूत विदेशियों की सन्तान नहीं हैं –

कुछ इतिहासकारों के मतानुसार राजपूतों की उत्पत्ति विदेशी लोगों से हुई है, इस मत के समर्थकों में जेम्स कर्नल टॉड का नाम प्रमुख है। जेम्स टॉड ने 'एनाल्स एण्ड एंटीक्यूटीज-ऑफ राजस्थान' में राजपूतों की उत्पत्ति का जिक्र करते हुए लिखा है कि राजपूतों के बहुत से रीति रिवाज शक तथा सिथियन लोगों से मिलते जुलते हैं जैसे सूर्य की पूजा करना, सती होना, अश्वमेघ यज्ञ करना, शस्त्र व घोड़ों की पूजा करना आदि। इन्हीं बातों पर

विश्वास करते हुये कर्नल टॉड ने राजपूतो की उत्पत्ति विदेशी लोगो से वतलाई है। इस मत का खण्डन करते हुये इतिहासकार जगदीश सिंह गहलोत ने 'राजपूताने का इतिहास' प्रथम भाग पृष्ठ ११ पर लिखा है- कर्नल टॉड ने यह लिखकर बडा भ्रम फैला दिया है कि राजपूतो और शक जाति के रीति रस्मो मे समानता हे, जैसे सूय को पूजना, सती होना अश्वमेघ यज्ञ करना शराब पीने की शौक रखना, शास्त्र व घोडो को पूजना इत्यादि। इसी आधार पर उसने अनुमान किया है कि राजपूत लोग शक् जाति के वशधर है, परन्तु यह कल्पना मात्र है, क्योकि प्राचीन आय क्षत्रियो के कई रीति रस्म अब तक राजपूतो मे मौजूद है, इतिहासज्ञ गोरीशकर हीराचद के अनुसार इतिहास इस वात का साक्षी है कि उपयु क्त रीति रस्म शक जाति मे ही नही पाये जाते वल्कि वैदिक साहित्य और प्राचीन भारतीय सस्कृति मे अ कित हैं, जो ऐतिहासिक दष्टिकोण से सही उतरते ह। सूय पूजा वैदिक काल से चली आरही है। राम और युधिष्ठर ने अश्वमेघ यज्ञ किये थे। महाभारत मे पाण्डू की दूसरी स्त्री माद्री के सती होने का उल्लेख है। क्षत्रियो मे शस्त्र व घोडो की पूजा आदि काल से परम्परा प्रचलित है।

विदेशी हमारे यहा आये और यहा के निवासी भी हो गये पर यह राजपूतो को विदेशियो की सन्तान सिद्ध करने का कोई ठोस प्रमाण नही है। प्राचीन समय से क्षत्रिय राज्य करते आये हैं यदि राजपूत विदेशियो की सन्तान है तो हूण की मृत्यु के पश्चात् भारत के प्राचीन क्षत्रियो की एक जीवित तथा शक्तिशाली जाति, जिसके हाथ मे राजनतिक शक्ति थी, सहसा कहाँ और कव लुप्त हो गई ? इसके अतिरिक्त राजपूतो का जीवन, उनके आदर्श तथा उनका स्तर विदेशियो के अनुरुप नही मिलता अत हम राजपूतो को विदेशियों की सन्तान नही मान सकते।

(२) अग्निकुण्ड से उत्पत्ति का सिद्धान्त —

प्रतिहार, पंवार, सोलंकी और चौहान राजपूतो की उत्पत्ति इस सिद्धा त के अनुसार बताई जाती है। कहा जाता है कि परशुराम द्वारा जब क्षत्रियो का विनाश हो गया तब समाज मे अव्यवस्था फैलगई लोग अपने कर्तव्य से च्युत हो गये समाज मे पुन शांति और सुव्यवस्था पैदा करने के लिए देवताओ ने आबूपर्वत पर एक विशाल अग्नि कुण्ड पर यज्ञ का आयोजन किया। इसके फल स्वरूप इसी अग्नि–कुण्ड से उपयु क्त चारो राजपूत वशो की उत्पत्ति हुई। किन्तु मात्र कथा के आधार पर किसी बात को सत्य की परिधि मे मान लेना ऐतिहासिक दृष्टिकोण से उचित नही है। यह कहानी कपोल कल्पित मालूम होती है। हो सकता है यह कहानी किसी ने अपने तर्क की पुष्टि हेतु गढदी हो।

इस सिद्धा त के सम्ब ध मे कुछ विद्वान ऐसा भी लिखते है कि अरबो तथा तुर्को से देश की रक्षा के लिए इन राजपूतो ने अग्नि के समुख शपथ ली थी इसलिए यह राजपूत अग्नि वशी कहलाये। राजपूतो के स्वभाव उनके गुण व आन और बान पर मर मिटने वाली आदर्श भावना को देखते हुये यह सम्भव है क्योकि राजपूत अग्नि को देव रूप मे मानते आये है। देश की रक्षा के लिए अग्नि के समुख प्रतिज्ञा की जा सकती है, पर इसका भी कोई प्रमाण नही मिलता। इस कारण इसका ऐतिहासिक दृष्टिकोण से सही मूल्याकन नहीं कर सकते।

(३) मिश्रित उत्पत्ति का सिद्धान्त —

कुछ इतिहासकारो का मत है कि विदेशी जातिया जब भारत मे आई तो वे यहा जमगई और शासन करने लगी इसके अतिरिक्त यहा शासन करने वाले क्षत्रियो मे घुलमिल गई यही कारण है कि राजपूत, क्षत्रियो तथा विदेशियो की मिश्रित सन्तान है।

उपर्युक्त सिद्धान्त पर विचार करने से ज्ञात होता है। कि विदेशी जातियों का आगमन और उनका यहाँ स्थायी रूप से निवास का तात्पर्य है कि विदेशी जातियां भारतीय लोगों में घुलमिल गई। कोई भी इतिहासकार प्रमाण के आधार पर यह सिद्ध नहीं कर सका है कि प्रमुख राजपूत वंश विदेशियों की सन्तान है अतः यह मानना नितान्त असत्य है कि विदेशी जातियों का विलय राजपूतों में ही हो गया। इस कारण मेरे मतानुसार यह मत समीचीन नहीं जान पड़ता।

(४) राजपूत प्राचीन क्षत्रियों की सन्तान हैं –

ऊपर हमने जिन सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है वे राजपूतों की उत्पत्ति के सम्बन्ध में सही नहीं उतरते, ऐतिहासिक दृष्टिकोण से उनका खण्डन किया जा चुका है। राजपूत आज भी अपने आप को राम और कृष्ण के वंशज बताते हैं और रामायण, महाभारत तथा अन्य साहित्यिक एवं ऐतिहासिक ग्रन्थ इस बात के ठोस प्रमाण हैं कि राम और कृष्ण हमारे देश में महान पुरुष हो चुके हैं जिन्होंने तात्कालिक दुष्टों से समाज की रक्षा की थी। इस प्रकार हम देखते हैं कि राजपूत विदेशियों की सन्तान नहीं हैं अपितु प्राचीन क्षत्रियों की ही सन्तान है। इस तथ्य का समर्थन करते हुए जगदीश सिंह गहलोत 'राजपूताने का इतिहास' प्रथम भाग पृष्ठ ११ पर लिखते हैं कि 'वर्तमान राजपूतों के राजवंश वैदिक और पौराणिक काल में ,राजन्य' 'उग्र क्षत्रिय' आदि नामों से प्रसिद्ध सूर्य व चन्द्रवंशी क्षत्रियों की ही सन्तानें है। वे न तो विदेशी ही और न विधर्मियों (अनार्यों) के वंशज है।" इतिहासकार गौरीशंकर हीराचन्द ओझा ने प्रमाणों सहित शोध कर यह सिद्ध किया है कि राजपूत प्राचीन क्षत्रियों की सन्तान है।

कौटिल्य के 'अर्थशास्त्र' कालिदास के काव्यों व नाटकों, अश्वघोष

के ग्रथो, बाणभट्ट के हर्षचरित तथा कादम्बरी आदि प्रख्यात ग्रथो एव प्राचीन शिला-लेखो तथा दान पत्रो मे राजकुमारो और राजवशियो के लिए 'राजपुत्र' शब्द का प्रयोग होना पाया जाता है। गोरीशकर हीराचन्द ओझा ने लिखा है कि 'मुसलमानो के राजत्वकाल मे क्षत्रियो के राज्य क्रमश अस्त होते गये और जो बचे उनको मुसलमानो की अधीनता स्वीकार करनी पडी। अत एव वे स्वतत्र राजा न रहकर सामन्त मे बनगये। ऐसी दशा मे मुसलमानो के समय राजवशी होने के कारण उनके लिए 'राजपूत' शब्द का प्रयोग होने लगा। फिर यह शब्द जाति सूचक होकर मुगलो के समय अथवा उससे पूर्व सामान्य रूप मे प्रचार मे आने लगा।'

इस प्रकार सभी ऐतिहासिक दृष्टिकोणो से विवेचना करने के बाद हम इस निष्कर्ष पर पहुचते हैं कि राजपूत प्राचीन क्षत्रियो की ही सतानें हैं।

प्रमुख राजपूत वश और उनकी शाखाएँ –

राजपूत जाति का इतिहास वीरता आत्म-त्याग, शरणागत की रक्षा म प्राण होत्सग करने, अपव बलिदान और स्वाभिमान आदि अनेक उत्तम उदाहरणो से भरा पडा है। ऊपर हमने ऐतिहासिक दृष्टिकोण से यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि राजपूत प्राचीन क्षत्रियो की सतान है जो बादमे राजपूत कही जाने लगी। आगे चलकर इस वीर जाति के कई वश होगये, जैसे गहिलोत राठौड, कच्छवाह, पवार, चौहान परमार आदि अब आज हम इन प्रमुख राजपूत वश और उनकी शाखाओ का ऐतिहासिक विवेचन करेंगे।

१६ जोहिया –

यह वश जैसलमेर और बीकानेर क्षेत्र मे रहता था। १३ वी शताब्दी मे मारोठ (जैसलमेर)तथा भटनेर आदि जोहियो के अधिकार मे थे। बीकानेर क्षेत्र मे तो यह वश मुसलमानो मे परिवर्तित हो गया है। इस वश का अस्तित्व लगभग समाप्त होगया है।

१७ टाँक –

टाँक ये (नागवशी) माने जाते हैं। प्राचीन काल मे राजस्थान मे नागौर, मण्डोर आदि स्थानो पर उनका राज्य था। इसीवश मे किसी राजा तक्षक के नाम से यह 'तक्षक' कहलाये। इसी 'तक्षक' का अपभ्रंश टाँक हैं। इस समय राजस्थान मे यह राजपूत नही हैं।

१८ तँवर –

यह वश चन्द्रवशी है। इस वश ने दिल्ली पर राज्य किया है। इस इस वश से जब अजमेर के चौहानो ने दिल्ली का राज्य छीन लिया तो यह वश मध्यप्रदेश, राजस्थान आदि राज्यो मे फैल गया। राजस्थान में इस वश ने ईसा की १३ वी सदी मे प्रवेश किया। यहाँ इनका इलाका तँवरावाटी नाम से प्रसिद्ध हुआ। तँवरावाटी के तँवर बत्तीसी व चौवीसी के तँवर कहलाते हैं। इस वश की शाखाएँ निम्न लिखित है।

तँवरवश की शाखाएँ –

१ कटियार २ भूँयहार ३ इन्दोलिया ४ जाटू आदि।



द्वितीय खण्ड

अध्याय १

कुशवाह (कच्छवाह) वंश की उत्पत्ति

कुशवाह वश का इतिहास लिखने से पूर्व हमे यह देख लेना चाहिए कि इस वश का नाम कुशवाह या कच्छवाह क्यो पड़ा ? इस वश के पीछे ऐतिहासिक तथ्य क्या है ? विद्वान प्राय इसी बात पर एक मत है कि राजा दशरथ के पुत्र राम का बड़ा पुत्र कुश था। उसे राम के बाद अयोध्या का राज्य मिला और उसका वश कुश के नामपर कुशवाह कहलाने लगा। कुशवाहो (कच्छवाहो) की ख्यातो मे जगह जगह उन्हें सूर्य वशी और रघुवशी लिखा हुआ है। सूर्यवशी होना भी इस बात का प्रतीक है कि कुशवाह वश की उत्पत्ति कुश के नाम पर हो सकती है।

बूंदी के महाकवि सूर्यमल मिश्र का कथन है कि कुश के एक वंशज कुसवाध नामक राजा होने के पीछे इनका नाम कच्छवाह पड़ा। कुसवाध राजा के दादा का नाम कूर्म था जिससे कच्छवाहे कूर्म या कूर्म भी कहलाते हैं।[1] इसके अतिरिक्त एक शिलालेख जो राजा मानसिंह ने वि स १६५० में तैयार करवाया था तथा राजा रायसल दरबारी का रेवासा शेखावाटी के आदिनाथ मंदिर का वि स १६६१ का शिलालेख, लीली (अलवर राज्य) के वि स १८०३ व वि स १८१४ के शिलालेख में अपने को कूर्मवंशी लिखा है पृथ्वीराज रासो में आम्बेर के राजा पज्जून को कूर्म लिखा है।[3] अत कूर्म या कच्छवाह एक ही जाति के बोधक हैं।

ग्वालियर और नरवर के कच्छवाह राजाओं के मिले कुछ संस्कृत शिलालेखों में उन्हें कच्छपघात' या कच्छपारि लिखा' है।[4] जनरल कनिंघम ने 'कच्छपघात' और 'कच्छपारि' को एक ही जाति माना है।[5] इस वंश की कुलदेवी का नाम 'कच्छवाहिनी' था अत कुल देवी के नाम पर भी कच्छवाह हो सकता है परन्तु यह भी हो सकता है कि कच्छवाहे जिस कुलदेवी को मानते हैं उसका नाम कच्छवाहों के नाम पर भी कच्छवाहिनी हो सकता है।

पंडित राधाकृष्ण मिश्र इन्हें मनु के पुत्र इक्ष्वाकु के वंशज होने के कारण पहिले ऐक्ष्वाकु और बाद में बिगड़ कर कच्छवाह और

१ राजपूताने का इतिहास (जयपुर राज्य) पृष्ठ ५५ — गहिलोत
२ उपर्युक्त पृष्ठ ५६
३ उपर्युक्त पृष्ठ ५६
४ उपर्युक्त पृष्ठ ५५
५ उपर्युक्त पृष्ठ ५५

कछवाहा हो जाना बतलाया है। यह कच्छवाहो को इक्ष्वाकुवंशका मानते हैं[1]

उपर्युक्त सभी प्रमाणो से यह सिद्ध होता है कि कुशवाह (कच्छवाह) सूर्यवंशी राजा राम के पुत्र कुश के वंशज है और कुश या कुश के किसी वंशीय राजा के नाम पर कुशवाह (सूर्यवंशी)कहलाने लगे तथा बाद मे बिगडते बिगडते इस वंश का नाम कच्छवाह भी हो गया और वे कच्छवाहा कहे जाने लगे।

१ राजपूताने का इतिहास (जयपुर राज्य) पृष्ठ ५५ - गहिलोत

अध्याय १

कुशवाह (कच्छवाह) वश का प्राचीन इतिहास

प्रलय का वर्णन ससार के सभी प्राचीन धर्म ग्रन्थो मे है।[1] इसका वर्णन हमारे ब्राह्मण ग्र थो व 'बाइबिल' मे भी पाया जाता है। प्राचीन एशिया के इतिहास लेखक जैनेसिस ने भी प्रलय के बारे मे बहुत कुछ लिखा है।[2] हमारे प्राचीन ग्र थो - अनुसार प्रलय के बाद मानव की उत्पत्ति मनु से हुई। मनु के दस पुत्रो मे इक्ष्वाकु सबसे बडा पुत्र था। इस राजा के वशज (सूर्य वश) की कई पीढियो ने अयोध्या पर राज्य किया। इस वश मे इक्ष्वाकु मान्धाता हरिश्चन्द्र, सगर, दिलीप भागीरथ,[3] अम्बरीश रघु[4] राम आदि महान् राजा हुए, जिनकी भारतीय इतिहास मे बडी ख्याति है।

इतिहासकार जगदीशसिह गहिलोत ने पुराणो के आधार पर पृथ्वी उत्पत्ति से कुश तक की वशावली इस प्रकार दी है

वशावली –

१ नारायण २ ब्रह्मा ३ ववस्वान (सूर्य) ६ मनु ७ इक्ष्वाकु ११ पृथु १३ आद (चद्र) २५ मान्धाता ३६ हरिश्चद्र ४४ सगर ४७ दिलीप ४८ भागीरथ ६५ रघु ६७ दशरथ ६८ राम ६९ कुश[5]

---

१ प्राचीन भारत में हिन्दू राज्य पृष्ठ ६६ वृन्दावन दास

२ ,, ,, ,, ,,

३ हिमालय से गगा नदी का प्रादुर्भाव करने वाला यही राजा था। इस कारण 'गगा' को 'भागीरथी' भी कहते हैं।

४ इसी राजा के नाम पर यह वश 'रघुवश' भी कहलाया।

५ राजपूताने का इतिहास प्रथम भाग गहिलोत, पृष्ठ १७९

कुश के कुछ समय उपरान्त इसी के किसी वंशज ने अपने पूर्वजों की राजधानी छोड़कर शोण नदी के किनारे रोहतास नाम के एक दुर्ग पर अधिकार किया।

कुछ समय बाद इसी वंश का कोई वंशज मध्यप्रदेश मे आया जो उस समय 'निषाध देश' कहलाता था। उसने यहाँ नागों की 'कच्छप' जाति को नष्ट कर अपना राज्य स्थापित किया। इसी वंश के राजा सूर्यपाल (सूरजपाल) ने ग्वालियर दुर्ग का निर्माण करवाया। प्रतिहारों द्वारा ग्वालियर छीने जाने के बाद इसी वंश मे नल नाम का राजा हुआ।

नैणसी री ख्यात के अनुसार इसी नल ने नरवर बसाया था।[1] नरवर की स्थापना अनुमानतः विक्रम की दसवी सदी के द्वितीय चरण के प्रारम्भ मे हुई थी।[2] इसी नरवर (नलवर) को नल ने अपनी राजधानी बनाया।

नरवर के राजा नल के पुत्र ढोला हुआ। कहीं कहीं इसका नाम माल्हकुमार भी आता है।[3] इसका विवाह पूगल की राजकुमारी मारवणी से हुआ था।[4] ढोला ने कितने समय तक नरवर मे राज्य किया

1-मुहणोत नैणसी री ख्यात भाग I सम्पादक श्री बद्रीप्रसाद साकरिया पृष्ठ २८६,२९३
-'ढोला मारू रा दूहा' मे काव्य सौष्ठव, संस्कृति एवं इतिहास डा. भगवतीलाल शर्मा पृष्ठ ९८३
2-ढोला मारू रा दूहा पृष्ठ ३
-इंडियन हिस्टोरिकल बैटिल्स ऑफ जयपुर, भूमिका पृष्ठ ३८
-'ढोला मारू रा दूहा' मे काव्य सौष्ठव, संस्कृति एवं इतिहास डा॰ भगवतीलाल शर्मा पृष्ठ ३८३,३८४
3-प्राचीन राजवंशावलियो की कापियां पृष्ठ १५ पु. चि. बीकानेर
4-ढोलामारू रा दूहा पृष्ठ २४

इसका कोई निश्चित पता नही लगता है परन्तु फिर भी अनुमान लगाया जाता है कि ढोला वि की दसवी सदी के उतरार्द्ध मे राज्य करता था।[1] ढोला के बाद उसका पुत्र लक्ष्मण नरवर की गद्दी पर बैठा। वशावलियो मे नाम के अतिरिक्त इसका कोई ऐतिहासिक उल्लेख नही है। लक्ष्मण के बाद उसका पुत्र ब्रजदामा गद्दी पर बैठा। यह शक्तिशाली एव प्रसिद्ध राजा हुआ। इसने पूव मे बढती हुई चदेलो की शक्ति से सघष किया,।[3] वह प्रजा हितैषी शासक था। उसके समय मे प्रजा पर कोई अत्याचार नही होता था। चोर डाकुओ का कोई भय नही था।

इस राजा के राज्य मे शिल्प तथा व्यापार मे बहुत उन्नति हुई।[4] राजा स्वय विद्याप्रेमी था एव विद्वानो का आश्रयदाता था।[5] वि स १०२२ ई सन् ९६५ म काश्मीर का दिवाकर मिहिर घूमता हुआ नरवर आया था। इस यात्री ने ब्रजदामा की भूरि भूरि प्रशसा की है।[6] यह यात्री नरवर मे २ वष ५ माह और १७ दिन रहा।[4] ब्रजदामा ने अपनी शक्ति एकत्रित कर ग्वालियर पर आक्रमण किया। इस समय ग्वालियर

1–ढोला मारूणी री वात पृष्ठ १०७

सवत ना अठोतरे हुयो हु आइ उछाह।
ढोलामारु वरखियों हुयो बघेरे ब्याह ॥

2–ढोला मारू रा दूहा भगवतीलाल शर्मा

कुछ वशावलियों में लक्ष्मण का पुत्र राजभान लिखा हैं और ब्रजदामा को राजभान का पुत्र माना है परन्तु वि स ११५० के महीपाल देव के समय के शिलालेख में लक्ष्मण का पुत्र ब्रजदाम ही अकित है - (ग्वालियर राज्य के अभिलेख हरिहर निवास द्विवेदी)

3–शार्दूलसिंह शेखावत इतिवृत पृष्ठ ३ देवीसिंह मण्डावा

4,5 कछावा का स इ वीरसिंह पृष्ठ १० ए। शा शे इ पृष्ठ ३ (टिप्पणी)

6,7 कछावा का सक्षिप्त इतिहास पृष्ठ १०

पर कन्नौज के परिहारों का शासन था। परिहारों को पराजित कर ग्वालियर पर आधिपत्य जमा लिया[1] और स्वतन्त्र हुआ[2] व्रजदामा वि स १०३४ मे ग्वालियर पर शासन करता था। ग्वालियर के जैन मंदिर के शिलालेख से यह प्रमाणित होता है कि व्रजदामा महाराजधिराज कहलाता था।[3] महमूद गजनवी ने ई सन् १००१ में भारत पर हमला किया। आनंदपाल ने उसका मुकाबला किया। आनंदपाल के साथ व्रजदामा भी महमूद गजनवी के विरुद्ध लड़ा और बहादुरी के साथ लड़ता हुआ ३१ दिसम्बर सन् १००१ को वीरगति को प्राप्त हुआ।[4]

व्रजदामा के बाद इसका पुत्र मंगलराज ग्वालियर के सिंहासन पर बैठा। मंगलराज भी बड़ा प्रतापी राजा था।

एक प्रशस्ति[5] मे लिखा है कि जिस प्रकार अंधकार का नाश सूर्य कर देता है ठीक उसी प्रकार राजा अपने शत्रुओं का नाश कर देता है। इस का राज्य भरतपुर तक भी फैला हुआ था।[6] मंगलराज के दो

1 व्रजदामा का ताम्रदानपत्र प्राचीन भारत का इतिहास-रमाशंकर त्रिपाठी
2 ढोला मारू रा दूहा (ऐतिहासिक पक्ष) पृष्ठ ३६७ डा भगवती लाल शर्मा
3(i) जनरल ऑफ एशियाटिक सोसायटी ऑफ बंगाल भाग ३१ पृष्ठ ३९९
(ii) ग्वालियर राज्य के अभिलेख श्री हरिहर निवास द्विवेदी
अभिलेख ० पृष्ठ ५, एवं अभिलेख ५४ ५६ पृष्ठ ११
4 कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया वॉल्यूम ३ पृष्ठ १६
5 कच्छवाह प्रशस्ति सास बहू का मन्दिर ग्वालियर का किला
6 वि स ११०० ई सन् १०४३ का भरतपुर म मिला शिला लेख
इ ए वॉल्यूम XI पृष्ठ-२

पुत्र हुये कीतिराय और सुमिन। कीतिराय पिता की गद्दी पर बैठा और वह ग्वालियर का शासक हुआ। छोटे पुत्र सुमित्र को नरवर की जागीर प्राप्त हुई[1]

गजनवी ने १०२२ ई मे ग्वालियर पर हमला किया था। कीतिराज को वह पराजित नही कर सका। केवल कीतिराज से ३० हाथी दण्ड स्वरुप लेकर वापिस लौट गया।[2] कीतिराज के वशधर वि स १२६३ ई स १२०६ तक ग्वालियर पर राज्य करते रहे।[3] कुतबुद्दीन ऐवक (गुलाम वश के सुलतान) ने सम्भवत इनके राज्य को समाप्त किया होगा।

सुमिन की पाचवी पीढी पर ईशासिंह हुआ। ईशासिंह का पौत्र दुल्हेराय राजपूताने मे आया और चौहानो की मदद से बडगूजर राजपूतो को हराकर दौसा पर अधिकार किया।

1 ओझा निबन्ध सग्रह तृतीय एव चतुर्थ भाग पृष्ठ ६१

2 Cambridge history of India vol III Page 22

3 राजस्थान इतिहास का तिथिक्रम-मुलवीरसिंह गहलोत

अध्याय ३

कुशवाह (कच्छवाह) वंश का राजस्थान मे प्रवेश

कुशवाह राजस्थान मे कैसे और कब आये तथा उन्होने यहाँ अपना राज्य किस प्रकार स्थापित किया ? इतिहासज्ञ एकमत नही है। भाटो की ख्यातो से पता चलता है कि यह वंश ग्वालियर से राजपूताने मे आया। भाटो की ख्यातो मे एक कथा आती है - ग्वालियर के राजा ईशासिंह ने वृद्धावस्था मे अपना राज्य अपने भानजे जसा (जयसिंह) तँवर को दान कर दिया। ईशासिंह के पुत्र सोढदेव ने ग्वालियर से आकर दौसा (जयपुर राज्य) मे अपने बाहुबल से अपना नया राज्य स० १०२३ मे स्थापित किया, किन्तु राजपूताने के प्रकाण्ड इतिहासवेत्ता गौरीशंकर हीराचन्द ओझा इस कहानी को कपोल कल्पित मानते हैं। उनका कहना है कि भाटो को केवल यही ज्ञात था कि कुशवाह ग्वालियर से आये, यह उन्हे नही मालूम था कि कुशवाह ग्वालियर से कब और किस प्रकार राजपूताने मे आये ? ओझाजी ने आगे लिखा है कि न तो ईशासिंह ने अपना राज्य तँवरो को दिया और न तँवरो का राज्य उस समय वहा था। ईशासिंह के बाद मे भी ग्वालियर पर कच्छवाहो का राज्य रहा और वहा के राजा मगलदास के पुत्र कीर्तिराय के छोटे भाई सुमित्र के पाचवें वंशधर ईशासिंह का पौत्र दुल्हेराय नरवर से दौसा मे आया और उसे छीन कर प्रथम वहा का स्वामी हुआ।[1]

इन उल्लेखो से यह तो सिद्ध होता है कि कुशवाह ग्वालियर से राजपूताने मे आये और दौसा मे उन्होने अपना आधिपत्य जमाया, किन्तु यह कब आये ? विद्वान एक मत नही हैं। इसके सम्बन्ध मे

1 'राजपूताने का इतिहास प्रथम जिल्द' ओझा, पृ० २३५-३६

मुख्यत दो विचार धारा प्रचलित है। कुछ इतिहासकार स १०२३ से ६३ तक मानते हैं जबकि दूसरे इतिहासकार ईसा की १२ वी शताब्दी मे मानते हैं।

अब हम पहले दोनो विचार धाराओ पर चलने वाले इतिहासज्ञो के कथनो का विवेचन करेंगे तत्पश्चात् यह निष्कर्ष निकालने का प्रयत्न करेंगे कि कौनसी विचार धारा कहाँ तक सही है ?

प्रथम विचार धारा

कविराज श्यामलदास लिखते हैं 'सोढादेव स वत् १०२३ कातिक कृष्ण १० तारीख २२ सितम्बर ९७६ ई को निपेध देश की वरेली मे अपने बाप की जगह राजा हुए।'[1]

"सोढदेव १०२३ कार्तिक बदी १० पिता की गद्दी पर विराजे'[2] कर्नल टॉड ने लिखा है कि 'स वत् १०२३ मे धोलाराय ने ढूढाड[3] पर अधिकार किया।[4]

1 'वीर विनोद श्यामलदास, पृष्ठ ४५

2 इतिहास राजस्थान रामरत्न पृष्ठ ८८

3 इस प्रदेश का नाम ढूढाड क्यों पड़ा? इस विषय में कई मत प्रचलित हैं। रावल नरे द्रसिंह के अनुसार चौहान नरेश व बीसलदेव ने इस प्रदेश के आतता-इयो (मीणो) का दमन करने के लिए ढूढ के पहाड़ पर चौकी स्थापित कर हरेक मेवासे को भग किया तथा ढूढ ढूढ़ कर उनको समाप्त किया। इसी कारण इस प्रदेश का नाम 'मत्स्य' से बदल कर ढूढाड़ हो गया। (अ फ हिस्ट्री ऑफ जयपुर पृ २१-२२- नरेन्द्रसिंह) टॉड के अनुसार ढूढ पहाड पर वीसलदेव ने प्रायश्चित किया था। इसी ढूढ पहाड़ से 'ढूढाड' हुआ। (एनाल्स एण्ड एण्टीक्विटीज ऑफ राजस्थान जि० २ पृ० ३५५-३६८) हनुमानशर्मा ने आमेर के ढूढाकृति पहाड के नाम से 'ढुढ़ाड' प्रदेश की उत्पत्ति होना बताई है। (नाथावतों का इतिहास) कुछ लोग इस प्रदेश में बहने वाली नदी 'ढूढ' के नाम पर 'ढूढाड' की उत्पत्ति बताई है। 'ढूढ' पहाड़ या ढूढ नदी के नाम पर इस प्रदेश का नाम (ढूढाड) होना अधिक समीचीन जान पड़ता है।

4 Annals and antiquities of Rajastha भाग २ पृष्ट ३४६

एडवड थॉनटन ने ९६३ ई० लिखा है।

जयपुर के भाटों की ख्यात मे कच्छवाहो की वंशावली इस प्रकार दी है, जिससे सिद्ध होता है कि सोढदेव १०२३ मे था।

जयपुर के भाटों की ख्यात मे सोढदेव से भगवन्तदास तक की वंशावली इस प्रकार है –

१ सोढदेव	१०२३	१३ उदयकरण	१४२३
२ दुल्हेराय	१०६३	१४ नरसिंह	१४४५
३ काकिल	१०६३	१५ बनवीर	१४८५
४ हणूदेव	१०६६	१६ उद्धरण	१४६६
५ जान्हडदेव	११११०	१७ चन्द्रसेन	१५२४
६ पज्जून	११२७	१८ पृथ्वीराज	१५५६
७ मलेसी	११५१	१९ पूरणमल	१५८४
८ बीजलदेव	१२०३	२० भीमसिंह	१५६०
९ राजदेव	१२३६	२१ रत्नसिंह	१५६३
१० कील्हण	१२७३	२२ भारमल	१६०४
११ कुंतल	१३३३	२३ भगवन्तदास	१६३०
१२ जोणसी	१३७४		

दूसरी विचार धारा –

प्रसिद्ध इतिहासकार डॉ० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा ने कच्छवाहो का राजस्थान मे आने का समय वि स ११६४ सन् ११३७ लिखा है।[1] अपने कथन की पुष्टि हेतु ओझाजी ने निम्न वंशावली दी है।

ग्वालियर के शिलालेख से –

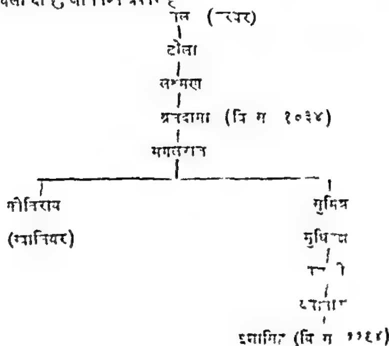
१ लक्ष्मण	६ देवपाल
२ वज्रदामा वि स १०३४	७ पद्मपाल
३ मंगलराज	८ महीपाल
४ कीर्तिराज	९ त्रिभुवनपाल
५ मूलदेव	

१ काशी नागरी प्रचारिणी पत्रिका भाग १ अंक ४

इम्पॉरियल गजेटियर मे ई ११२८ लिखा है।[1] जगदीशसिंह गहलोत ने भी ओझाजी का समर्थन करते हुये ई० ११३७ ही सही माना है।[2]

जनरल कनिंघम ने तेजकरण उर्फ दुल्हराय का [illegible] माना [illegible] स ११२६ वि स ११८६ माना है।[3] डा० एस० भार्गव ग्वालियर [illegible] शिलालेखानुसार कछवाहों का राजस्थान मे प्रवेश १२ वी सदी म[illegible] मानते हैं।[4]

मुहणोत नैणसी ने अपनी ख्यात मे ग्वालियर के कछवाहों की वंशावली दी है, जो निम्न प्रकार है



1. [illegible] ११ [illegible] ३२४
2. [illegible] (जयपुर [illegible]) [illegible]
3. [illegible] ७०४-७५ [illegible]
4. [illegible]

ऊपर राजस्थान मे कच्छवाहो के प्रवेश सम्बन्धी दोनो विचार धाराओ को उद्धृत करने के पश्चात यह देखेंगे कि इतिहास की दृष्टि से कौनसी विचार धारा सही है ?

प्रथम विचार धारा विभिन्न विद्वानो द्वारा अकित की गई है जो लगभग भाटो की ख्यातो पर आधारित है, किन्तु भाटो द्वारा उल्लेख की गई वशावलिया पूर्णरूप से सही सिद्ध नही होती। दूसरी विचार धारा लेखो और ख्यातो पर नही बल्कि यह शिलालेखो पर आधारित है। शिलालेखो के अध्ययन करने पर जो निष्कर्ष निकला है उसके धरातल पर दूसरी विचार धारा टिकी है। कागजो और दस्तावेजो पर अकित किए गये तथ्यो की अपेक्षा शिलालेखो और ताम्रपत्रो पर उत्कीर्ण बातें ऐतिहासिक दृष्टिकोण से अधिक उपयुक्त मानी जाती है और चूँकि दूसरी विचार धारा शिलालेखो पर अकित लेखो से निकले निष्कर्ष पर आधारित है। अत यह अधिक सही प्रतीत होती है।

प्रथम विचार धारा जो दूसरी विचारधारा से मेल नही खाती है इसका एक कारण यह भी हो सकता है कि प्रथम विचारधारा का सवत् वि स न होकर आनन्द सवत् हो सकता है क्योकि विद्वानो द्वारा आनन्द सवत् भी स्वीकार किया गया है।

प्रथम विचार धारा वाले राजस्थान मे कच्छवाहो का प्रवेश लगभग म १०६३ से १०९३ तक मानते हैं और दूसरी विचारधारा वाले विक्रम की १२ वी सदी के उत्तरार्द्ध मे मानते हैं। दुल्हेराय की गद्दीनशीनी का सवत् भाटो द्वारा १०६३ लिखा गया है। सभी विद्वानो ने दुल्हेराय को ही राजस्थान मे आना माना है। यदि १०६३को आनन्द सवत् मानकर ९१ जोडे तो १०६३+९१ = ११५४ वि म आता है

जो दूसरी विचार धारा से मेल खाता है। व्रजदामा के बाद ईशसिंह तक ६पीढ़िया आती है। इतिहास अनुमोदित यदि एक पीढी का शासन काल २० वर्ष माने तो ६ पीढ़ियो का शासनकाल २०×६=१२० होता है। व्रजदामा का वि स १०३४+१२०=११५४ आता है, जो सही प्रतीत होता है। ओझाजी ने वि स ११६४ ई स ११३७ माना है जो अनुमान पर आधारित है। दुल्हेराय की मृत्यु भाटो द्वारा १०६३मे मानी गई है यदि इसके कुछ ही पूर्व दुल्हेराय का राजस्थान मे आना माने तो १०६३+६१=११८४आताहै जो ओझाजी के मत के निकट पहुचता है।

अत ख्यातो का सवत् सम्भवत वि स से ९० ९१ वर्ष पीछे का है।[1] सोढदेव के पुत्र दुल्हेराय(दुलभराय)का समय निकालने के लिए हम राजा पज्जून को लेते है, जिसकी बहादुरी का वर्णन पृथ्वीराज रासो मे किया गया है। पृथ्वीराज रासो से यह प्रमाणित होता है कि आम्बेर का राजा पज्जून पृथ्वीराज चौहान के समय आम्बेर की गद्दी पर था। कच्छवाहो की ख्यातो मे पज्जून का समय ११०७ से ११५१ लिखा गया है और इतिहासकारो ने कन्नौज की लडाई का समय वि स १२४२ लिखा है और इसी लड़ाई मे पज्जून मारा गया था। यदि हम ख्याती के सवत् को अनन्द सवत्[2] मानकर ९० ९१ वर्ष जोड दें तो ११५१+९० या ९१=१२४१-४२ होता है, जो सही प्रतीत होता है। इसके अतिरिक्त पृथ्वीराज रासो का सवत् और कच्छवाहा के भाटो का सवत् भी मेल खाता है, क्योंकि पृथ्वीराज रासो का सवत् भी वि स से ९०-९१ वर्ष पीछे चलता है। यह निम्न तालिका को देखने से ज्ञात होता है।

---

1 कुछ इतिहासकारो ने विक्रमी सवत् से आनन्द सवत् को ९०—९१ वर्ष बाद का माना है।

2 इस सवत् को कुछ इतिहासकारो ने माना है।

पृथ्वीराज का जन्म ११११५+ ६०या६१=१२०५या६-५७=११४८-४६
कैमास युद्ध ११४०+६०या६१=१२३०या३१-५७=११७३-७४
कन्नौज का युद्ध ११५१+६०या६१=१२४१या४२-५७=११८४-८५
गोरी के साथ युद्ध ११५८+६०या६१=१२४८या४६-५७=११६१-६२

उपयुक्त विवरण से यह मालूम पडता है कि पृथ्वीराज रासौ का जो सवत् है, वही सवत् १ जून तक तो अवश्य ही कच्छवाहो की ख्यातो का है। कन्नौज का युद्ध ११५१ मे हुआ। यह सवत् पृथ्वीराज रासौ मे अकित है, कच्छवाहो की ख्यात मे पज्जून का मरना ११५१ मे लिखा है और क्योकि पज्जून कन्नौज के युद्ध मे मारा गया था। अत पृथ्वीराज रासौ और जयपुर के भाटो की ख्यात का सवत् सम्भवत एक ही है। पृथ्वीराज रासौ का समय वि स से ६०-६१ वर्ष पीछे का है। अत माना जा सकता है कि आम्बेर के भाटो की ख्यात का सवत् भी ६०-६१ वर्ष पीछे चलता है, जो आनन्द सवत् हो सकता है।

जयपुर के भाटो की ख्यात की वशावली को देखने मे प्रतीत होता है कि पज्जून के समय जो सवत् था वह आगे नही चला क्योकि जब हम उदयकरण स० १४२३ से भगवतदास स० १६३० तक का उसी वशावली मे सवत् देखते हैं तो वह वि० स० है, आनद सवत् नही। इस प्रश्न को हल करने के लिए हमे देखना होगा कि बीजलदेव जो ख्यात के अनुसार स० १२०३ मे था, उससे लेकर जोणसी जो स० १३७४ मे गद्दी पर बैठा था। स० १२०३ से स० १३७४ तक कुल १७१ वर्ष हुए और बीजलदेव से जोणसी तक पाच राजा हुए। हिसाब लगाने से पता चलता है कि एक राजा का शासनकाल ३४ वर्ष के लगभग आता है। यह सही प्रतीत नही होता है। अत सम्भव है कि इस युग मे भाटो द्वारा जो सवत् लिखे गये है, वे सही नही है।

सम्भवत राजा उदयकरण (वि स १४२३) के जमाने मे भाटो ने वि स लिखना शुरु कर दिया हो। यही कारण हो सकता है कि भाटो की ख्यात मे सम्भवत पज्जून तक आनन्द सवत् अ कित हो और उदयकर्ण से शायद भाटो की आने वाली पीढी ने वि स लिखना शुरु कर दिया हो।

इस प्रकार दोनो विचारधाराओ की विवेचना करने पर पता चलता है कि यदि भाटो की ख्यात के सवत् को आनन्द सवत् मानकर ९०-९१ वर्ष वि स बनाने के लिए जोड दिये जाये तो कच्छवाहो का राजस्थान मे प्रवेश वि० स० ११५४ से ११६४ तक माना जा सकता है। जो सही प्रतीत होता है। परन्तु वास्तव मे राजस्थान(राजपूताना मे कच्छवाहो का प्रवेश कब हुआ यह एक ऐतिहासिक उलझन है, जो अभी तक पूर्ण रूप से सुलझ नही सकी है।

अध्याय ४

१ दुल्हेराय (दौसा)

दुल्हेराय नरवर के राजा सोढदेव कच्छवाह के पुत्र थे। इनका विवाह राजस्थान मे मोरा चौहान रालण सिंह की पुत्री सुजानकुंवरी[1] के साथ हुआ था। मोरा चौहान व बडगूजरो मे परस्पर अनवन रहती थी। दौसा चौहानो और बडगूजरो का आधा आधा था। मोरा चौहान बडगूजरो के राज्य को समाप्त करना चाहते थे। इस कारण उन्होने दुल्हेराय जी को सलाह दी कि वे उनको दौसा का हिस्सा दे देंगे तथा दौसा पर पूर्ण अधिकार करने मे उनकी मदद करेंगे। यह बात सुनकर दुल्हेराय नरवर से विक्रम की वारहवी शताब्दी के द्वितीय चरण मे राजस्थान मे आये और अपने ससुराल वालो की मदद से दौसा पर अधिकार कर लिया। बडगूजरो ने अपने प्रसिद्ध देवती के राजा से सहायता मागी और वह सेना सहित दौसा पर चढ आया, परन्तु दुल्हेराय जी को पराजित नही कर सका।

आमेर के आस पास का क्षेत्र जो इस समय 'ढू ढाड' कहलाता है। वहाँ उस समय मीणाओ के छोटेछोटे राज्य थे। आमेर उनका मुखिया

1 मीणा इतिहास में 'कु कुमदेवी' लिखा है।

2 बहुत से विद्वानों के अनुसार आज की मीणा जाति के लोग प्राचीन 'मत्स्य' जाति के वशज हैं। (मीणा इतिहास सारस्वत, पृष्ठ ८६) इस मत्स्य जाति का उल्लेख ऋग्वेद में सबसे पहले प्राप्त होता है। ऋग्वेद में लिखा है कि मत्स्य लोगों का स्थान इन्द्रप्रस्थ के दक्षिण या दक्षिण पश्चिम तथा सूरसेन या मथुरा के दक्षिण में था। मत्स्यों पर 'तुरास' द्वारा आक्रमण किया गया था (ऋग्वेद –V-१८ ६ मीणा इतिहास, पृष्ठ ८६) उपनिषद्, ब्राह्मण एवं पुराणों में भी 'मत्स्य' जाति का वर्णन पाया जाता है। महाभारत के समय में 'बैराठ' के आसपास का क्षेत्र 'मत्स्य' प्रदेश कहलाता था और विराट (बैराठ) का राजा 'मत्स्य' जाति का था। इसकी पुत्री उत्तरा का विवाह अर्जुन के पुत्र अभिमन्यु से हुआ था। सभवत यही 'मत्स्य' जाति था जिसके वंशधर आगे चलकर 'मीना' या 'मीणा' कहलाये।

था तथा उसके नीचे पांच राज्य थे, जो पचवारा कहलाते थे। दुल्हेराय ने सबसे पहले भाडारेज के मीणा शासक पर हमला किया और उसे अपने अधिकार मे कर लिया। भाडारेज पर अधिकार करने के बाद इनका कदम माच राज्य की ओर बढा। इन्होने माच पर आक्रमण किया। मीणाओ से युद्ध करते हुए दुल्हेराय जी सख्त घायल हुए और मूर्छित हो गये परन्तु वह निराश नही हुए। इन्होने पुन विजयोल्लासरत मीणो पर हमला बोल दिया। इस बार वे दुल्हेराय जी के प्रबल आक्रमण को रोक न सके और माच के मीणा इस युद्ध मे हार गये। दुल्हेराय ने माची पर अधिकार किया तथा उसका नाम बदलकर अपने पूर्वज पुरुषोत्तम राम के नाम पर 'जमवा रामगढ' रखा तथा उसे अपनी राजधानी बनाया।

दुल्हेराय देवती राज्य को पूर्णतौर से अपने अधिकार मे करना चाहते थे, क्योंकि बडगूजरो का वह शक्तिशाली राज्य था। उन्होने देवती पर हमला किया और देवती राजा को युद्ध मे पराजित कर अधिकार कर लिया। इसके बाद विजय श्री इनके चरण चूमती गई और इन्होने क्रमश खोह, गेटोर, झोटवाडा आदि मीणा राजाओ को पराजित कर अपने अधिकार मे कर लिया। दुल्हेराय जी ने अब रामगढ से राजधानी बदल कर खोह बनाई। दुश्मन द्वारा उनके पुराने राज्य ग्वालियर पर हमला करने के कारण वे दुश्मन को परास्त करने के लिए ग्वालियर गये परन्तु वहा युद्ध मे सख्त घायल हुए तथा युद्ध के घावो से ही उनकी मृत्यु होगई। इनके दो पुत्र थे काकिल और बीकल। काकिल पिता की गद्दी पर बैठे और बीकल' अपनी जन्म भूमि (नरवर) रहे।

अध्याय ५

१ काकिल (आमेर)

पिता दुल्हेराय की मृत्यु के उपरान्त यह पिता की गद्दी पर विराजे। इतिहासकारों का मत है कि काकिल ने ही आम्बेर की नींव डाली थी। वीरविनोद में लिखा है कि काकिलजी ने जमवाय मां के हुक्म से मीणों को मारकर अम्बिकापुर की नींव डाली[1] काकिल जी के चार पुत्र थे। बड़े हणू देव गद्दी पर बैठे। शेष तीन पुत्र अलघर, रालण और देलण से क्रमश मेड कच्छवाहे, रालणोत व लाहर के कच्छवाह कहलाये।

२ हणू देव

राजा काकिल के मरने के बाद हणू देव पिता की गद्दी पर बैठे। इन्होंने अपना राज्य विस्तार करने के लिए मीणाओं से काफी संघर्ष किया।

३ जान्हडदेव

पिता हणू देव की मृत्यु के बाद आमेर की गद्दी पर विराजे। इनका विवाह भुंडवाड के चौहान की कन्या से हुआ। यह जब शादी करने के लिए जा रहे थे तो इनका मीणों ने रास्ता रोका और कहा कि ध्वजा, नगाड़ा, छत्र और चँवर हमारे राज सी चिन्ह है। ये चिन्ह हमारी सीमा में ही रहते हैं। आप बाहर जा रहे हैं। अत इन्हें यही छोड़ कर जावें। इन्होंने इस बात पर ध्यान नही दिया। इस कारण युद्ध शुरु हो गया। इस युद्ध में मीणाओं की पराजय हुई। जान्हडदेव के पांच पुत्र पज्जून, पाल्हण, जैतसी, कान्हदेव और पिचाण थे। जान्हडदेव की मृत्यु के बाद पज्जून आमेर की गद्दी पर बैठे।

1 वीर विनोद श्यामलदास, पृष्ठ ४६

४ पज्जून

पज्जून आमेर का एक ऐसा रणबांकुरा शासक था जिसकी बहादुरी की इतिहास मे भूरि भूरि प्रशसा की गई है। यह शासक अन्तिम हिन्दू सम्राट पृथ्वीराज का समकालीन था। इसका विवाह पृथ्वीराज के काका कान्ह की पुत्री से हुआ था, जिसके कारण इस वीर का पृथ्वीराज से गहरा सम्बन्ध था। पृथ्वीराज के महान् योद्धाओ मे से वह एक था जिसकी बहादुरी, रणचातुर्य, बुद्धिमता आदि गुणों की प्रशसा पृथ्वीराज रासो के लेखक चन्दबरदाई ने अपने महाकाव्य मे बहुत ही सुन्दर शब्दो मे की है।

पज्जून ने पृथ्वीराज के साथ रहकर उसके साथ होने वाले लगभग चौसठ युद्धो मे भाग लिया था और उन युद्धो को जीतने मे पज्जून ने महान् योग दिया था। ऐसा कोई युद्ध नही था जिसमे इस बहादुर ने अपनी तलवार न बजाई हो। प्रत्येक युद्ध मे इसने अद्भुत जौहर दिखाया था और इसके नेतृत्व मे अनेक कच्छवाह रणबांकुरो ने अपना रक्त बहाया था।

गुजरात के राजा भोला भीम देव सोलंकी के साथ हुए युद्ध मे पज्जून ने अपना अपूर्व शौर्य प्रदर्शित किया था। महोबा पर विजय प्राप्त करने का श्रेय पज्जून को ही था। युद्ध मे अद्भुत रणकौशल दिखलाने के कारण पृथ्वीराज चौहान इसकी बहादुरी से बहुत प्रसन्न हुआ और सम्राट ने पज्जून को महोबा का शासक नियुक्त किया।

पृथ्वीराज चौहान और कन्नौज के राजा जयचन्द मे गूढ़ मनोमालिन्य था। जयचन्द की पुत्री सयोगिता पृथ्वीराज को वरण करना चाहती थी, परन्तु जयचन्द को यह पसन्द नही था। सयोगिता ने पृथ्वीराज को वरण करने का दृढ़ निश्चय कर लिया था, यह जानकर

पृथ्वीराज अपने वल मे सयोगिता को लेने चल पडा और प्रसिद्ध यौद्धाओ के साथ कनौज पहुँचा। जयचन्द और पृथ्वीराज की सेना मे भयकर युद्ध छिड गया। इस समय के हुए युद्ध मे पज्जून ने अपनी अपूव वहादुरी से पृथ्वीराज को सयोगिता के साथ निकलवाया और स्वय ने कनौज की असरव्य सेना को रोके रखा। इस समय पज्जून ने अपनी सैनिक टुकडी का कुशल नेतृत्व किया जिसके कारण कनौज की सेना आगे नही वढ सकी। यह युद्ध उस समय का भयकर युद्ध था। इस युद्ध मे अनेक वहादुर रणभूमि मे सो गये, कच्छवाहो ने अपूव शौय दिखाया, उनकी तलवारो ने रण मे अपूव जौहर दिखाया। पज्जून के चार अन्य भाई तथा तीन पुत्र इस युद्ध मे वीर गति को प्राप्त हुए। पज्जून का पुत्र मलयसी बुरी तरह से घायल हो गया। उसके शरीर पर साठ घाव लग चुके थे।

अपने भाइयो के वीरगति पाने पर व पुत्र मलयसी के लहू लुहान होने पर पज्जून का क्षत्रित्व जाग उठा। उसने युद्ध मे चरम सीमा का रण कौशल दिखाया। इस बहादुर ने अपने प्राणो की कोई परवाह नही की और अनेको दुश्मनो को रणभूमि मे सुला दिया। वह सिंह के समान ऐसा लडा जिससे कनौज की सारी सेना छिन्न भिन्न हो गई। उसके अपूव रण कौशल से खून की नदिया वह चली और दुश्मनो के रुण्ड मुण्ड लाल खून पर तैरते हुए दिखाई देने लगे। इस बहादुर ने इस प्रकार ऐसा जौहर दिखाया जो अकथनीय है। चन्दवरदाई ने अपने महाकाव्य में इस रण वाकुरे राजा की बहादुरी को ओजस्वी लेखनी मे इस प्रकार अकित किया है —

"गयत प्रान गोयद,
मीर इति मित्ति सुपिल्लिय ।।
पिक्ख राज पज्जून,
सुघर कम्मार सुढिल्लिय ।। १४७५

तिन रोहिग पज्जून,
राय केहरि करि जुथ्यह ।। १४७६

हवक्कि सु धक्कि अनो अनि अग,
लगे जमदड्ड सु सेलहसग ।।
छुरिक्कइ धाइ सु तुटटहिमीस,
खिलत कमध उठै भर रीस ।। १४७८

मिले इत मित्त पूजन सु धाइ,
हयौ हिय नेज कुरमह राइ ।।
चले सम नेज हयौ असि भार,
पर्यौ इत मित्त मनो तरतार ।। १४८०

भीर परी पहु पग दल,
भवे त्रतिय पहुराम ।।
तव पजून समुह करन,
भरन अत्य किए काम ।। १४६४

भिरें वीर पजून यो पग जान,
बहे खग अध्धाइ अध्धाइ बान ।।
करी छिन्न भिन्न सनाहति जीन
हय अस बस द्रमगीर कीन ।। १४६

दिखे यो पजून मिल्यौ सिंह रुख
भिरत वसत भयौ ज्यो विररख ।।

भई पच आए प्रथीराज काम
भए एक घट्ट भिरे तीन जाम ।।१५०
(पृथ्वीराज रासो, पृष्ठ, १७६७-१८०३)

वास्तव मे राजा पज्जून उस समय के उन महान् योद्धाओ मे से था जिन्होने पृथ्वीराज के साथ हुए युद्धो मे अपना रक्त बहा दिया था। पृथ्वीराज व जयचन्द की सेना का यह युद्ध वि स १२४६ मे हुआ था और राजा पज्जून ने अद्‌भुत शौर्य प्रदर्शित कर इस युद्ध मे वीर गति प्राप्त की थी।[2]

---

1 शार्दूलसिंह शेखावत पृष्ठ १५

2 सी वी वैद्य का मध्ययुगीन भारत का इतिहास (अंग्रेजी) भाग ३ पृ ३२६ (रावशेखा पृष्ठ ११)

५ मलयसी

पिता के वीरगति पाने पर यह आमेर की गद्दी पर बैठे। संयोगिता प्रसंग में हुए युद्ध में पृथ्वीराज चौहान की ओर से ये भी पिता के साथ बहुत बहादुरी से लड़े थे। जिसका वर्णन पृथ्वीराज रासौ में कविचन्द द्वारा किया गया है।[1] इनके ३२ पुत्र थे, जिनमें सब का पूरा वृत्तान्त नहीं मिलता है। इनके कुछ पुत्रों के नाम इस प्रकार हैं। बीजलदेव, बालाजी जतल जी, भीवड जी, बाघाजी, आदि।

६ बीजलदेव

ये मलयसी के सबके बड़े पुत्र थे। पिता की मृत्यु के बाद आमेर के राजा हुए। इनकी मृत्यु के बाद राजदेव गद्दी पर बैठे।

चन्दबरदाई ने पज्जून के वीर गति पाने पर पृथ्वीराज द्वारा विलाप किया जाना इस प्रकार अंकित किया है।

आज रॉड दिल्लेडा, अज ढूँढाड अनाथइ।
आज अग्नि प्रथीराज, आज सॉवत विणमायइ॥
आज पर हॉ दल जोर, आज निज दलभ्रम भग्गे।
आज मही विन कम्म, आज मुरजाद उलग्गे॥
हिन्दुवाण आज टूटा किला, अब तुरकाणी उच्छुटिय।
कुरम पज्जून मरता थका, मनहु चाप गुण तुट्टिय॥
(राबशेखा पृ० १२)

1 कहयौ सब्ब सामत जै जै मलैसी,
दुवदस तारे सुअ माल तैसी॥ १५०७
लगे घाव हटिठ परे घार खेत,
उपा स्यो सु विप्र भयौ सो अचेत॥
पर्यो या पज्जून सुपुत्त उचार्यौ,
भयौ इत्तने मान अस्तमित चार्यौ॥ १५०८
(शार्दूलसिंह शेखावत, पृष्ठ १६)

७ राजदेव

इनके किल्हणदेव, भोजराज, सोमेश्वर, भीकसी, सिहाजी आदि कई पुत्र थे। भोजराज के वंशधर लवाण के कच्छवाह है तथा सोमेश्वर, भीकसी व सिहाजी के वंशधर क्रमश सोमेश्वरा, कपूर के कच्छवाह व सीहाणी कच्छवाह कहलाये। राजदेव ने आमेर के परकोटा बनवाया।

८ किल्हणदेव

राजदेव जी की मृत्यु के बाद किल्हणदेव आमेर की गद्दी पर बैठे। इन्होने किल्हण गढ का निर्माण करवाया। इनके तीन पुत्र कुन्तलदेव, अखयराज व जसराज थे। कुंतलदेव आमेर की गद्दी पर बठे तथा अखयराज व जसराज के क्रमश धीरावत व जसराज पोता कच्छवाह कहलाये।

९ कुन्तलदेव

इन्होने अपने नाम पर कुंतल गढ का निर्माण करवाया। इनके समय पृथ्वीराज गोड (मारोठ) ने आमेर पर असफल आक्रमण किया। इनके समय मारवाड मे भयंकर अकाल पडा। इन्होने अपने अन्न भण्डारो को खोलकर जनता की मदद की।

कुंतल जी ने हतोना (हस्तनापुर) को जीतकर वहा का शासन अपने पुत्र भाकरसी का सौंप दिया। भाकरसी ने वि स १३५६ ई स १३०३ मे अलाउद्दीन खिलजी से हस्तनापुर मे युद्ध किया और अंत मे पराजित होने की स्थिति मे स्त्रियो ने जौहर किया।[1] इसी समय मीणो ने उत्पात मचाया परन्तु कुन्तल जी ने उनको दबा दिया। कुन्तल जी के जूणसी, हमीर, भडसी, भाकरसी, आलणसी, जैतमाल आदि पुत्र

1 शार्दूलसिंह शेखावत, पृष्ठ १७

हुए । जूणसी गद्दी पर बैठे । हमीर, भाकरसी, आलणसी व जैतमाल के वशधर क्रमश गोगावत, भाखरोत, जोगी कछवाह व नापावत कच्छवाह कहलाये ।

१० जूणसी

पिता कुन्तलदेव के बाद आमेर के राजा हुए । इन्होने टोंक के पास जोला गाव बसाया व एक तालाब बनवाया ।[1] इनके तीन पुत्र उदयकरण कुंभाजी व सिधेजी थे । जूणसी की मृत्यु वि स १४२३ ई स १३६६ मे हुई ।

११ राजा उदयकण (वि स १४२३-१४४५ ई १३६६-१३८८)

राजा उदयकरण के पिता का नाम जूणसी था । पिताजी की मृत्युपरात वि स १४२३ ई सन् १३६६ मे ये आमेर के सिंहासन पर आरुढ हुए । राजा उदयकरण ने २२ वर्ष तक राज्य किया । इनकी मृत्यु वि सवत् १४४५ ई १३८८ मे हुई ।

उदयकर्ण जी के तीन राणियाँ और आठ पुत्र थे, जिनका विवरण इस प्रकार है -

राणियाँ

१ गौडजी- मारोठ के राव देवराज गौड की पुत्री, उतमदेजी ।
२ निरवाणजी खण्डेला के राव बीसलदेव निरबाण की पुत्री, सोहदराजी ।
३ तँवर जी - पाटण के सगर या कवलराज की पुत्री, उच्छरगदे जी ।

1 शार्दूलसिंह शेख वत पृष्ठ १७

राणियाँ

१ तँवर जी- पाटण के राव विरमजी तँवर की बेटी ।
२ बडगूजरजी- माचेडी के सोढजी बडगूजर की बेटी, सोभागकुँवर ।

पुत्र

१ मोकलजी (बरवाडा)
२ खीवराज जी- इनके वशज 'बोला पोता' कहलाये ।
३ खरथजी - इनके वशधर 'करनावत' कहलाये ।
४- मोकाजी इनके वशधर 'मोकावत' कहलाये । इनको गढ नायण आदि गाव प्राप्त हुए ।
५ भीलोजी- इनके वशधर 'भीलावत' कहलाये ।
६ भामाजी- इनके वशज 'भामावत' कहलाये ।
७ डूँगरसिंह - इनके वशज 'जीतावत' कहलाये । भुंभुनूँ जिले मे भादरवास, भडूदा आदि गावो मे 'जीतावत' बसते हैं ।
८ गोविन्ददास- इनके वशज 'बालापोता' कहलाते हैं । इनको बघाल आदि गाव प्राप्त हुए ।
९ नाथाजी- इनके वशधर 'बालापोता' कहलाते हैं ।
१० बीभाजी - इनके वशधर 'बीभाणी' कहलाते हैं।
११ सागाजी - इनके वशज 'सागानी' कहलाते हैं । इनको हस्तेडा आदि गाव प्राप्त हुए ।
१२ चाँदाजी- (निस्सतान)

२ मोकल (१४८७- १५०२ ई. १४३०-१४४५).

मोकलजी बालाजी के पुत्र थे । यह वि सवत् १४८७ सन् १४३० ई मे बरवाडा की गद्दी पर बैठे ।

इन्होने पिता के जीवन काल मे ही नाण[1] गाव को डाहलिया राजपूतो से जीतकर अपने राज्य मे मिलाया। इनके प्रौढावस्था तक कोई पुत्र उत्पन्न नही हुआ था। अत एक बार वे वृन्दावन की यात्रा (तीर्थ) करने अपनी राणियो सहित गये। वृन्दावन मे किसी साधु (सन्त) से इनकी मुलाकात हुई। इन्होंने उस सन्त से अपने अभाव की पूर्ति की इच्छा प्रकट की। सन्त ने इनको श्रीकृष्ण की एक मूर्ति दी और कहा इसका इष्ट रखो तथा गौ सेवा करो। भगवान तुम्हारी इच्छा पूर्ण करेगा। इन्होने बरवाडा वापस लौटकर गौ-सेवा करनी आरम्भ करदी।

एक दिन मोकलजी नाण ग्राम के जगल मे गाय चरा रहे थे कि इनकी भेट एक चमत्कारी फकीर शेख बुरहान चिश्ती से हो गई। शेख बुरहान को चमत्कारी फकीर जानकर इन्होने सेवा सुश्रुषा द्वारा उसे प्रसन्न किया तथा पुत्र प्राप्ति की इच्छा जाहिर की। फकीर ने वरदान दिया कि उसके पुत्र होगा। दसवें मास मे विजय-दशमी के दिन निरवाण राणी के गर्भ से एक पुत्र रत्न की उत्पत्ति हुई, जिसका नाम शेखा रखा गया। शेखा के जन्म के १२ वें वर्ष मे अर्थात वि स १५०२ मे मोकलजी की मृत्यु हो गई।[2]

---

1 सम्भवत यह गाव प्राचीन समय में ब्राह्मण बस्ती थी जो 'नारायणपुरी' कहलाती थी। कालान्तर में नारायणपुरी से बिगडते २ इसका नाम (नाण) हो गया।

2 'केसरीसिंह समर' में चन्द्रसेन जी आमेर (वि स १५२५) में मोकलजी का जीवित होना माना है। परन्तु यह सही नहीं प्रतीत होता। प्रथम तो सभी शेखावत इतिहासों में मोकल जी की मृत्यु वि स १५०२ में मानी है। फिर यदि हम १५२५वि में मोकलजी को जीवित मानें तो शेखाजी गद्दी पर कैसे बैठ सकते थे। इसके अतिरिक्त सभी शेखावत इतिहासो में शेखाजी के काका खीवराजजी को

अध्याय ७

१ रावशेखा अमरसर
(वि स १५०२-१५२५ ई स १४४५-१४८८)

रावशेखा वि सोलहवी शताब्दी के पूर्वार्द्ध का एक ऐसा महान् योद्धा था, जिसने अपने बाहुबल से एक विशाल राज्य की स्थापना की थी तथा जिसके नाम से कच्छवाहो की एक नई शाखा 'शेखावत' का प्रादुर्भाव हुआ। इस नर रत्न ने अपने जीवन काल मे अनेको संघर्ष किये जिनके कारण उसका व्यक्तित्व निखरता ही गया। शेखावाटी के इतिहास का ही नहीं, रावशेखा राजस्थान के इतिहास का एक महान् योद्धा था।


रावशेखा

जन्म

रावशेखा का जन्म मोकल जी की निरवाण राणी से गुरुवार, आसोज सुदी १० वि स १४९०[1] तदनुसार सितम्बर २४, १४३३ ई

शेखाजी के सरक्षक (अभिभावक) के रूप में कार्य करना लिखा है। यदि वि स १५२५ तक मोकलजी जीवित होते तो शेखाजी को खांगाजजी को सरक्षक बनाने की आवश्यकता नहीं थी। अत मोकलजी की मृत्यु वि स १५०२ सही समझनी चाहिए।

1 राव शेखा की जन्म तिथि के सम्बन्ध में अभी तक कोई पुष्ट प्रमाण उपलब्ध नहीं हुआ है। बडुवो की बही अनुसार वि स १४९० माना गया है। शेखावतों के अन्य इतिहासों में शेखाजी की जन्म तिथि रविवार, विजय दशमी, वि स १४९० मानी गई है। यथा—

को नाण के पास स्थित अमरा घाभाई के निवास स्थान पर हुआ था।

1 "अरवार स्वामी विजय, क्वार सुदल सिघधाम।
जिण दिन सेखो जलमियो, बरयाई बरियाम।।"
(शिखर वंशोत्पत्ति)

11 सम्वत चौदन सौ निव्वे विजय दशमी रविवार।
मोकल के घर जलमियो सेखो राजकुमार।।

111 माधोवंश प्रकाश म आसोज मास शुक्ल पक्ष, दशमी तिथि और स १४६० में शेखा का जन्म माना है।

V1 'शेखावाटी प्रकाश' म शेखा की जन्म तिथि पचमी शुक्रवार, स १४६० मानी है।

V 'खण्डेला का इतिहास' में फागन सुदी २ बृहस्पतिवार को शेखा का जन्म माना है।

माधोवंश' प्रकाश के अतिरिक्त अन्य इतिहासों में शेखा के जन्म सम्बन्ध में अधूरा बताते है। अत सही नहीं माना जा सकता। माधोवंश प्रकाश में लिखित सवत्, महीना और तिथि सही जान पड़ती हैं। कुछ इतिहासों में सवत् का तो उल्लेख किया ही नहीं है, बल्कि वार आदि में भी गलतिया की हैं। शिखर वंशोत्पत्ति में आसोज सुदी दशमी के दिन रविवार लिखा है जो गणना करने पर सही नहीं उतरता। डा० रघुवीर सिंह जी सीतामऊ के अनुसार आसोज सुदी १० वि स १४६० के दिन गुरुवार था, रविवार नहीं। इसके अतिरिक्त 'खण्डेला का इतिहास' एव 'शेखावाटी प्रकाश' की तिथिया तो बिलकुल ही मेल नहीं खाती हैं। अत शेखा की जन्म तिथि गुरुवार आसोज सुदी १० वि स १४६० तदनुसार सितम्बर, १४, १४३३ ई ही समीचीन जान पड़ती है।

1 शेखा का जन्म स्थान भी निश्चित नहीं है। जनकथाओं म शेखा का जन्म घोड़ाखुर्रा तथा अमरा घाभाई के निवास पर होना बताया जाता है। सुरजनसिंह जी झाझड़ ने नाण से ढाई मील उत्तर की ओर बसे 'मानगढ' में शेखा का

वि स १५०२ ई स १४४५ मे मोकल जी की मृत्यु होने पर शेखा जी का तिलक हुआ। इस समय इनकी अवस्था १२ वर्ष की थी। इस कारण राज्य का काय काका खींवराज जी ने सम्भाला। जब इनकी अवस्था १६ साल की हो गई तो वे स्वय शासन काय करने लगे।

जन्म माना है। यह भी दन्तकथा पर आधारित है।(शिखर वंशोत्पत्ति का लेखक इनका जन्म 'बरवाड़ा' में मानता है। घोड़ाखुर्रा में शेखा का जन्म समीचीन नहा है। घोडे रखने के स्थान पर किसी का जन्म होना अशक्य ही माना जायेगा। इसी प्रकार बरवाड़ा में शेखा जी का जन्म होना सही नहीं माना जा सकता क्योंकि मोकल जी पुत्रोत्पत्ति के बहुत पहले से ही नाण में रहने लगे थ। 'मानगढ' जैसा नाम से विदित होता है, 'मान' नाम के किसी व्यक्ति द्वारा बसाया गया था। यह 'मान' व्यक्ति शेखा जी के बेटे दुर्गाजी का पुत्र था, जिसका पूरा नाम मानसिंह था। मेरे मतानुसार सब से पहले नाण से दो मील उत्तर में इसी मानसिंह ने अपने रहने के मकान बनाये और गाव बसाया। यह कहना कि मोकल जी ने शेखाजी के जन्म के लिए नाण से दूर 'मोकल गढ' बसाया और बाद में मानसिंह के वहाँ रहने पर मानगढ हुआ, उचित नहीं जान पड़ता। अमरा धाभाई के निवास स्थान पर शेखा का जन्म होना अधिक समीचीन मालूम पड़ता है, क्योंकि सभवत मोकल जी ने नाण के डाहलिय शाखाओं के मकानो को सतानोत्पत्ति के लिए अशुभ माना हो और ऐसी स्थिति में अमरा धाभाई, जो मोकल के पास ही रहता था। शेखाजी के जन्म के कुछ दिनों पूर्व उसके निवास स्थान पर अपनी निरवाण राणी को भेज दिया हो। इस प्रकार सम्भवत शेखा का जन्म वहां हुआ और इसके बाद अमरा धाभाई की स्त्री ने शेखा का पालन पोषण किया। अत शेखाजी जब बडे हुए और उन्होंने जब नई राजधानी का निर्माण किया तो अमरा धाभाई की स्मृति में ही अमरा ढाणी से २ मील पूर्व में अमरसर बसाया होगा।

साखलो व टाक राजपूतो के गावो पर अधिकार

शेखाजी १६ वष की अवस्था मे अपने राज्य के विस्तार मे लग गये। सबसे पहले बलहीन साखला राजपूतो पर हमला किया, जिनका राज्य नाण के पूव मे था। शेखा ने साखलो के प्रदेश पर अधिकार करते हुए जाजा पर आक्रमण किया और उसे अधिकार मे कर लिया। सभी साखले भयभीत होकर साईवाड के ठाकुर नापाजी साखला के पास सगठित हुए और शेखाजी को धमकी भरा पत्र लिखा,[1] किन्तु इस सगठित शक्ति को भी शेखा जी ने तोड डाला और साईवाड पर भी अधिकार कर लिया इसके बाद शेखा ने मेड और बैराठ के यादवो को पराजित किया तथा टाको के २४ गावो पर अपना अधिकार कर लिया।

अमरसर बसाना

शेखाजी ने अपने बाहुबल से आस पास के बहुत से गावो पर अधिकार कर राज्य का विस्तार किया। अब वे नाण को छोड कर राज्य की राजधानी अलग कायम करना चाहते थे। इस कारण इन्होने नांण से उत्तर मे युद्ध की दृष्टि से सुरक्षित-स्थान देखकर वहा एक गाव बसाया, जिसका नाम अमरसर रखा गया।[2] अमरसर का बसाना वि स १५१७ ई स १४६० मे माना गया है। इसी समय राणी टाकण जी द्वारा कल्याण जी का मन्दिर बनवाना बताया जाता है।

आमेर से युद्ध और विजय

शेखाजी के दादा बालाजी के समय से ही आमेर को मामले (कर) के एवज मे बछेरे दिये जाते थे। शेखाजी की शक्ति बढने पर

---

1 जाजा जाण न आजे सेरा आछे साईवाड।
श्री नापो हरीराम को, देसा तने बिगाड ॥

2 नैणसी री ख्यात, भाग १ पृष्ठ ३१८ व ब प्र सावरिया व राजपूताने का इतिहास भाग ३ पृ १८३ (गहिलोत)

उन्होने आमेर को कर के रूप मे बछेरे भेजना उचित नही समझा और उन्होने वार्षिक मामले के रूप मे घोडे भेजना बन्द कर दिया। आमेर के तत्कालीन राजा उद्धरणजी ने शेखाजी से पूछा कि वे मामले के रूप मे बछेरे क्यों नही भेज रहे ? शेखाजी ने उत्तर लिख भेजा कि आप अमरसर पधारेंगे तो आपके सम्मान मे बछेरे भेंट करूँगा, परन्तु कर के रूप मे बछेरे मैं नही भेजता। उद्धरण जी यह समाचार पाकर चुप हो गये।

वि स १५२५ मे चन्द्रसेनजी आमेर के राजा हुए। उन्होने शेखाजी को लिखा कि कर के रूप मे आप जो बछेरे हमे देते थे अब क्या नही भिजवाते ? राव शेखाजी ने उत्तर दिया कि वे कर के रूप मे बछेरे नही देंगे।[1] इस समाचार को जानकर चन्द्रसेनजी को बडा क्रोध आया। उन्होंने सेना को आज्ञा दे शेखाजी पर चढाई करदी और बरवाडा पर अधिकार करलिया। इधर शेखाजी भी सारे दल बल के साथ रणभूमि की ओर बढे। रात्रि के समय राव शेखाजी ने बरवाडा मे स्थित आमेर की सेना को ध्वस्त किया और बहुत से घोडो पर अधिकार कर अमरसर आगये। उस समय अफगानिस्तान से पन्नी पठानो[2] का काफिला भारत

---

१ "किये प्रधानन अरज यक, सुनहु भूप बनराज।
एक अमरसर राव बिन, सकल समाप काज ॥१८॥- केसरीसिंह समर पृ ५

2 किसी ऐस' नाम के व्यक्ति के पुत्र केस ने इस्लाम धर्म स्वीकार किया। उसका इस्लामी नाम अब्दुल रसीद रखा गया। अब्दुल रसीद के तीन पुत्र हुए। गोरगस्त, सड़बन और बटन। गोरगस्त के तीन पुत्र दानी, बाबी और मन्दू थे, दानी के चार पुत्र काकड़, नागड़, पन्नी और दावी हुए। काकड़, नागड़, व पन्नी के वंशधर, क्रमश काकड़ पठान, नागड़ पठान व पन्नी पठान कहलाये। दावी ने पठानो के अतिरिक्त दूसरे खानदान से शादी की। अत इसके वंशधर पठान नहीं कहलाये। दावी के भाई मन्दू के वंशज मन्दूजई पठान कहलाये जो अमरसर, हैदराबाद, आदि जगह बसते हैं।
(मेजर मुहम्मद यासीनखां जयपहाड़ी के सौजन्य से प्राप्त)

मे आरहा था। राव शेखाजी ने लालच देकर उनको अपनी ओर मिलाया। पत्री पठानो की सेना साथ लेकर वीर शेखाजी आम्बेर से युद्ध करने को तैयार हुए। इधर चन्द्रसेनजी की फौज सकल दल-बल से नाण पर चढ आई। शेखाजी वहा सेना सहित उपस्थित थे। इन्होने अपनी फौज के तीन विभाग कर दिये और मोर्चा बद लडाई शुरु हुई। समुख रण मे शेखाजी स्वय एक विभाग सहित थे। एक एक दल तीनो पार्श्व भागो मे रखा गया था, तथा स्वय न चन्द्रसेनजी से युद्ध करना आरम्भ किया। वीरवर शेखाजी सेना को भग करते हुये चन्द्रसेनजी के पास आ धमके, शेखाजी की रण कुशल सेना के समुख आम्बेर की सेना के पाव उखड गये। वह भाग खडी हुई। सेना को भागती हुई देखकर चन्द्रसेनजी भी रण भूमि से भाग खडे हुये और आम्बेर गये। शेखावाटी प्रकाश के अनुसार इस युद्ध मे दोनो ओर से ६०० अश्वारोही तथा ६०० सिपाही खेत रहे। (प्रथम खण्ड, अध्याय ५ पृष्ठ ५)

अनुमानत विक्रम स १५२६ म आमेर के चन्द्रसेनजी पुन शेखाजी को पराजित करने के लिए दूगी सेना लेकर बरवाडा नाके पर स्थित घोली गाव के पास पहुच गये। इधर शेखाजी भी अपनी सगठित सेना को लेकर युद्ध करने के लिए जा पहुचे। शेखाजी ने पहुचते ही चन्द्रसेनजी की सेना पर अकस्मात् हमला किया। काफी सघर्ष के बाद चन्द्रसेनजी की सेना भाग खडी हुई और शेखा की विजय हुई। यहाँ से शेखाजी आगे बढे और कूकस नदी के सतपर अधिकार कर लिया।

वि स १५२८ में चन्द्रसेनजी फिर शेखाजी पर चढ आये। कूकस नदी के दक्षिणी तट पर राजा चन्द्रसेनजी ने अपनी फौज जमाई थी। उत्तरी तट पर राव शेखाजी सेना सहित आ डटे थे। चन्द्रसेनजी

ने रण-निमंत्रण समस्त कछावो को दिया था। बरसिंह जी के पुत्र नरुजी जो पहले आमेर के पक्ष मे थे, परन्तु युद्ध शुरु होते ही उन्होंने शेखाजी का पक्ष लिया। इस कारण बहुत से लोग शेखाजी के पक्ष मे हो गये। यह सुनकर चन्द्रसेनजी बहुत चिंतित हुये और अपनी हार मानते हुए[1] उन्होने शेखाजी के समुख सधि का प्रस्ताव रखा। राव नरुजी की मध्यस्थता मे सन्धि हुई वह इस प्रकार थी –

१ *आज तक जिन ग्रामो पर राव शेखाजी का अधिकार हुआ है, उन पर* शेखाजी का अधिकार ही रहेगा।

२ आज से शेखाजी आमेर राज्य की भूमि पर हस्तक्षेप नही करेंगे। आमेर राज्य को किसी भी प्रकार का कर नही देवेंगे।

३ शेखाजी अपना स्वतंत्र राज्य कायम रखेंगे। इसमे आमेराधीश कोई हस्तक्षेप नही करेंगे।

इस सधि के बाद चन्द्रसेनजी और शेखाजी मे परस्पर मेल मिलाप हो गया। शेखाजी ने राव नरुजी को भी आमेराधीश से गाँव दिलवाये। इसके उपरान्त शेखाजी का ३६० गांवो पर अधिकार हो गया[2]

आमेर की सहायता

अनुमानतः वि स १५३० ई स १४७३ मे मालवा के सुलतान गयासुद्दीन के बडे पुत्र नासिरुद्दीन ने आमेर पर हमला किया।

---

1 मिलर लोह लोहय, नरेश पीठ दोहय ॥
"बाँटि घर आमेर पति, सग सन्तोषहि मानि,
राज करे सेखो नृपति, सुरा सराहें आनि ॥३६॥"
केसरीसिंह समर, पृ १०

2 टॉड राजस्थान (अंग्रेजी) पृष्ठ ३१५, १६ व नैणसीरी ख्यात, भाग २ पृ १

आमेर के राजा चन्द्रसेन की सहायतार्थ शेखाजी भी गये। भाडारेज के पास मुसलमानो और कछवाहो का युद्ध हुआ। इस युद्ध मे शत्रु पराजित हुआ। सम्भवत इसी समय मेडता के छीने जाने पर दूदाजी अमरसर आकर रहे थे।[1]

ढोसी के अखन खा के साथ युद्ध

कायम खा का पुत्र अखन खा (अख्तियार खा) ढोसी पर शासन करता था। उसने विक्रमपुर के एक सोढ नामक राजपूत को, जो घोडे पर चढा हुआ जा रहा था। उसे पकडवाकर उसके हथियार आदि छीन लिए तथा उसे अपमानित किया। राजपूत के अपमान की बात जब शेखाजी के पास पहुँची तो शेखाजी ने अख्तियार खा पर हमला कर दिया। काफी सघर्ष के बाद अखन खा (अख्तियार खा) अपने भाई मौमन खा सहित मारा गया।[2] शेखाजी की विजय हुई।[3]

तंवरो से युद्ध

ढोसी विजय करने के बाद शेखाजी हरियाणा के स्वतन्त्रता प्रिय जाटु तवरो की ओर बढे। शीघ्र ही इन्होंने चरखी, भिवाणी आदि

1 रावशेखा पृष्ठ ८५-८६ इस सम्बन्ध में एक गीत इस प्रकार है।

"कुल मण्डण इसा हुओ कछवाहो, मत पाता हूँ दाखण भाय।
सेखै राव राखिया सरणै, सेखै पाकड़ियो पतशाय ॥ १
छत्रपत किता बांध छाड़ दिया, करग जगत ऊपर किया।
मेड़तिया मुरधर रा मांझी, आय आसरै उबरिया ॥ २
दहू राहा बिच टालक देखता, सुत मोकल इमडो समराथ।
हैवें किता सग्राम हराया, दिल्ली वा नड़ा मडाया हाथ ॥ ३

2 रावशेखा सुरजनसिंह, पृष्ठ ७६

3 "रन मारि कै चहुवान। वह परो अपनो ओन ॥
खल जीति आये देस। अस भाति सिखर नरेस ॥"
(केसरीसिंह समर पृ, १३

स्थानों को जीत लिया। इसके बाद इनका मुकाबला दादरी के नोपसिंह से हुआ। नोपसिंह युद्ध छोड़कर भाग पड़ा और दादरी को शेखाजी ने लूट लिया।[1] तवरों के साथ शेखाजी का यह संघर्ष सम्भवत वि स १५३३-३४ वि स १४७६-७७ मे हुआ।

शिखरगढ का निर्माण

शेखाजी को उत्तरी विजय से बहुत धन प्राप्त हुआ। इससे इन्होंने अमरसर मे सुदृढ दुर्ग शिखर गढ[2] का निर्माण करवाया जो सामयिक

1 रावशेखा सुरजनसिंह, पृष्ठ ८२ माधोवंश प्रकाश, पृ ६१

2 शेखावाटी प्रकाश एवं माधोवंश प्रकाश के अनुसार बहलोल लोदी के किसी सेनापति ने वि स १५४० में शिखरगढ पर हमला किया था। दुर्ग के चारों ओर घेराडाल दिया गया। १८दिन तक शेखाजी व बहलोल की फौज का मुकाबला होता रहा। अचानक बहलोल को किसी अन्य महत्वपूर्ण हमले के लिए सेना की आवश्यकता पड़ी और उसने शिखरगढ आई हुई सेना को लौटने के लिए आदेश भेजा। बादशाही फौज दुर्ग का घेरा तोड़कर वापिस जाने लगी। वापिस जाती हुई बहलोल की फौज को शेखाजी की फौज ने खूब लूटा। इस आक्रमण को रावशेखा के लेखक, सुरजनसिंह जी शेखावत ने सही नहीं माना है। उनके अनुसार बहलोल के आतीयबन्धु पन्नी पठानों को रखने वाले शेखाजी पर बहलोल का आक्रमण उचित नहीं जान पड़ता दूसरे, बहलोल उस समय जौनपुर में उलझा हुआ था, उसे राजपूताने में सेना भेजने की फुरसत ही नहीं थी। यद्यपि बहलोल का तत्कालीन परिस्थितियों को देखते हुए आक्रमण असंभव लगता है परन्तु कभी असंभव परिस्थितियों में भी कोई कार्य संभव हो जाता है। शेखाजी की उन दिनों बहादुरी की चर्चा चारों ओर फैल गई थी तथा उनका घोड़ा हिसार की जड़ तक दौड़ चुका था। सम्भव है शेखाजी के बढते हुए प्रभाव को कम करने के लिए या अन्य किसी कारणवश सुल्तान ने एक सैनिक टुकड़ी को शिखरगढ़ पर आक्रमण करने भेज दी हो। पिछले शेखावत इतिहास लेखकों का वि स १५४० में हमले का होना, १८ दिन तक लड़ाई का चलना तथा आवश्यकता पड़ने पर

दृष्टि से बहुत महत्व का था। शेखावाटी प्रकाश के अनुसार इस दुर्ग का निर्माण वि स १५३४ ई स' १४७७ मे हुआ था।[1]

कौलवराज गौड (भूथरी)से युद्ध और विजय

कौलवराज गौड ने अपने नगर के समीप एक तालाव वनवाना आरम्भ किया। उसने अपने पहरेदारो को हुक्म दे रखा था कि जो भी इस रास्ते से गुजरे उससे चार-चार टोकरी मिट्टी की डलवाओ। पहरेदार आदेश का पालन करते हुए वलात् यात्रियो से मिट्टी डलवाया करते।

एक वार एक कछावा जाति के राजपूत से जो ससुराल से अपनी पत्नी सहित आरहा था। पहरेदारो ने रोक कर मिट्टी डालने को कहा। यह न्याय राजपूत के अनुकूल नही था, पर विवश होकर उसने अपनी पत्नी सहित दोनो के हिस्से की टोकरिया डालदी, किन्तु पहरेदारो ने कहा कि स्त्री को भी मिट्टी डालनी पडेगी। यह कहकर पहरेदार वैली के पास गये और उसका पर्दा हटाने लगे। यह देखकर राजपूत का खून खोल उठा, उसने झट तलवार पकडी और एक पहरेदार का सिर धड से अलग कर दिया। शेष पहरेदार राजपूत पर टूट पडे। राजपूत वीरोचित शौर्य के साथ लडता हुआ वीरगति को प्राप्त हुआ। क्षत्राणी के रोम रोम से सूर्य किरण सी सतीत्व की दीप्ति दमक रही थी। एक भी दुष्ट पास आने का साहस न कर सका। क्षत्राणी ने तालाब के निकट मृत पति का दाह कर्म किया और मुट्ठीभर मिट्टी अपने आचल

सुल्तान द्वारा फौज को वापिस बुलाना केवल कल्पना नहीं मानी जा सकती। अत यदि शिरसगढ पर यह हमला हुआ हो तो कोई असम्भव नहीं।

1 शेखावटी प्रकाश प्रथम खण्ड, अध्याय पाच, पृ ४

मे बांधकर शेखाजी के पास आई। उस समय शेखाजी की वीरता की दुंदुभी ढूंढाड़ प्रदेश मे बजरही थी। क्षत्राणी ने अपनी व्यथा शेखाजी को कह सुनाई। यह सुनकर शेखाजी कौलवराज का मस्तक धड़ से अलग कर देने के लिए व्यग्र हो गये। उनका क्षत्रित्व जागउठा। उन्होंने क्षत्राणी को विश्वास दिलाते हुए कहा कि कौलवराज का मस्तक लाकर प्रतिशोध की ज्वाला से धधकते हुए हृदय को शीतलता प्रदान करूँगा। शेखाजी ने उस वीरांगना को अंतःपुर मे भिजवादिया तथा स्वयं ३०० अश्वारोही और ६०शुतर सवार वीरों सहित गौडावाटी की ओर चल पडे।[1] सम्पूर्ण सेना वायु गति से भूथरी ग्राम के निकट पहुँच गई। शेखाजी ने सेना के दो भाग किये और तय किया कि एक सेना तालाब के सामने से होकर आये तथा दूसरा भाग तालाब के पीछे होकर। कौलवराज इस समय मद्यपान मे मस्त था। जब उसने रावशेखाजी के हाथ मे चमचमाती हुई तलवार देखी तो होश हिरण हो गये। वह वहा से नगर की ओर भाग गया पर काल से कोई कब तक आत्म रक्षा कर सकता है? शेखाजी ने पीछे घोडा दौडाया और समीप पहुँच कर बोले "तालाब पर टोकरी डालने आया हू"।

भूथरी की सेना और राव शेखाजी मे घमासान युद्ध हुआ। भूथरी के २०० अश्वारोही मारे गये और शेखाजी के ६० जवान खेत रहे। भूथरी पर शेखाजी का अधिकार हो गया। कौलराज का सिर काट कर अमरसर लाया गया और राजपुत्र की पत्नी को दिखाया गया। कटा हुआ सिर अमरसर के दरवाजे पर लटकाया गया। इससे गौड जाति मे बडी सन सनी फैलगई कि दरवाजे पर सिर लटकाकर शेखाजी ने समस्त गौड जाति का अपमान किया है। सारी गौड जाति शेखाजी

1 शेखवाटी प्रकाश पांचवा अध्याय, पृष्ठ ७

से रुष्ट हो गई ।

गौडो से युद्ध और विजय

शेखाजी से वदला लेने के लिए गौडो की भावना बहुत तीव्र हो उठी और वे पूर्ण ताकत के साथ शेखाजी से लडने को तयार हो गये। शेखाजी के साथ गौडो की ग्यारह लडाइया हुई। इन सभी युद्धो मे वीर शेखाजी विजयी हुए। शेखाजी की सभी युद्धो मे विजय होती देखकर गौड जाति और अधिक चिंतित हुई। अत सभी गौडो ने मिलकर घाटवा नामक स्थान पर शेखाजी से युद्ध करने की योजना बनाई। अपना पूरा व्यूह रचकर दूत के हाथ शेखाजी को लडने का सदेश भेजा[1]

पत्र पढते ही शेखाजी का वीरत्व जाग उठा उन्होने तुरत ५०० अश्वारोही व १०० सुतर सवार एकत्रित कर गौडो मे युद्ध करनेके लिए घाटवा की ओर चल दिये। उधर गौडो ने मोर्चा बदी कर रखी थी। शेखाजी शत्रुदल का व्यूह तोडकर घुस गये और आगी चमकती हुई तलवार से अरिदल का विनाश करने लगे। शेखाजी युद्ध करते हुये मारोठ के राव रिडमलजी से जा भिडे। शेखाजी ने वार किया, परन्तु रिडमलजी बच गये। कौलवराज के पुत्र द्वारा शेखाजी के पुत्र दुर्गाजी के मरण का समाचार सुनकर वीरवर शेखाजी के हृदय मे क्रोधाग्नि भडक उठी और तलवार के एक ही वार से कौलवराज के पुत्र मूलराज को मौत के घाट उतार दिया। दूसरा प्रहार रिडमलजी पर करने दौडे। रिडमलजी रणभूमि से भाग गये। इसी युद्ध मे शेखाजी के दूसरे पुत्र पूर्णजी ने भी वीर गति पाई। रण मे शेखाजी विजयी हुये। उनका विजय केतु लहराने लगा।

---

1 यह सदेश दोहे के रूप में आज भी जन जन के मुख से गाया जाता है।

"गौड़ बुलावे घाटवे, चढ आया सेखा।
थारा लस्कर मारणा, देखण अभलेखा॥"

राव शेखाजी के छोटे पुत्र रायमलजी सेना लेकर रलावता स्थान पर पहुँचे। इस समय शेखाजी के शरीर पर १६ घाव थे, किन्तु अब राव शेखाजी को अपनी मृत्यु करीब दिखाई देने लगी। उन्होंने गंगा जल पान किया और अपनी ढाल व तलवार रायमलजी को प्रदान करते हुए कहा 'अमरसर जाकर राज्य का प्रबंध करो। मुझे बुलावा आगया है। मैं जा रहा हूँ।' इसके उपरान्त वैसाख सुदि ३ वि १५४८ को वीरवर शेखाजी स्वर्ग सिधार गये।[1]

---

1. रावशेखा की मृत्यु सम्बंधी एक छप्पय केसरीसिंह समर में इस प्रकार है -

पनरासे चालीस, पाच ऊपर परवाणो।
सुक्ल पच्छ वैसाख, तीज सुर गुरु समजाणो॥
नगरघाटवे आय, गौड सेना बहु सज्जी।
चढे अमरसर नाथ, भेरि तामागल वज्जी॥
सत सठ वीर रण में पड़े, बहु भांति जुद्ध इणविध भयो।
प्रोहित जु संग मालिक कहूँ, राव सिखर सुर पुर गयो॥

(केसरी सिंह समर, पृ १४)

इस छप्पय अनुसार वैसाख, सुदी ३ वि स १५४५ को गुरुवार था परन्तु गणना करने पर इस दिन गुरुवार नहीं था। डा० रघुवीर सिंह जी, सीतामऊ के अनुसार इस दिन सोमवार था। वि स १५४४ में इसी दिन गुरुवार अवश्य था, परंतु वार मिल जाने से ही शेखा की मृत्यु वि स १५४४ में नहीं मान लेनी चाहिए। केसरीसिंह समर, शेखा जी की मृत्यु के करीब २०६ वर्ष बाद लिखा गया था। इतने समय बाद वार याद रहना बहुत कठिन है, जबकि संवत् याद रखना सरल है। इस कारण वार सम्बन्धी यह भूल प्रतीत होती है। दूसरे यहां की दंतकथा अनुसार शेखाजी का मरना और बीकानेर का बसना साथ साथ हुआ था। बीकानेर वैसाख सुदी वि स १५४५ में बसना आरम्भ हुआ था। केसरीसिंह समर के उपर्युक्त छप्पय का एक रूप लक्ष्मणसिंह जी अड़ूका के पास इस प्रकार प्राप्त हुआ है, जिसमें इस दिन सोमवार पाया जाता है।

रानियां

१ टाकण जी [1] नगरगढ के किल्हणजी टाक की पुत्री

२ तँवरजी- पाटण के राव गाहिडमल जी तँवर की पुत्री

३ तँवर जी- गावडी के पिचियाणजी तँवर की पुत्री

४ गौडजी- भूँथर के जादम जी गौड की पुत्री

५ चौहाण जी- चोमारा के राव श्योब्रह्म जी चौहान की पुत्री[2]

पुत्र

१ दुर्गाजी

राव शेखा जी की राणी टाकण के गर्भ से इनका जन्म हुआ था। ये शेखा के ज्येष्ठ पुत्र थे। मातृपक्ष के राजपूत वंश के नाम पर इनके वंशधर 'टकनेत शेखावत' कहलाये।[3] दुर्गाजी ने वि स १५४५ मे गौडो के विरुद्ध लडते हुए वीरगति प्राप्त की। शेखावाटी मे तिहावलो, बारवा, खडेनमण, बाजौर आदि गांव टकनेत शेखावतों के हैं।

पनरे सौ चालीस, पांच ऊपर परवानो।
सुक्ल पच्छ वैसाख, तीज तिथ साम बखानो।

इन सब बातो को देखते हुए मालूम होता है कि शेखाजी की मृत्यु वि स १५४५ में ही हुई थी।

1 टाकण जी धार्मिक प्रवृति वाली राणी थी। इन्होंने नाण में एक बावडी, मिल्कपुर में एक कुण्ड, राणा सागर होद व जगन्नाथ जी का मन्दिर बनवाया। इन्होंने ब्राह्मणों की बाइस पुत्रियों की शादियां भी की।

(श्रासलपुर के समलसिंह बडुवा की बही अनुसार)

2 शेखाजी के राजकंवर नाम की एक पुत्री थी, जिसका विवाह मेड़ता के दूदाजी के साथ हुआ था। इसके अतिरिक्त इनके परवत कंवर व माया कंवर नाम की दो पुत्रियां और थीं।

3 इनके एक पुत्र मानसिंह था तथा एक पुत्री रूपकंवर थी, जिसका विवाह (चुरुमण्डल का शोधपूर्ण इतिहास) के लेखक के अनुसार कांधल राठौर के साथ हुआ, परन्तु ऐतिहासिक घटनाओं पर विचार करने से मालूम होता है कि जब रूपकंवर १३ वर्ष की थी, तब कांधल जी साठ वर्ष से ऊपर थे। अतः यह विवाह समीचीन नहीं जान पडता।

२ रतना जी

इनके वशधर 'रतनावत शेखावत' कहलाते हैं।[1] बैराठ इर्दगिर्द रतनावतो के अनेक गाव हैं। इनके अलावा हरियाणा प्रान्त रतनावतो के सात गाव सोडी, सतनाली, जडवा, ढाणा, उरीका (राउ श्यामपुरा और सुहासड़ा हैं। इन गावो मे रतना जी के पौत्र दयालदा के वशधर है, जो 'दयालदासोत' कहलाते हैं।

३ भरत जी ४ तिलोकजी और ५ प्रतापजी-तीनो निस्सन्तान र

६ आभाजी ७ अचलाजी और ८ पूरणमलजी-इनके वशधर मिलकपु गाव मे बस गये। इसके बाद ज्यो ज्यो इनका वश बढता गया त्यो त्य ये अन्य गावो मे निवास करने लगे। मिलकपुर गाव के नाम से इनक सन्तान मिलकपुरिया (मुल्कपरिया) कही जाने लगी। झुंझुनू जिं मे बाढा की ढाणी, दण्डाली, हैजमपुरा के पास मुल्कपरिया की ढाणी आदि गावो मे मुल्कपरिया शेखावत बसते है।

९ रिडमलजी १० कुम्भाजी[2] ११ भारमलजी[3]

इन्होने अपना निवास स्थान खेजडोली गाव बनाया। खेजडोली गाव के नाम पर इनके वशधर 'खेजडोलिया शेखावत' कहलाय ये शेखावाटी के अनेको गावो मे बसते है। झुंझुनू जिले मे जयपहाडी खाजपुर पुराना, कालीपहाडी का बास आदि गावो मे 'खेजडोलिय शेखावत' बसते हैं।

१२ रायमलजी- इनका जीवन चरित आगे लिखा गया है।

---

1 इनके एक पुत्र अखयराज हुए तथा इनकी एक पुत्री लाछलदे का विवाह जोधपु के शासक मालदेव के साथ अनुमानत वि स १५८६ ८७ में हुआ। यह मालदे की पटराणी थी। इस राणी से राम नाम के एक पुत्र का जन्म वि स १५८८ में हुआ।

2 इनके तीन पुत्र रामचन्द्र, जयमल व जैतसी हुए।

3 इनके दो पुत्र बाघाजी व अचलाजी हुए। इनके बडे पुत्र बाघा के वशज 'बाघावत' कहलाते हैं।

२ राव रायमलजी (वि स १५४५-१५६४ ई स १४८८-१५३७)

वीरवर शेखाजी के बारहवें पुत्र रायमलजी शेखावाटी इतिहास के एक ऐसे शक्ति पु ज योद्धा थे, जिन्होंने केवल शेखावाटी ही नही, अपितु राजस्थान की राजनीतिक गति विधियो को काफी प्रभावित किया । एक ओर वे जितने रण निपुण थे दूसरी ओर उतने ही राजनीति सूझ-बूझ के धनी और समय के पारखी थे ।

जन्म

रायमलजी के जन्म के सम्बन्ध मे ठोस प्रमाणो के अभाव मे निश्चित रूप से कुछ नही कहा जा सकता, परन्तु उनके जीवन की ऐतिहासिक घटनाओं, पीढी दर पीढी चली आ रही दत कथाओ एव तर्कों के आधार पर अनुमानत इनका ज म वि स १५२६-२७ के आस पास होना चाहिए ।[1]

---

1 केसरीसिंह समर में रायमलजी की मृत्यु अठासी वर्ष, नो माह एव सात दिन की अवस्था में होना लिखा है । यथा -

"बरस अठासी नव दीह सात दुय जाम ।
घड़ो चार गये तन तजहि गो वैकुण्ठाधाम ॥
(के स पृ १६)

रायमलजी की मृत्यु वि स १५६४ में हुइ थी । इस हिसाब से इनका ज म वि स १५०६ में होना चाहिए, परन्तु यह युक्ति सगत नहीं है, क्योंकि शेखाजी का ज म वि स १४९० में हुआ था । अत इस समय शेखाजी की अवस्था १६ वर्ष की थी । रायमलजी शेखाजी के १२ पुत्रो में सबसे छोटे थे । १६ वर्ष की अवस्था में १२ पुत्रों का होना सही नहीं माना जा सकता । अत केसरीसिंह समर में दी गई रायमलजी की उमर युक्ति सगत नहीं है ।

अब प्रश्न यह उठता है तो फिर रायमलजी का ज म कब हुआ। शेखाजी का एक विवाह चौवारा के चौहान श्योब्रह्मजी की पुत्री से हुआ और उसी राणी से रायमल जी का ज म हुआ था । इस विवाह के सम्ब ध में कहा जाता है कि शेखाजी की बहादुरी पर प्रसन्न होकर श्योब्रह्मजी की पुत्री ने शेखाजी से शादी

मारोठ पति के साथ सन्धि

संवत् १५४५ मे रायमलजी गद्दी पर विराजे। उस समय आमेर के राजा चन्द्रसेनजी थे। चन्द्रसेनजी को शेखाजी की मृत्यु पर बहुत दु ख हुआ। उन्होने राव रायमलजी को लिखा कि शेखाजी की मृत्यु गौडो के साथ युद्ध करने से हुई है। हम गौडो से शेखाजी की मृत्यु का बदला लेंगे। मातमपुरसी के समय राजकुमार पृथ्वीराज व नरुजी के पुत्र लालाजी भी आये।

करने का हठ किया। शेखाजी के अधिक पुत्र होने के कारण इयोब्रह्म जी अपनी पुत्री की शादी इनसे नहीं करना चाहते थ, परन्तु पुत्री के हठ के सामने पिता को झुकना पड़ा और इस शर्त पर शेखाजी के साथ अपनी पुत्री का विवाह कर दिया कि उसके दौहित्र को ही राव गद्दी प्राप्त होगी। शेखाजी के ज्येष्ठ पुत्र दुर्गा जी ने इस शर्त को स्वीकार किया। इस दन्त कथा पर हम विचार करें तो मालूम होता है कि शेखाजी ने वि स १५१६ तक आस पास के सांखलों, चौहानो एवं टाकों को पराजित कर अपने अधिकार में कर लिया था तथा १५२५ वि मे शेखाजी ने आमेर जैसे राज्य को भी पराजित कर दिया तो उनकी बहादुरी की दु दुभी चारों ओर बजने लगी थी। सम्भवत इसी समय चौहान पुत्री शेखाजी की बहादुरी पर प्रसन्न हुई होगी और शादी का हठ किया होगा। इसी समय दुर्गाजी भी करीब २० साल के हो गये थे और अपना हित अहित समझने लगे थे तभी पितृभक्ति के वश होकर उन्होंने राज्य छोड़ने की शर्त को माना होगा। रायमलजी का पहला विवाह मारोठ के गौड़ों के यहां होना बताया जाता है। यह विवाह वि स १५४५ में हुआ था। अगर रायमलजी का जन्म १५०६ में होता तो क्या ३६ वर्ष की अवस्था तक कुंवारे ही बैठे रहते? मेरी समझ मे यह विवाह करीब रायमलजी की १८ वर्ष की अवस्था में हुआ होगा। इन सभी बातों को देखते हुए अनुमान होता है कि शेखाजी का चौबारा के चौहानों के यहा विवाह वि स १५२५ में हुआ होगा और रायमलजी का जन्म वि स १५२६ २७ में युक्ति संगत होना चाहिए।

चन्द्रसेनजी का इस प्रकार सहयोग पाने पर रायमलजी गौडों से वदला लेने के लिए तैयार हो गये। मारोठ राव रिडमलजी को जब यह मालूम हुआ कि समस्त कच्छवाहे सामूहिक रूपसे गौडो पर आक्रमण की तयारी कर रहे हैं, तो वे वडे घबराये और उन्होंने रायमलजी के पास अमरसर आकर संधि के लिए प्रस्ताव रखा कि 'आप वदला लेने का विचार न करें। मैं अपनी कन्या आपको देता हूँ और साथ ही भूंथरी के ५१ ग्राम आपको दहेज के रूप मे देता हूँ। आप मेरी इस प्रार्थना को स्वीकार कर क्षमा प्रदान करें। रायमलजी ने मारोठ पति की यह प्रार्थना चन्द्रसेनजी को पहुँचाई। चन्द्रसेनजी ने अपनी स्वीकृति देदी। मारोठ पति और रायमलजी की संधि हो गई। काफी समय से चली आ रही गौडो व कच्छवाहो की दुश्मनी समाप्त हुई।

अलफखा का वध

शेखावाटी मे स्थित फतेहपुर के निकट एक अलफखा नामक मुसलमान रहता था उस के गांव के पास से एक मार्ग निकलता था। अल्फखा एक चरित्रहीन व्यक्ति था। जो भी स्त्री उस रास्ते से गुजरती थी, अल्फखा उसका मुँह देखे बिना नही जाने देता था। एक वार एक तँवर राजपूत जैसाजी अपनी पत्नी को लेकर उस मार्ग से गुजर रहा था। जैसाजी की पत्नी की वैली आगे आगे चल रही थी और जैसाजी उससे काफी दूर पीछे चल रहे थे। अलफखा के गांव के पास ज्योंही वैली पहुँची, उस ने कई व्यक्तियों के साथ वैली को रोक लिया और उस राजपूतानी का मुखमण्डल - दर्शन की जोर जबरदस्ती करने लगा। वीर राजपूतानी ने सतीत्व भंग होने की आशंका से अपनी कटारी से आत्म हत्या कर ली।

इतने मे ही तँवर जैसाजी पहुँच गये। अपनी पत्नी की यह दशा देख कर वे वहुत क्रुद्ध हुये। इन्होने म्यान से तलवार खीची और दुश्मन पर

टूट पडे। अकेले जैसाजी ने १३ दुश्मनो को मौत के घाट उतारा, तत्पश्चात वीरोचित शौर्य से जूझते हुए वीरगति को प्राप्त हुए।

बैली के साथ एक नाई था। वह किसी प्रकार इस सकट से बचकर मारोठ पहुँचा। रायमलजी उस समय अपने ससुराल मे आये हुए थे। रायमलजी ने जब यह समाचार सुना तो २०० व्यक्तियो को लेकर वे अल्फखा से लडने के लिए चलदिये। दिन भर चलते चलते घोडे थक गये थे। रायमलजी अपने सवारो के साथ पहुँचे। सयोग वश अल्फखा शिकार खेलने आया हुआ था। दोनो ओर से युद्ध ठन गया। लडाई मे दोनो पक्षो के घोडे समाप्त हो गये। अल्फखा कायर की भाति दौडता हुआ धूल के कोट के निकट पहुँचा। रायमलजी ने उसे कोट मे प्रविष्ठ नही होने दिया। उन्होने भाले से ऐसा वार किया कि अल्फखा के प्राण पखेरु उड गये। अल्फखा के सवारो ने रायमलजी का पीछा किया, किन्तु यहाँ रायमलजी ने नीति से काम लिया। अल्फखा के सवारो को भ्रम मे डालकर वे दूसरे मार्ग चले गये और दुश्मन के सवार मुँह ताकते ही रह गये।

हसनखा सूरी का सेवा मे रहना

मध्यकालीन भारत का प्रसिद्ध बादशाह शेरशाह सूरी का पिता हसनखा सूरी, जिसका पिता इब्राहिमखा अपनी जन्म भूमि अफगानिस्तान को छोडकर बहलोल लोदी के समय मे अनुमानत वि स १५३६ ई स १४८२ मे, भारत आया था, उसकी मृत्युपरान्त हसनखा सूरी रायमलजी की सेना मे भर्ती हो गया था और उनकी सेवा करने लगा[1] ठोस प्रमाणो के अभाव मे यह तो नही कहा जा सकता कि वह

1 आइने अकबरी (अबुल फजल) अनुवादक, ब्लाकमैन (अग्रेजी) पृ ४६७ मआसिरुल उमरा, पृष्ठ ३५१ शेरशाह और उस का समय का० कानूनगो पृ ८

रायमलजी की सेवा में कितने समय तक रहा, परन्तु फिर भी अनुमान के आधार पर कहा जा सकता है कि हसनखा सूरी वि स १५४५ से १५५१ तक रायमल जी की सेवा मे रहा होगा।[1]

---

1 डा का कानूनगो लिखित 'शेरशाह एण्ड हिज टाइम्स' के हिंदी अनुवाद पृ १२ पर लिखा है कि बहलोल के काल मे हसन के पिता की मृत्यु होगई। तब उसने रायमल की नौकरी छोडदी होगी, परन्तु बहलोल की मत्यु जुलाई १४८६ ई वि स १५४६ मे होगई थी और रायमल जी अप्रेल १५८८ वि १५४५ मे गद्दी पर बठे थ। हसन के पिता की मत्यु बहलोल की मत्यु से कुछ महिनो पहले बनाई जाती है। इस हिसाब से हसनखा रायमल जी की सेवा मे अधिक से अधिक एक साल के लगभग रह सकता है, परन्तु दूसरी ओर कानूनगो इसी पुस्तक मे पृ ८ पर लिखते हैं कि हसन ने रायमल जी की बहुत समय तक सेवा की। इसके अतिरिक्त व यह भी लिखते हैं कि रायमल जी के पास रहते रहते हसन ने अपनी प्रथम शादी की जिससे ई सन् १५८६ म शेरशाह सूरी का जन्म हुआ। मालूम होता है कि कानूनगो साहब को शेखावतो के इतिहास का ज्ञान न होने के कारण ऐसा लिख डाला है। १४८६ ई म रायमल जी गद्दी पर नहीं थे। इस कारण न तो रायमलजी के पास रहते रहते हसन का प्रथम विवाह हो सकता है और न शेरशाह का जन्म १४८६ ई म हो सकता है। निश्चय ही रायमल जी की सेवा से पूर्व ही हसन का विवाह हो चुका था। हसनखा वि स १५४५ ई स १४८८ के लगभग रायमल जी की सेवा म आया होगा और वि म १५५१ ई स १४९४ म जब मीर्जापुर की सीमा पर सिकन्दर ने हुसनशाह शरकी को हराया तो हुसनशाह शरकी बगाल के सुल्तान हुसनशाह के पास भाग गया। इसी समय बगाल के सुल्तान हुसनशाह व सिकन्दर के बीच एक सीमा सन्धि हो गई बरह नामक कस्बा दिल्ली और बगाल की सीमा मानी गई। इसी समय दिल्ली का हाकिम जलालखा सारगखानी था। उसने पूर्ण शान्ति कायम रखी। कानूनगो

थे। इनके नेतृत्व मे बाबर के विरुद्ध १७८ राजा और राव अपनी २ सेनाओ के साथ फतेहपुर सीकरी के पास खानवा के मैदान मे आ डटे थे। इसी मैदान मे भारत के भाग्य का निर्णय होने वाला था। १७ मार्च, १५२७ वि स १५८४ के दिन देश की रक्षार्थ लडने वाले बहादुरो का मुकाबिल बाबर के साथ हुआ। देश की रक्षार्थ लडे जाने वाले इस युद्ध मे अमरसर के शासक रायमलजी भी अपनी सेना को लेकर गये[1] और इस युद्ध मे लड कर अमरसर का नाम उज्जवल किया था, परन्तु देश का दुर्भाग्य था कि इस युद्ध मे राजपूतो द्वारा अपूर्व शौर्य दिखलाने के बाद भी आग उगलने वाली बाबर की तोपो के कारण उस की ही विजय हुई और देश पुन गुलामी की जजीरो मे जकड गया।

हिन्दाल का शिखरगढ पर आक्रमण

बाबर की मृत्यु के बाद उसका पुत्र हुमायूँ गद्दी पर बैठा और हुमायूँ के भाई हिन्दाल को मेवात की जागीर मिली।[2] वि स १५९० ई सन् १५३३ मे उसने अमरसर पर चढाई करदी। रायमल से कर मागा, किन्तु रायमलजी ने कर देने से इन्कार कर दिया। इस पर हिन्दाल ने उनके प्रसिद्धगढ शिखरगढ पर आक्रमण कर दिया। रायमल जी ने गढ मे सम्पूर्ण सामरिक सामग्री इकट्ठी करली थी। आमेर से पृथ्वीराज के पुत्र पूर्णमल भी रायमलजी की सहायता के लिये आये। शेखावतो ने बहादुरी के साथ युद्ध किया। पूर्णमल जी इस युद्ध मे अपूर्व शौर्य से लडे किन्तु वे माघ सुदि ५ वि स १५९० ई सन् १५३३ मे भीषण युद्ध करते हुये वीरगति को प्राप्त हुये।[3] हिन्दाल की सेना के सब प्रयत्न असफल हो गये और इधर रायमलजी की सेना की काफी हानि

1 राजपूताने का इतिहास भाग ३ (जयपुर राज्य) ले गहिलोत

2 बादशाह हुमायूँ ब्रजरत्नदास पृ २१

हुई। अत हिंदाल दण्ड स्वरूप कुछ लेकर वापिस चला गया।[1]

मालदेव के साथ युद्ध

वि स १५८९ मे राव मालदेवजी जोधपुर के सिंहासन पर विराजे। इस समय दिल्ली के सिंहासन पर मुगल सम्राट हुँमायूँ का शासन था। राजा मालदेव का मारोठ के साथ कोई विवाद था। इस कारण उन्होने मारोठ को अपने तीर का निशाना बनाया। मारोठ पति ने राव रायमलजी को अपनी सहायता का निमत्रण दिया। रायमलजी के पहुँचने से पूव ही युद्ध आरम्भ हो गया और राव मालदेव के सम्मुख गौड टिक न सके और वे इस युद्ध मे पराजित होने की स्थिति मे थे। इतने मे ही राव रायमल रण भूमि मे पहुँच गये।[2] लडाई फिर विकराल रूप धारण करने लगी। राव मालदेव को विजय पराजय मे बदलती दिखाई दी, क्योकि राव रायमल ने घमासान युद्ध आरम्भ कर दिया था। दोनो पक्षो के कितने ही वीर मारे गये। राजा मालदेव राव रायमल के घोडो से घिर गये थे। रायमल ने अपने सैनिको से कहा कि राव मालदेव पर कोई शस्त्र न चलावे और युद्ध करते हुए स्वय राव मालदेव के पास पहुँच गये। राव रायमल ने अमल की मनुहार की और युद्ध विराम हुआ। मालदेव ने अपनी पुत्री का तिलक(सगाई)रायमलजी के ज्येष्ठ पौत्र भवर लुणकर्ण के साथ कर सधि की।

---

1 आमेरि धणी थाहवि अचल्ल
मुगले मारि पूरणमल्ल ॥
सेखावत वहता मारि सण्ड।
दलिया खड्ग ह्रैक लिया दण्ड ॥
राव जइतसी रौ छन्द(रावशेखा पृ १६६)

2 जयपुर व अलवर राज्य का इतिहास गहिलोत, पृ १८४

वि स० १५६३ के लगभग वीरमदेवजी ने बोली और बरवाडा के सोलंकियो पर हमला किया और इन दोनो स्थानो को जीत लिया। सोलंकियो को जीतने मे रायमलजी ने वीरमदेव जी की सहायता की थी। ऐसा लगता है कि इसी समय रायमलजी ने सोलंकियो से नरेना छीन लिया और अपने राज्य मे मिला लिया।

आमेर के सागा की मदद करना

वि स १५६४ में आमेर की गद्दी पर रतनसिह बैठे। पृथ्वीराज के पुत्र सागाजी, जैतसी (बीकानेर) की सहायता लेकर रतनसिह पर चढाई की। सागाजी ने रायमलजी की सहायता भी ली। इन्होंने सागाजी की सहायता की। रायमलजी ने निज प्रभाव से आमेर के राजा रतनसिह से सागाजी को कुछ गाव दिलवाये। सागाजी ने अपने नाम से सागानेर बसाया।[1] इसी समय रायमलजी न आमेर के कुछ गावो पर भी अपना अधिकार कर लिया था।

रायमलजी ने साभर परगने के कुछ गाव दबालिये थे और सांभर भील के कुछ भाग पर भी इनका अधिकार था।[2] इस प्रकार रायमलजी ने रावशेखा द्वारा स्थापित राज्य का विस्तार किया। अन्त समय तक उनके अधिकार मे ५५५ गांव थे।

---

1 OBE भाग १, पृ १२४ दयालदास री ख्यात भाग २ पृ १० (शा शे पृ ४४)

2 रावशेखा, पृ० १४१

तपोधन जोर दिये तरवार।
करी हद साभर व टियक्यार॥
सपेखिय तेज डर सब काय।
सदा सवलों बंट उन्वर होय॥
बटाई साभर यो बरवीर।
नरापति वश चढ़ायो नीर॥

वीरमदेवजी मेडता ने एक बार अजमेर पर कब्जा कर लिया। मालदेवजी जोधपुर ने जेताजी व कु पाजी के सेनापतित्व मे वीरमदेवजी से अजमेर छीन लिया। वीरमदेव डीडवाना गये पर वहा से भी इनको मालदेव से पराजित होकर भागना पडा तब वे रायमल की शरण आये। वे वि स १५९२-९३ मे बारह महीने नराणा गाव मे रहे। मालदेव की हिम्मत रायमलजी से युद्ध करने की न हुई। इससे ज्ञात होता है कि उस समय रायमलजी की शक्ति बहुत बढी चढी थी।

इस प्रकार ४६ वप राज्य करने के उपरान्त राव रायमलजी का सवत् १५९४ सन् १५३७ ई मे देहावसान हो गया। राव रायमलजी के ७ रानिया व ९ पुत्र थे।

राणिया

१ गौडजी- मारोठ के राव रिडमलजी की पुत्री
२ सोलकीजी- टोडा के राव मोकलजी की पुत्री
३ निरवाणजी- खडेला के राव घीरसिहजी की पुत्री
४ निरवाणजी- छापोली के राव आसलजी की पुत्री
५ जोधीजी सीमाउ के राव नाहरसिह की पुत्री
६ टाकणजी कुचोरा के राव सुरजनजी की पुत्री
७ भटियाणीजी - खेजडली के राव जगतसिहजी की पुत्री

पुत्र

१ सूजाजी अमरसर की गद्दी पर बैठे।
२ तेजसी रायमल के दूसरे पुत्र थे। इनको नारायणपुर सहित १२ गाव मिले। इनके वशधर 'तेजसी का शेखावत' कहलाते हैं।
३ सहसमल जी राव रायमल के तीसरे पुत्र थे। इनको १२ ग्राम सहित

सांईवाड प्राप्त हुआ। इनके वंशधर 'सहसमल जी का शेखावत' कहलाते हैं। इनके एक पुत्री थी, जिसका नाम मदालसादेवी था। उसका विवाह पत्ताजी चुण्डावत के साथ हुआ। वि स १६२४ ई स १५६७ ६८ मे अकबर ने चितोड पर आक्रमण किया। इस आक्रमण मे पत्ताजी वीरगति को प्राप्त हुए। चित्तोड के किले मे जौहर हुआ जो 'तीसरा शाका' के नाम से प्रसिद्ध है। इस जौहर की पवित्र अग्नि मे मदालसादेवी ने अपने आपको समर्पित कर अमरसर का नाम रोशन किया था।

४ जगमाल जी को हमीरपुर (जिला अलवर) १२ ग्रामो सहित मिला। इनके पौत्र दूदा के नाम पर इनके वंशधर 'दूदावत' कहलाते हैं।

५ सीहा
७ सुरतान } -इनका वृतांत उपलब्ध नही है।

३ राव सूजाजी (वि स १५९४-१६०४ ई स १५३७ १५४७)

राव सूजाजी रायमल जी के ज्येष्ठ पुत्र थे। वि स १५९४ में वे अमरसर की गद्दी पर बैठे।

किसी कारण वश सूजाजी का एक पुत्र रामजी गौडो के हाथो से मारा गया था। इस कारण सूजाजी ने गौडो को दण्ड देने के लिए विजयगढ पर आक्रमण कर दिया और केशरीसिंह गौड को मारकर वहा के गौडो को नष्ट कर दिया।[1] क्यामखा रासा से विदित होता है

---

1 रावशखा पृ १८७

इस युद्ध सम्बन्धी एक डिंगल गीत इस प्रकार है।

गोहिक दोय अमर मे गाजा मारण कोई कर मरोड।
सधारिया भला राव सूज गढ गिरधर हूंता सहगौड ॥ १
कूरम कर बल कोइ कीजो, ठाकर वेगा जाय थयो।
वस पनी ठाहरनिज वसुधा, गौड वस निरवस गया ॥ २

कि चित्तौड (मेवाड) के राणा ने नागौर पर हमला किया। गागा जोधपुर, जैतसी बीकानेर, पथ्वीराज आमेर तथा सूजाजी अमरसर सेना लेकर आये थे।[1] फतेहपुर का नवाव नाहरखा दल बल सहित नागौर की रक्षार्थ आ पहुँचा और मेवाड के राणा की इस सेना को पराजित कर दिया। राणा पहाडो मे भाग गये।[2] क्यामखा रासा के कवि जान ने इस घटना का कोई समय नही दिया है। अगर ऐतिहासिक घटनाओ के आधार पर विचार किया जाय तो यह घटना समीचीन प्रतीत नही होती है, क्योकि फतेहपुर के नवाव नाहरखा का शासन काल वि स १५७० - १६०२ तक, गागा जोधपुर का वि १५७२ से १५८६ तक, जैतसी बीकानेर का वशाख वि स १५८३ - १५९८ तक, पृथ्वी-

केहर सिर जमरुप कोपियो दल भेला लीधा जमदूत।
कठ विजगढ कठ कबीलो ग्मिव कठ कठ रजपूत॥
वाल बर लड़ बराई जिसडा सू भरिया जगत्र।
सुणियो अग नही साभलस्या सूरजमल सारिसो सत्र॥ ४
वाप न कोई बर बेटा व साचा आरँभ ओ म सज।
दुनिया सीस ठाकुर डर्रूं वडा वडी चो म्याव वर्जे॥

1 आये गागा जतसी सूजा प्रिथीराज।
और भौमिया निकट के, सब आये करि साज॥ ४९२॥
(क्यामखा रासा पृ ५० स जिनविजय मुनि)

2. राना बरयो पहाड मे फिरी सन नागौर।
गाव लये सब लूटि क बची न कोऊ ठौर॥ ६०३॥
नागौरी नगरी तकी बीकै बीकानेर।
सूज ताक्यो अमरसर आवर आवेर॥ ६११॥
(क्यामखा रासा पृ ५१ स जिन विजय मुनि)

राज आमेर का वि १५६० से कार्तिक १५८४ तक था, अमरसर के सूजाजी इस समय गद्दी पर नही थे। जगमाल पवार वि १५८८मे अजमेर के दुर्गाध्यक्ष थे। ये सब शासक एक ही समय मे नही थे। इस कारण यह घटना इतिहास सम्मत नही है।

शेरशाह द्वारा हुमायूँ के हार जाने के कारण हुमायूँ भारत से पलायन कर रहा था। उस समय सूजाजी ने द्रव्य देकर हुमायूँ की मदद की।[1] शेरशाह को जब यह ज्ञात हुआ तो वह इस बात को सहन नही कर सका और जब वि स १६०० ई स १५४४ मे उसने मालदेव पर हमला किया तो इसी अभियान के बीच शेरशाह ने झुंझुनू एव फतेहपुर के आस पास पडाव डाले और वहा से चलकर सुमेल के युद्ध मे मालदेव को पराजित किया। इसी समय उसने मारोठ आदि स्थानो पर थाने कायम किये, लगता है कि इसी समय सूजाजी जो मालदेव के पक्ष मे थे, को अधीनता स्वीकार करने की बात कही होगी। सूजाजी जिसके पिता के पास उसका पिता नौकरी कर चुका था, शेरशाह की अधीनता स्वीकार करना स्वाभिमान के विरुद्ध था। अत सूजाजी इन्कार हो गये।[3] इस लिए शेरशाह ने इनसे अमरसर छीन कर रासा टाक,

---

1 नन्ददान रामप्याल कविया कृत रायसल जससरोज' मे लिखा है –

"उन विपति माहि मदतिउदार ।
अरु दीह राव सूज अपार ॥
सेरखा हूँत छत्र सुजान ।
पुनि भेजी द्रव्य पूरन प्रमान ॥,,

2 राजस्थान का इतिहास, प्रथम भाग गोपी नाथ शर्मा पृ ३२१

3 नम्यो नही पतिसाह सू सूरजमाल दवग ।

(केसरीसिंह समर पृ १६)

जो इनके के विरोध मे था, उसको दे दिया ।[1] सूजाजी बानसूर बसई मे जाकर रहने लगे, जिस पर इन्होंने अपने पिता के जीवन काल मे ही अधिकार कर लिया था । इसी बसई मे ईश्वराधना करते हुए वि स १६०४ ई १५४७ मे इनकी मृत्यु हो गई । बानसूर बसई मे इन की यादगार मे इनके पुत्रो ने छतरी बनवाई ।

राणिया

Shekhawats and their Lands के अनुसार इनके आठ राणिया थी।

१ जादव जी—राजा पूरणमल की पुत्री
२ चौहान जी—भाभरु के राव प्रताप सिह जी की पुत्री
३ बडगूजर जी—केलासर के विक्रमसिह जी की पुत्री
४ राठौडी जी—ईडर के नाहरसिह जी की पुत्री
५ टाकण जी—नागोर के चादसिह जी की पुत्री
६ जोधी जी—भाकी के मेघसिह जी की पुत्री
७ मेडतनी जी—रेन के रायमल जी की पुत्री
८ गौड जी—मारोठ के जोधसिह जी की पुत्री

इनके एक राठौडी राणी रतनकुवर और थी,जो जोधपुर के राजा सूजाजी के पुत्र वाघा जी की पुत्री थी ।

पुत्र

१ लूणकरणजी

राव सूजाजी के सबसे बडे पुत्र थे। राव सूजाजी से जब अमरसर छिन गया था, तब इन्होंने अपने अन्य भाई रायसलजी आदि को लेकर

---

1 अमरसर खालस कीह मान ॥
जो भदति वाज को मरम जान ।
(रायसल जस सराज)

रात्रि के समय जब रासा टाक किसी वैश्या से रगरेलिया कर रहा था, अमरसर पर चढ गये और रासा टाक को मारकर अपने पिता के राज्य को प्राप्त कर लिया था। ये अकबर के दरबार मे रहते थे। अकबर ने 'रायराया' का खिताब देकर इनको सम्मानित किया तथा दो हजार सवार का मनसब दिया। वि स १६२८ ई स १५७१ मे साभर के फौजदार रहे। वि स १६३३ ई स १५७६ मे हल्दीघाटी का युद्ध और डूंगरपुर का युद्ध हुआ। इन युद्धो मे इन्होंने भी अकबर की तरफ से भाग लिया था। इनका विवाह मालदेव जोधपुर की पुत्री हसा बाई से हुआ था। इनके नौ पुत्र थे - १ मनोहरदास[1] २ नाथा ३ नरसिंहदास ४ भगवानदास ५ सावलदास ६ किशनदास ७ दुल्हेसी ८ ईश्वरदास ९ कल्याण दास। लूणकर्ण जी के वशधर 'लूणावत' कहलाते हैं। राव मनोहरदास जी के वशधरो के शाहपुरा, चदवा, निथारा तातेडा, सुराणा, बीदाडा, देववध बरकी, पालडी आदि गाव है। सावलदास जी के वशधर पचार, हस्तेडा आदि, नरसिंहदास जी के दोराला आदि, भगवानदास जी के जाहोता आदि तथा नाथाजी के तालवा आदि गावो मे वसते हैं।

२ रायसल जी

इनका जीवन चरित आगे लिखा गया है।

---

1 मनोहरदास जी अपने पिता के साथ अकबर के दरबार मे रहते थे। वि स १६३४ ई स १५७७ म अकबर ने इनके नाम पर मनोहरपुर वसाया। वि स १६६५ ई स १६०८ मे जहागीर के समय मे ये भटनेर (हनुमानगढ) के दुर्गाध्यक्ष थे। इसी वर्ष इन्होने यहा के किले का एक द्वार बनवाया, जो मनोहरपोल कहलाता है। ये उस समय के अच्छे कवि फारसी के विद्वान व अच्छे सैनिक थे। इनकी मृत्यु वि स १६७२ मे हुई। (जहागीर नामा–बृजरत्नदास पृ ५४)

अध्याय ८

राजा रायसल दरबारी (खण्डेला)
(वि स १५९४[१६७८]¹ ई स १५३७ १६२१)

राजा रायसल दरबारी ने अपने बाहुबल और चातुर्य से छोटी सी जागीर से विशाल राज्य की स्थापना की, किन्तु जहां इनके पूर्वज शेखाजी, रायमलजी व सूजाजी ने अनेको सघर्ष सहकर, अनेको दुश्मनो से लडकर अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा की, वहा राजा रायसल वर्षो से चली आ रही स्वतन्त्रता को कायम नहीं रख सके। इन्होने समय की गति को देखते हुए शाही सेना स्वीकार की। अकबर की सेना मे रहते हुए इन्होने अनेक युद्धो की विकट परिस्थितियों में अपने अपूर्व शौर्य का परिचय दिया।

जन्म

रायसलजी के जन्म के सम्बन्ध मे साधिकार कुछ नही कहा जा सकता। कहा जाता है कि वि स १६११ ई स १५५४ मे जब इन्हे लाम्या की जागीर मिला, तब ये १५ वर्ष के थे। इस हिसाब से इनका जन्म अनुमानत वि स १५९६ ई स १५३९ मे माना जा सकता है।

अमरसर पर पुन अधिकार

इनके पिता राव सूजाजी से शेरशाह ने वि स १६०० के लगभग अमरसर छीनकर राखा टांक को दे दिया था। शेरशाह की मत्युपरान्त उसका पुत्र सलीमशाह, इस्लामशाह के नाम से गद्दी पर बैठा। इस बादशाह की मृत्यु वि स १६१० अक्टूबर, १५५३ई मे हुई। इसके बाद गद्दी पर बैठने वाला बादशाह आदिलशाह अयोग्य शासक था। इसके

1 बडे कोष्ठक म दिया गया सवत अनुमानित हैं।

काल मे सूर साम्राज्य शीघ्रता से पतन की ओर जाने लगा। इस पतनोमुख काल मे रायसलजी व इनके बडे भाई लूणकरणजी ने अनुमानत वि स १६११ ई स १५५४ मे रात्रि के समय राखा टाक (अमरसर) पर हमला कर दिया। रायसल ने अपनी तलवार से राखा टाक को मौत के घाट उतार दिया और अमरसर पर अधिकार कर लिया। लूणकरणजी अमरसर के शासक हुए और इसी वर्ष रायसलजी को लाम्यां की जागीर मिली।

देवीदास का सेवा मे आना

रायसलजी के बडे भाई लूणकरण जी थे। इन के यहाँ एक विद्वान मत्री रहते थे, जिनका नाम देवीदास था। एक बार की बात है कि मत्री देवीदास ने राव लूणकरण जी को उत्साहित करने की दृष्टि से कहा कि पिता की सम्पति पर अधिकार करने की अपेक्षा अपने ही बल और पराक्रम से सौभाग्य का उपाजन मनुष्य का कर्त्तव्य है।[1] इस पर लूणकरणजी नाराज हो गये, उन्होंने मत्री देवीदास को निकाल दिया और कहा मेरे भ्राता रायसल के पास जाकर इस बात की परीक्षा कीजिए।

मत्री देवीदास इनके अनुज रायसलजी के पास चला गया। यद्यपि इनके पास छोटी जागीर थी फिर भी इन्होंने देवीदास का हार्दिक स्वागत् और सम्मान किया तथा इन्हे अपने पास रख लिया। वास्तव मे देवीदास जैसे नर रत्न को पाकर राव रायसलजी का भाग्य सितारा चमक उठा।

आगरा जाना

देवीदास ने रायसलजी को प्रसिद्धि प्राप्त करने हेतु प्रोत्साहित किया। उस समय भारत पर सम्राट अकबर शासन करता था। वह

---

1 राजस्थान का इतिहास टाड अनु बलदेवप्रसाद पृ ६६६

सन् १५५६ वि सवत् १६१३ मे गद्दी पर बैठा था और इसे ५-६ वर्ष शासन करते हुए हो गये थे। मत्री देवीदास ने इन्हें सम्राट अकबर के पास जाने की सलाह दी। उस समय रायसलजी के पास न तो पर्याप्त घोडे ही थे और न सवार ही। ऐसे समय मे रेवासा के चन्देल शासक रासोजी बडे सहायक सिद्ध हुए और रायसलजी के मागने पर १५० घोडे प्रदान किये। इसके बाद अनुमानत सवत् १६१९' मे रायसलजी मत्री देवीदास के साथ अकबर के पास गये।

खैराबाद, सरनाल, अहमदाबाद व पाटन के युद्ध मे

बादशाह अकबर का एक युद्ध खैराबाद नामक स्थान पर वि स १६२२ ई स १५६५ मे हुआ। इस युद्ध मे अपनी छोटी सी राजपूती सेना के साथ रायसलजी बादशाह के पक्ष मे लडे।

वि स १६२९ ई स १५७२ मे अकबर ने गुजरात को अपने राज्य मे मिलाने के लिए अभियान शुरु किया। इस अभियान के अतगत इब्राहीम मिर्जा के विरुद्ध अकबर का युद्ध १२ दि १५७२ ई वि स १६२९ मे सरनाल नामक स्थान पर हुआ। इस युद्ध मे दुश्मन का खतरनाक प्रहार बादशाह अकबर पर हुआ। इस समय रायसलजी अकबर के साथ छाया के समान चल रहे थे। इन्होने इस खतरनाक प्रहार को अपनी सेल (भाले) से रोका और दुश्मन का काम तमाम कर दिया।[1]

1 तेन साह गुजरात धरालेवा पग धारे,
हैं व पति हाँदवों सूर बीरा हकारे।
तिहि ठाम रायासाल रनढाहि कु जरम्माल।
परि साह ऊपर भीर तब सेल गहिवरवीर ॥ ८६ ॥
अरिह्यो ताही सेल भिर करे साह उवेन।
करि फत अकबर साह। चढि चले अति बजाह ॥ ८७ ॥
(वे समर पृ २० व २२)



राजा रायसल दरबारी (खण्डेला)

इस प्रकार रायसल जी ने बादशाह के प्राणो की रक्षा की। इस युद्ध के कुछ समय बाद ही वि स १६३० मे अकबर के अहमदाबाद व पाटण पर भी धावे हुए। इन धावो मे भी रायसल जी अकबर के साथ रहे और राजपूती शौर्य का परिचय दिया।[1]

मनसब प्राप्त करना

कहा जाता है कि सरनाल युद्ध की भीषण परिस्थितियो मे अकबर नही पहिचान सका कि युद्ध मे उसकी प्राण रक्षा करने वाला कौन वीर था? इस कारण अकबर ने उस वीर की खोज के लिए एक सभा का आयोजन किया और उसने हुक्म दिया कि युद्ध मे जाने वाले सभी लोग अपनी वह वेशभूषा पहिनकर उसके सामने आयें, जो वे युद्ध मे पहिनकर गये थे। रण सज्जा से सुशोभित सिपाही एव सेना धीश बादशाह के समुख हो कर गुजरे। रायसलजी ज्योहि बादशाह के सामने से गुजरे, बादशाह ने उन्हे पहिचान लिया और बातचीत की।[2] अब बादशाह को मालूम हो गया कि यही वह शेखावाटी का कछवाह रायसल है, जिसने उसकी प्राण रक्षा की थी, तो इनको १२५० का मनसब तथा राजा का खिताब दिया।[3] राजा रायसल के बडे भाई

---

1 अकबर नामा अबुल फजल पृ ३३३ ३८२, ४१६
मआसिरुल उमरा अनु० बजरत्नदास, पृ ३५२

2 राजस्थान इतिहास भाग २ टाड अनु प बलदेवप्रसाद पृ ७००
Shekhawats & their Lands page 21

3 (अ) गुजरात घर वस कीह रयसाल को बहु नेह।
अप्पे सु मुनसब बाज, कीर थापियो महाराज ॥ ८८ ॥(क स पृ २२

(ब) कनल टाड ने रायसल द्वारा अफगाना के साथ हुए युद्ध म मुगल सेनापति के प्राण बचाने पर अकबर द्वारा रायसल दरबारी की पदवी

लूणकरण, जो उस समय वहा उपस्थित थे, रायसल से बहुत नाराज हुए कि वह उनकी आज्ञा बिना आगरा क्यो आगया ? परन्तु इससे रायसलजी की कोई हानि नहीं हुई।

हल्दीघाटी और काबुल के युद्ध मे

हल्दीघाटी का युद्ध जो १८ जून सन् १५७६ वि स १६३३ मे हुआ, उसमे भी मानसिंह के साथ रहकर राणा प्रताप के विरुद्ध युद्ध किया।[1] इस युद्धमे ग्वालियर के तँवर राजा रामसिंह और उनके कुमार राणा प्रताप के पक्ष मे लडते हुए रायसल जी के हाथो मारे गये।[2] जुलाई सन् १५८१ वि स १६३८ मे अकबर ने काबुल पर हमला किया था। उस युद्ध मे भी रायसालजी ने बहादुरी से युद्ध किया था।[3] उनकी वीरता का वर्णन अकबर नामा मे किया गया है।

अकबर के शाही हरम मे

रायसलजी धीरे धीरे अकबर के विश्वास पात्र बन गये। इनकी नियुक्ति जनाना डयोढी मे करदी गई। यह जोखिम भरा काम था परन्तु इन्होने निपुणता के साथ किया। इनके मत्री देवीदास चतुर व बुद्धिमान व्यक्ति थे। अपने स्वामी की मान-मर्यादा रखना वे अपना कर्त्तव्य समझते थे। उन्होने रायसलजी के लिए पीतल का एक ऐसा कच्छा बनवाया जो ताले की तरह चावी लगने पर खुलता था व बद होता था। रायसलजी जब हरम की डयूटी पर जाते देवीदास वह कच्छा रायसलजी को पहिना कर चाबी अपने पास रख लेते थे।

देना लिखा है परन्तु केसरीसिंह समर टाड से करीब १३५ वर्ष पूर्व का लिखा होने के कारण अधिक सही मालूम होता है।

(स) तारीखे हिन्दुस्ता जकाउला पृ ६६०

1 राजस्थान का इतिहास भाग २ टाड अनु प बलदेव प्रसाद पृ ७०१

2 सीकर का इतिहास झाबरमल शर्मा पृ २३

3 राजस्थान का इतिहास भाग २ टॉड अनु प बलदेव प्रसाद, पृ ७०१

कहा जाता है कि एक बार जब रायसल जी स्नान कर रहे थे तब बादशाह अकबर की निगाह रायसलजी के कच्छे पर पड गई और रायसलजी से इसके बारे मे पूछा। इन्होंने कहा, हुजूर ! आपके हरम के कतव्य का मैं मर्यादा व ब्रह्मचय के साथ पालन कर सकू, इसके लिए मेरे मन्त्री न ऐसा कच्छा बनवाया है जो चाबी लगने से खुलता है और इसकी चाबी मेरे मन्त्री के पास ही रहती है। जब ड्यूटी से मुक्त होता हू तो वे कच्छे को खोल देते हैं।' कहा जाता है कि बादशाह इस बात से इतना प्रसन हुआ कि इसने हरम का सारा काय इनको सौप दिया और हरम का सम्पूण काम इस राजा की दढ सम्मति पर होने लगा।[1] सम्भवत इसी समय रायसल जी को खण्डेला व रेवासा की जागीर दी गई।

खण्डेला व रेवासा पर अधिकर

खण्डेला[2] में इस समय निरवाण (चौहन) शासक शासन करता था। अकबर ने राजा रायसलजी को खण्डेला की जागीर दी थी। रायसल जी ने वि स १६३५ में खण्डेला के निरवाण राजा से युद्ध किया तथा खण्डेला पर अधिकार कर लिया। इसी समय इन्होंने खण्डेला राजा की लडकी से विवाह किया। निरबाणो ने युद्ध जारी रखा। इन से रायसलजी का अन्तिम युद्ध वि स १६३८ ई स १५८१ मे पचलगी नामक स्थान पर हुआ। इस युद्ध मे निरवाणो की शक्ति नष्ट हो गई। इसी वष रेवासा पर हमला हुआ, रायसल की विजय हुई और रेवासा पर इनका अधिकार हो गया।

1 मआसिरुल उमरा पृ ३५२
2 खण्डला खडगल तँवर ने बसाया था (नणसी री ख्यात, भाग १ पृ ३२० स साकरिया

वृंदावन मे गोपीनाथ जी का मन्दिर बनवाना

श्री कृष्ण की क्रीडास्थली और हिंदुओं का पवित्र तीर्थ स्थान वृंदावन मे वि की सोलहवी शताब्दी के प्रथम चरण मे गोस्वामी मधु पण्डिताचार्य निवास करते थे। इनको गोपीनाथ जी की मूर्ति वशीतट (यमुना के किनारे) प्राप्त हुई। माध्वगौड सम्प्रदाय के अनुसार श्रीकृष्ण के प्रपौत्र वृजनाभ ने भगवान के तीन विग्रह बनाये थे, गोविन्ददेव गोपीनाथ और मदनमोहन। कहा जाता है कि मधु पण्डिताचार्य को जो गोपीनाथ जी की मूर्ति प्राप्त हुई, इन तीनो मे से एक थी। गोविन्द टीले से जो गोविन्द देव जी की मूर्ति प्राप्त हुई वहा मानसिंहजी (प्रथम) आमेर ने मन्दिर बनवाया और रायसलजी जो मधु पण्डिताचार्य के शिष्य थे वृंदावन मे वैशाख शुक्ला तीज, वि स १६४० को[1] लालपत्थर का एक सुंदर मन्दिर बनवाया और उसमे गोपीनाथ की मूर्ति स्थापित की।[2] माह सुदि २ वि स १६४२ को गोपीनाथ जी के भोग वास्ते सेवली गाव की तेरह हजार बीघा भूमि भेंट की, जिसका पट्टा ठिकाना मण्डावा

---

1 शिवलाल वडवा की वही झुंझुनू (राव शेखा पृ २७)

2 औरंगजेब ने जब ब्रजमण्डल के मन्दिर नष्ट करने का आदेश दिया तब गोपीनाथजी के गुसाई गोपीनाथ की मूर्ति को लेकर चले। रायसल जी के वशधर शेखावतों की सहायता से वे झुंझुनू आना चाहते थे, परन्तु जयपुर महाराजा ने उनको रोक लिया और गोपीनाथ जी की मूर्ति को जोरावर सिंहजी के दरवाजे के बाहर एक मकान मे प्रतिष्ठित करदी। जयपुर बस जाने के बाद जयपुर के तत्कालीन मुसाहिब खुशालीराम बोहरा की हवेली मे इस मूर्ति की स्थापना करदी गई। हवेली मन्दिर बन गया और अब तक भगवान गोपीनाथ यही विराजते हैं। शेखावतो और जयपुर राज्य की तरफ से ४५ गाव भगवान को भेंट हुए जिनकी सवा लाख रुपये वार्षिक आय बताई गई है।

(राजस्थान पत्रिका ३ व ४ फरवरी १९७५ व रावशेखा पृ २७)

मे है।[1] इन्होने लुहार्गल मे भी एक गोपीनाथ जी का मन्दिरबनवाया।

भटनेर विजय

भटनेर को आजकल हनुमानगढ कहते हैं। यह बीकानेर डिवीजन का एक ऐतिहासिक स्थल है। यहा एक प्रसिद्ध किला राजा भाटी ने बनवाया था और उसी के नाम पर इस स्थल का नाम भटनेर पडा। दयालदास की ख्यात[2] से विदित होता है कि वि स १६५४ ई १५९७ मे सिरसा के आस पास जोहिए, भाट्टी आदि उदण्ड लोगो को दबाने के लिए अकबर ने जाबदीनखा के नेतृत्व मे सेना भेजी। शाही सेना ने जोहियो और भाटियो का दमन किया। इसी समय रायसिह बीकानेर का पुत्र दलपत सिंह जो पिता का विद्रोही था, उसने जाबदीनखा पर हमला किया और उसे हरा दिया। बादशाह अकबर को जब दलपतसिंह के इस काय का पता चला तो उसने दलपतसिह को पकडने के लिए रायसलजी, मनोहरदास जी मनोहरपुर, परशुराम रायसलोत आदि को भेजा। रायसलजी जी की सेना ने सिरसा से दलपत सिंह को भगा दिया तो वे भटनेर के दुग मे आ गये और शाही सेना से युद्ध करने तयार हो गये। शाही सेना और दलपतसिह के मध्य लडाई हुई। इस

---

1 श्रीरामजी

मोहर श्रीगोपीनाथजी

सिद्ध श्री राम श्री महाराज श्री राजा रायसलजी बचनात मौजा सबली ठाकुर जी श्री बिराजमान श्री बिन्दराबन म बिराज ताका भोग म भेंट करी नीव सीव सुदा १३००० अकेही तेरह हजार बीघा

मिती माह सुदी २ सवत १६४२

2 बीकानेर राज्य का इतिहास ओझा पृ १०५

लडाई मे रायसलजी ने दलपतसिंह को पकड लिया और भटनेर पर रायसलजी का अधिकार हो गया।[1]

इन युद्धो के अतिरिक्त राजा रायसल दरबारी ने अन्य युद्धो मे भी भाग लिया और उनमे विजय प्राप्त की। सीकर के इतिहास मे लिखा है कि रायसल ने गढ गागरन और नागौर को भी फतह किया।[2] कुछ पुस्तको मे इनका ५२ युद्धो मे विजयी होने का लेख मिलता है।[3]

---

1 रायसलजी ने इस युद्ध म जो बहादुरी दिखाई वह केसरीसिंह समर, पृ २३ २४ म इस प्रकार वर्णित है —

विदा हव चले रायसाल अभग।
किते देस जाह जुरे आप जग।
चढे वाजि राज अवाज दमाम
परी रोर गाम अरी धाम धाम ।। ६१ ।।
लगे जाय भटनेर कोट अलाट
मरे आखिवाते गिरे खाग चोट।
मण्ड वीर सथ सुहथ गुरज,
वहे आवध आनि भान्न बुरज ।। ६२ ।।
कमधा अरु कूरमा सार वग्गे
मन्नू वदरां लोहन्नू लक लग्गें।
गह्यो राव राठौर हो जोर भारी
रुक्म रत्थ बध्या जसे मुरारी ।। ६३ ।।
पकरि राव कमधज्ज बहुरि कुंजर पर लीन्हो
बांधि हाथ नरनाथ साह मुख अग्गे कीन्हौं ।।
बडे वाजि गजराज साह तिन बार सु अप्पे।
अरु खंजर जहुंहार बहुत मनुहार समप्पे ।। ६४ ।।

2 सीकर का इतिहास झाबरमल शर्मा, पृ २३

3 उपयुक्त पृ २३

गुरुवार मगसिर सुदि ५ वि स १६६१ को इन्होंने रेवासा के आदिनाथ मंदिर पर एक शिलालेख लगवाया। वि स १६६४ मे इनके मंत्री देवीदास की मृत्यु हो गई। तबकाते अकबरी से ज्ञात होता है कि हि १००१ ई १५९३ मे रायसल जी दो हजारी मनसबदार थे।[1]

सलीम (जहांगीर) को गद्दी दिलवाने मे सहायता करना

वि स १६६२ अक्टूबर, ई स १६०५ ई मे बादशाह अकबर की मृत्यु हो गई। गद्दी के लिए सलीम और उसके पुत्र खुसरु मे संघर्ष हुआ। राजा मानसिंह जी (आमेर), जिनका दरबार मे बडा दबदबा था, खुसरु को गद्दी पर बैठाना चाहते थे। दूसरा दल जो सलीम को गद्दी पर बैठाना चाहता था, उस दल मे रामदास कछवाहा [2] व राजा रायसल जी प्रमुख थे। रामदास कछवाहा व रायसल जी ने अपने सिपाही शाही राजकोष की रक्षा के लिए तैनात कर दिये। सलीम को गद्दी पर बैठाने की सारी योजना रायसल जी की हवेली मे ही की गई। सलमी को षड्यन्त्र से अवगत भी इन्होंने करवाया। न्याय सलीम के पक्ष मे था। इसलिए मानसिंह जी व खुसरु को भागना पडा और सलीम रायसल जी आदि की सहायता से ३ नवम्बर, ई स १६०५ वि स १६६२ को जहांगीर के नाम से गद्दी पर बैठा। जहांगीर ने इसी अवसर पर इनको झण्डा व डंका भेंट किया एवं साथ ही ३००० का मनसब प्रदान

1 मआसिरुल उमरा बजरत्नदास, पृ ३५२

2 रामदास कच्छवाह - ये उरदत कच्छवाह के पुत्र थे। पहले ये रायसल दरबारी के नौकर रहे थे। धीरे धीरे रामदास की उन्नति होती गई और ये रायसल जी की तरह ही अकबर के दरबारी बन गये। मआसिरुल उमरा के अनुवादक बृजरत्नदास ने लिखा है कि वि स १६६८ ई स १६११ मे जहांगीर ने इन्हें राजा की पदवी दी। यह राजा बंगस मे वि स १६७० ई स १६१३ मे मृत्यु को प्राप्त हुआ। (मआसिरुल उमरा पृ ३५१)

किया गया।[1] जहांगीर ने वि स १६६२ मगसिर मे मेवाड के अमरसिंह जी के विरुद्ध परवेज के नेतृत्व में सेना भेजी। रायसल जो इस समय परवेज के साथ थे। वि स १६६५ मे खानखाना की नियुक्ति दक्षिण मे हुई। बादशाह ने इनकी भी नियुक्ति खानखाना के साथ की।

रायसल के अन्तिम दिन

राजा रायसल की मृत्यु का समय, स्थान व कारण का कोई ठोस प्रमाण उपलब्ध नही है। महामहोपाध्याय पंडित हरिप्रसाद शास्त्री एम एस सी आई ई लिखते हैं।

'Raja Raisal accompanied Muhammad Badsha hi to Kabul and died at the Khyber pass in a war

किन्तु यह सत्य नही है, क्योंकि रायसल दरबारी जहांगीर के समय मे थे और जहांगीर द्वारा वि स १६६२ मे इनको तीन हजार का मनसब प्रदान किया गया था। खैबर का युद्ध वि स १६४२ मे हुआ था। इसके अतिरिक्त रायसल दरबारी के रेवासा के मन्दिर से एक शिलालेख प्राप्त हुआ है जो सिद्ध करता है कि वि १६६१ तक राजा रायसल दरबारी जीवित थे।

अत कहा जा सकता है कि वि स १६६१–६२ तक रायसल जी की मृत्यु नही हुई थी। तीन हजार का मनसब प्रदान करने के बाद

---

1 I presented Raisal Darbari with flags from this consideration that he was always present at court and belong to the shekh awat Rajputs and was confidential servant of my father received the rank of 3000 (Tuzuk i Jahangiri, Shekhawats an d their Lands, page 22)
तारीखे हिंदुस्ता जिल्द VI जकाउला पृ २१
तुजुक जहांगीरी राजसव व बेवरीज, पृ ३२

जहांगीर ने इन्हें दक्षिण में भेजा था। इसके बाद ये वहीं रहे और दक्षिण में ही इनकी मृत्यु हुई।

आइने अकबरी में लिखा है

'During the reign of Jahangir he(Raja Raisal)was promoted served in Dakkhin He died there at an advanced age"[1]

इनके पुत्र गिरधर जी को अकबर ने वि स १६७६ म राजा की पदवी दी थी। सम्भवत इसी अवसर से कुछ पूर्व रायसल जी की मृत्यु दक्षिण मे वि म १६७८-७६ मे मानी जा सकती है।

राजा रायसल दरबारी के जीवन पर दृष्टि डालने से मालूम पडता है कि ये बहुत बडे योद्धा, स्वाभिमानी और क्षत्रियोचित गुण सम्पन्न राजा थे। इनकी दानवीरता की कवियों ने काफी प्रशंसा की है। कहते है कि जिस लडाई मे वे विजयी होते वहीं ब्राह्मणो को भूमि दान दिया करते थे। रायसल जी द्वारा दिये गये भूमि के पट्टों को बादशाह मान्यता देता था, वह कभी इंकार नही होता था।[2]

रानियां

राजा रायसल जी के कितनी राणियां थी ? साधिकार कुछ नहीं कहा जा सकता। खण्डेला इतिहास के अनुसार इनके ११ राणियां थी और शेखावाटी प्रकाश के अनुसार इनके छ राणियां थी। मैं यहाँ इनकी

---

1 Ain i Akabri by Abulfazal Allami translated from the orginal persian by Mr H Blochman M A Page 419

2 रायसाल न रखियो दत बिण खाली दीह।
पट्टा जिका री पातस्या लोप न सक्विया लीह ॥

किया गया।[1] जहांगीर ने वि स १६६२ मगसिर में मेवाड के अमरसिंह जी के विरुद्ध परवेज के नेतृत्व मे सेना भेजी। रायसल जो इस समय पर वेज के साथ थे। वि स १६६५ मे खानखाना की नियुक्ति दक्षिण म हुई। बादशाह ने इनकी भी नियुक्ति खानखाना के साथ की।

रायसल के अन्तिम दिन

राजा रायसल की मृत्यु का समय, स्थान व कारण का कोई ठोस प्रमाण उपलब्ध नही है। महामहोपाध्याय पडित हरिप्रसाद शास्त्री एम एस सी आई ई लिखते हैं।

'Raja Raisal accompanied Muhammad Badsha hi to Kabul and died at the Khyber pass in a war

किन्तु यह सत्य नही है, क्योंकि रायसल दरबारी जहांगीर के समय में थे और जहांगीर द्वारा वि स १६६२ मे इनको तीन हजार का मनसब प्रदान किया गया था। खैबर का युद्ध वि स १६४२ में हुआ था। इसके अतिरिक्त रायसल दरबारी के रेवासा के मन्दिर से एक शिलालेख प्राप्त हुआ है, जो सिद्ध करता है कि वि १६६१ तक राजा रायसल दरबारी जीवित थे।

अत कहा जा सकता है कि वि स १६६१-६२ तक रायसल जी की मृत्यु नही हुई थी। तीन हजार का मनसब प्रदान करने के बाद

---

1 I presented Raisal Darbari with flags from this consideration that he was always present at court and belong to the shekhawat Rajputs and was confidential servant of my father received the rank of 3000 (Tuzuk i Jahangiri, Shekhawats and their Lands page 22)
तारीखे हिन्दुस्ता, जिल्द VI जकाउला पृ २१
तुजुक जहांगीरी राजसव व बेवरीज, पृ ३२

जहागीर ने इन्हे दक्षिण मे भेजा था। इसके बाद ये वही रहे और दक्षिण मे ही इनकी मृत्यु हुई।

आइने अकबरी मे लिखा है

During the reign of Jahangir he(Raja Raisal)was promoted served in Dakkhin He died there at an advanced age"[1]

इनके पुत्र गिरधर जी को अकबर ने वि स १६७६ म राजा की पदवी दी थी। सम्भवत इसी अवसर से कुछ पूर्व रायसल जी की मृत्यु दक्षिण मे वि स १६७८-७६ मे मानी जा सकती है।

राजा रायसल दरबारी के जीवन पर दृष्टि डालने से मालूम पड़ता है कि ये बहुत बडे योद्धा, स्वाभिमानी और क्षत्रियोचित गुण सम्पन्न राजा थे। इनकी दानवीरता की कवियो ने काफी प्रशसा की है। कहते है कि जिस लडाई मे वे विजयी होते वही ब्राह्मणो को भूमि दान दिया करते थे। रायसल जी द्वारा दिये गये भूमि के पट्टो को बादशाह मान्यता देता था, वह कभी इन्कार नही होता था।[2]

राणिया

राजा रायसल जी के कितनी राणिया थी ? साधिकार कुछ नही कहा जा सकता। खण्डेला इतिहास के अनुसार इनके ११ राणिया थी और शेखावाटी प्रकाश के अनुसार इनके छ राणिया थी। मैं यहा इनकी

1 Ain i Akabri by Abulfazal Allami translated from the orginal persian by Mr H Blochman M A Page 419

2 रायसाल न रखियो, दत बिण खाली दीह।
पट्टा जिका री पातस्या लोप न सक्यिा लाह ।।

उन छ राणियो के नाम अ कित करता हू, जो मुझे सही जान पडती हैं।

१ वडगूजरजी—देवता के राव लखधीरसिंह की पुत्री।
२ राठौडीजी-मेडता के राजा जयमल के भाई जगमाल जी की पुत्री।
३ निरवाणजी—खण्डेला के निरवाण राजा की पुत्री
४ सोनगरी जी[1]—ईडर के सोनगरा चौहान की पुत्री।
५ राठौडी जी—मेडता के विठलदास जयमलोत की पुत्री
६ चौहान जी—नीमराणा के सागरभान जी की पुत्री

पुत्र

१ लाडाजी (लाडखान)

ये रायसल जी के ज्येष्ठ पुत्र थे। ये अपने पिता के साथ शाही दरबार मे भी आते जाते थे। अकबर ने इनका प्यार का नाम लाडखान रखा था। रायसलजी की मृत्यु के कुछ समय उपरान्त इन्होने खण्डेला छोड दिया और लोहागल मे जाकर रहने लगे। यहा इन्होने वराह भगवान का मन्दिर बनवाया। ये अपने जीवन के अ तिम समय मे अनुमानत वि स १६७८ ई स १६२१ मे वृन्दावन चले गये और वहीं इसी वर्ष इनका देहान्त होगया। इनके वंशधर लाडखानी शेखावत' कहलाते हैं। लाडखान जी के ११ पुत्र थे १ कल्याण सिंह (निस्सन्तान)२ सामोसिंह ३ सुन्दरदास ४ केशोदास(निस्सतान)५ जोधसिंह (निस्सतान) ७ वृन्दावन दास (निस्सतान) ८ आसकरण ६ जगरूप १० केशरीसिंह और ११ हरिसिंह

1 यह सोनगरी राणी खण्डेला म प्रविष्ट नहीं हुई। खण्डेला के बाहर ही इन्होने बाग लगवाया, महल बनवाये एव एक सुन्दर बावडी का निर्माण करवाया जिसे सोनगरी राणी की बावडी कहते हैं।

माधोसिंह पिता की गद्दी के मालिक हुए । राजा रायसलजी जब दक्षिण मे थे, माधोसिंह ने बादशाह के विरुद्ध बगावत की और खण्डार दुर्ग पर कब्जा कर लिया ।[1] रायसलजी के मन्त्री मथुरादास बगाली ने पुन अपने मालिक की भूमि को कब्जे मे किया । अनुमानत वि स १६६८ ई स १६४१ मे माधोसिंह मारोठ के सल्ला राजावत के हाथ मारे गये ।[2] इनके वशधरो के गौरया, खोरोडी, भिलाल, मोटलास, गोगावास, राजपुरा, कारगा, घाटवा, दौलतपुरा, भामावास, खटावदा, (बूदी), बीडोली, लाम्यॉ, खाचरियावास[3] गुलियास, सिघासन, दवला मलखेडा, खुडी, काटिया, बूली तिलोटी, स्वरूपदेसर आदि गाव, सुदर दास जी के ठाकरतास, सुदरासन आदि गाव (मारवाड) मे, आसकरण जी के भाग्दवा, भीमोद, दयालपुरा, (मारवाड) मण्डेत्री, मलखेडा, हीरावास, गोवर्धन पुरा, भीमो, कारगा आदि गाव शेखावाटी मे, जगरूप जी के निमास आदि गाव, केशरी सिंह के सावनोद, चचीवाद, खुडी, निराघन, खाट् आदि गाव व हरिसिंह के ढीगपुर, लाम्या उजीयावास रोलाना, खोरा, बाला पुरा, बुचासी, तुरकियास, गडरी, लोनीयावास आदि गाव हैं ।

---

1 मआसिरुल उमरा–बृजरत्नदास पृ ३५१

2 (अ) नैणसी री ख्यात भाग २ स 'ओभा पृ ३७

(ब) S & T L Page 47

3 लाडखानियो का मुख्य ठिकाना खाचरियावास था । यहा का वशक्रम इस प्रकार है । १ मोधसिंह २ सूरसिंह ३ अजबसिंह ४ फतेहसिंह ५ गुमानसिंह ६ दुल्हेसिंह ७ शिवदानसिंह ८ रामसिंह ९ चतरशाल सिंह १० विजयसिंह ११ गोविन्दसिंह १२ कल्याणसिंह १३ सुरेन्द्रसिंह

२ त्रिमलराव जी

वि स १६३० मे ई स १६७३ मे अकबर ने गुजरात पर हमला किया। इसी दौरान अहमदाबाद की लडाई मे त्रिमल जी ने बादशाह अकबर के साथ रहकर राजपूती बहादुरी का परिचय दिया, जिसके फलस्वरूप बादशाह ने इनको 'राव' का खिताब व नागौर की जागीर दी। इसलिए इन के वशधर 'रावजी का शेखावत' कहलाते हैं। सलीम और खुसरके मध्य जब गद्दी के लिए सघर्ष हुआ तब त्रिमलराव जी ने खुसरु का पक्ष लिया। सलीम के बादशाह बन जाने पर अनुमानत वि १६६२ मे उसने नागौर की जागीर इनसे छीनली। लगभग इसी समय इनका देहात हुआ। नणसी की ख्यात के अनुसार इनके गगाराम बद्रीदास दो पुत्र थे तथा दो पुत्र उदयकरण व पूरणमल खवास से थे।[1] वि स १६६८ ई स १६११ मे इनकी पुत्री का विवाह राजा सूरसिंह जोधपुर के साथ खण्डेला मे हुआ।[2] सूरसिंह जी की मत्यु भादवा सुदी ९ वि स १६७६=७ दिस १६१९ को दक्षिण मे हुई,[3] तब यह शेखावत राणी सती हुई।[4]

पिता की गद्दी गगाराम जी को मिली। बद्रीदास को नागवा मिला। गगाराम जी के वशधरो के दूजोद अनोख गोनाटी, सेवद सीकर[5] सीवो, गारोदा, मोलीवासी, श्यामगढ, बठोठ पाटोदा, सरवडी, दीपपुरा, कूदण, नेछवा आदि गाव हैं। बीकानेर डिवीजन मे दुलरासर आदि गावो मे भी रावजी के बसते हैं।

---

1 नणसी री ख्यात भाग २ पृ ३७
2 नणसी री ख्यात भाग २ स गो श हो ओझा पृ ३७
3 राजपूताने का इतिहास 'जोधपुर राज्य का इतिहास प्रथम भाग ओझा पृ ३८२
4 नणसी री ख्यात भाग २ स ओझा पृ ३७
5 त्रिमल जी के वशधरो का प्रमुख ठिकाना सीकर था। सीकर का वशक्रम इस

३ भोजराज जी-

इनका जीवन चरित आगे लिखा गया है।

४ परसराम जी-

ये रायसल जी की बडगूजर राणी के पुत्र थे। नणसी की ख्यात के अनुसार ये राजा रायसल जी के चतुथ पुत्र थे। अन्य भाइयो की तरह ये भी अपने पिता के साथ बादशाही दरबार मे रहते थे। वि स १६५४ ई स १५९७ मे भटनेर के युद्ध मे अपने पिता के साथ थे। परसराम के छ पुत्र वठलदास, सुरताण, सबलसी, तिलोकसी, बलराम और मदनसिंह थे।[1] परसराम जी के वशधर 'परसराम जी का शेखावत' कहलाते हैं।

५ हरिराम जी-

ये रायसल जी की निरवाण राणी के पुत्र थे।[2] इनके वशधर 'हरिराम जी का शेखावत' कहलाते हैं। इनके छ पुत्र थे-हृदयराम, चतरसी, फतहसिंह, राजसिंह, सगरामसिंह व श्यामसिंह। हरिरामजी के वशधर मऊ, मुण्डरु, नागल, बागरास, लसाडा नाथूसर, आबास, दादिया जेठी आदि गावो मे वसते हैं।

६ तेजसी(ताजखान)-

ये रायसल जी की बडगूजर राणी से पैदा हुए थे।[3] इनके तीन पुत्र प्रयाग दास, कीर्तसिंह और मुक्तमणि थे। इनके पुत्र प्रयाग दास जोधपुर

प्रकार है। गगाराम जी, श्यामराम जी, जसवन्तसिंह, दौलतसिंह (सीकर), शिवसिंह चादसिंह, देवीसिंह, लक्ष्मणसिंह राम प्रतापसिंह, भरहसिंह, माधवसिंह कल्याणसिंह और विक्रमसिंह

1 नणसी री ख्यात भाग २ पृ ३७

2 „ „ स ओझा पृ ३९

3 „ „ , पृ ३९

राजा की सेना में थे। मेडता मे ढाहस गाव का इनके पट्टा था।[1] तेजसी का और अधिक वर्तात उपलब्ध नही है।

७ गिरधरजी

राजा रायसलजी की राठौडी राणी जो मेडता के विठलदास जयमलोत की पुत्री थी, के गर्भ से इनका जन्म हुआ। पिता के जीवन काल मे ये जहागीर के दरबार में रहते थे। इन्होंने जहांगीर की सेना के साथ कई युद्धो मे भाग लिया था। वि स १६७२ ई स १६१५ में बादशाह द्वारा इन्हे ८०० जात तथा ८०० सवार का मनसब दिया गया। वि स १६७५ ई स १६१८ मे इनका मनसब बढाकर १००० जात तथा ८०० सवार का कर दिया गया। वि म १६७८ ई स १६२१ मे इनका मनसब फिर बढाया गया तथा १२०० जात व ६०० सवार का मनसब कर दिया गया। पिता की मृत्युपरात वि स १६७६ ई स १६२२ में इन्हें राजा की पदवी दी गई तथा दो हजार जात व पन्द्रहसौ सवार का मनसबदार बना दिया गया। ये पिता की मृत्यु के बाद खण्डेला के राजा बने। वि स १६८० ई. स १६२३ म ये शाहजादा परवेज के साथ दक्षिण में थे। इसी वष सैयदो के साथ झगडे मे गिरधर जी मारे गये। इसी झगडे मे इनके साथ केशोदास[2] टकनेत व राणा भार मलोत के पुत्र गिरधर दोनो मारे गये।[3] गिरधर जी के आठ पुत्र द्वारिकादास, हरीसी, सलेदीसी, विजयसिंह, किशनसिंह, गोकुल गोरधन और सूरजसिंह थे। गिरधरजी के वशज 'गिरधरजी का शेखावत' कहलाते हैं। द्वारिकादास जी के वशधरो के खण्डेला,[4] रलावता, क्नोदा बनसेरा,

1 नणसी री ख्यात भाग २, पृ ३६

2 दुर्गादास शेखावत के पुत्र मानसिंह के पौत्र नारायणदास गू [illegible] का पुत्र था।

बाणी भोडकी, सोहोट, दाता, खूड, गुरारा, निम्बाहेडा, लडाणा, मिलो बपुरा, मुजास, गोवाटी, इटावा, धीराजपुरा, गजसिहपुरा, ठिकरिया, फतेहपुरा, रोयल, जाजोद, बस्री, पतमाना, अभयपुरा, माडा, हासरोली जालूद नाथपुरा, राणोली, पिपराली, तापीपलिया, शाहपुरा, दादिया, कोछोट, आदि गाव, किसनसिह के बरकाडा, बावडी, पलसाना आदि गाव, सलेदी सिह के सलेदीपुरा आदि गाव, सूरसिह के माण्डोता आदि गाव हैं। बीकानेर डिवीजन में पूनलसर आसलसर, काकलासर आदि गावो मे भी गिरधर जी के वशज बसते हैं।

८ बाबू ६ विहारी- पहाड के पास दोनो शराव पीये हुए हाथी पर सैर कर रहे थे। अचानक हाथी गिर गया और ये मर गये। इनके कोई सतान नही थी।

१० वीरभान – ये पिता के साथ अक्वर के दरबार मे रहते थे। वि स १६४२ ई म १५८५ मे बीरवल के साथ अफगानो से युद्ध करने गये। वही बीरवल के साथ खैबर के दर्रे मे लडते हुए मारे गये। इनके कोई सतान नही थी।

११ कुशलजी इनके तीन पुत्र करमसेन, नरसिंहदास व उग्रसेन थे।

१२ दयालदास–यह रायसल जी की खवास का पुत्र था। इसके कोई सतान नही थी।

बहादुरसिह केसरीसिह, उदयसिह (बडा पाना) सवाईसिह, व दावन दास, गोविन्दसिह नरसिहदास, अभयसिह, किशनसिह, कुशालसिह फतहसिह आनन्दसिह सगतसिह हम्मीरसिह प्रतापसिह और रामसिह। छोटापाना फतह-सिह, धीरसिह गजसिह इन्द्रसिह प्रतापसिह, लक्ष्मणसिह, अखयसिह जसवन्तसिह पदमसिह रणजीत सिह सज्जनसिह जयसिह सग्रामसिह और नारायण सिह।

अध्याय ९

राव भोजराज (उदयपुर)

(वि स १६७८-१६९७ ई स १६२१-१६३६)[1]

राव भोजराज जी वीर रायसल दरबारी के पुत्र थे। ये बाल्यावस्था से ही बडे बुद्धिमान थे। अपने पिता के शासन मे अल्पावस्था मे ही आप खण्डेला का राज्यकार्य देखते थे। ये अकबर के दरबार मे भी आगरा अपने पिता के साथ रहा करते थे। यही कारण था कि उन्हे अल्पावस्था मे ही राजकार्य का अनुभव हो गया।

कहा जाता है कि एक बार बादशाही बेगमात ख्वाजा मुइनुद्दीन चिश्ती के दर्शनार्थ अजमेर जा रही थी। राव भोजराज बेगमात के साथ थे। पाच डाकू बादशाही डेरो मे डाका डालने के लिए घुस आये। राव भोजराज ने दो डाकुओ को मार डाला तथा तीन को बदी बना लिया। इस कार्य से बादशाही बेगमात इनसे बहुत प्रसन्न हुई।

कांगडा युद्ध मे

बादशाह अकबर कांगडा पर विजय प्राप्त करना चाहता था। अत वि स १६३९ ई स १५८२ में कांगडा विजय के लिए बादशाह अकबर ने फौज भेजी और रायसलजी को भी जाने का आदेश दिया। उस समय राजा रायसल बीमार थे। पिता की रुग्णता की दशा मे राव भोजराज पिता के स्थान पर कांगडा की चढाई मे सम्मिलित हुए।

अकाल पीडितो की रक्षा

सम्वत १६५३[2] ई सन् १५९६ मे भयकर अकाल पडा राव

---

1 यह समय अनुमानित है।

2 नणसी री ख्यात प्रथम भाग, पृष्ठ ३२१ सम्पादक-बद्री प्रसाद साकरिया।

भोजराज ने ऐसे समय अकाल पीडिता की काफी मदद की[1]। इन्होने होद ग्राम मे एक तालाव वनवाना आरम्भ किया जो भोजसागर के नाम से प्रसिद्ध हुआ। भूखे लोगो को प्रतिदिन भगर (अनाज विशेष) दिया जाता था। यह वात इनके भतीजे कल्याण को पसन्द नही थी। इसलिए एक वार उसने खण्डेला से भगर लाने वाले लोगो को भगर लाने से मना कर दिया। इस पर भोजराज वहुत क्रोधित हुए। इन्होने इसी क्रोध मे कल्याण का वध कर डाला। जब यह समाचार कल्याण के भाइयो के पास पहुँचा तो वे बहुत नाराज हुए और गृह कलह के बीज वोये जाने की तयारी हो गई, पर उदार हृदय ताडखान जी ने अपने पुत्रो को कहा, अगर भोजराज को किसी तरह की आच आई तो अच्छा नही होगा। यह सुनकर उसके पुत्र शान्त हो गये।

उदयपुर का पट्टा प्राप्त करना

वादशाह अकवर राव भोजराजजी को किसी प्रदेश का अधिकार देना चाहते थे इसलिए सवत् १६६५ सन् १६०८ म नरहड का पट्टा भोजराजजी को प्रप्त हो गया था। वादशाह ने उदयपुर[3] का पट्टा कुछ दिनो

---

1 रायसल वश ताम भोजराज दानवीर
दान अरु धम करि भोज पद पाइयो।
विकराल नेपना सोढ सौ अकाल साल
काल सम भोज वनि काल सिर धाइयो॥
धान धन वस्त्र लेय जाडो क खुवाने मिस
देह उवारि नर नार जर खुदाइयो।
दुखी जीव मात्र साथ ऐक्य हो कहन लग,
भाज रे तरेपना तू भोजराज आइयो॥

2 भाज भगर र कारणँ मारयो भवर कल्याण।

3 पहले यह स्थान कुशम्भी नाम प्रख्यात था। उदाजी निरवाण क नाम पर उदयपुरकहलाया।

पूव पठानो को देदिया था। भोजराजजी उदयपुर का पट्टा लेना चाह थे। इसलिए बाँस बरेली के नवाब की मध्यस्थता में उदयपुर का पट्ट भोजराजजी का दे दिया गया और नरहड का पट्टा पठानो को दे दिय गया।

पाटण पर हमला

सम्राट अक्बर ने पाटण के तवरो का दमन करने के लिए रायसलज को आदेश दिया। अपने पुत्र भोजराज के नेतत्व मे पाटण पर सेन भेजी। कुछ समय तक तँवरो ने मुकावला किया, परन्तु उनको पहाड मे भागना पडा। किले पर भोजराज का अधिकार हो गया।[1]

राजधानी निर्माण

राव भोजराज ने अपनी राजधानी निमाण कराने का विचार किया और सवत् १६८२ मे उदयपुर नामक स्थान पर दुग बनवाना आरम्भ किया, जो १६८४ मे पूरा हुआ। इन्होने इसी समय उदयपुर मे एक भोजवाग का निमाण करवाया। इसी नगर को अपनी राजधानी वनाया। वि स १६६७ ई स १६४० मे शाहजहा काश्मीर घूमने गया

1 केसरीसिंह समर म पृ २५-२६ पर इस युद्ध का वणन इस प्रकार किया गया है।

चढि वेगि पाटन जाहु, करि उनन दी ही खाहु।
तिहि।र भोज पठाय, अति गुमर क्वरा राय ॥ ६८ ॥
निज आपुनी करि साज, सेना रची अग्रराज।
जुगराज अज्ञा दीह, तब चले आप अवीह ॥ ६६ ॥
इक पहर म वस कीह, गढ करे तु वर दिट्ठी ह।
घर लुट्टि थाना थप्पि, बहु उदिक अप्पन अप्पि ॥ १०१ ॥
जहा आन असपत्ति की, को मदन समरत्थ ॥
तु वर गये गिरि कदरा इमा दिगाया हत्थ ॥ १०२ ॥

यहा इनका मनसब जो पहले ८०० जात और ४०० सवार था[1]। एक हजार जात व ५०० सवार कर दिया गया। इस समय भोजराज बादशाह के साथ थे।

राव भोजराजजी का मन्त्री अग्रवाल जाति का वैश्य मोहन शाहजी था। यह राजा रायसलजी दरबारी के मन्त्री देवी दासजी के समान ही प्रतिष्ठा प्राप्त था।

भोजराज जी की मृत्यु का निश्चित समय ज्ञात नही हैं। अनुमान है कि वि स १६६७ के कुछ समय पश्चात् ही इनकी मृत्यु खण्डेला मे हुई, जहाँ इनकी यादगार मे एक छतरी बनाई गई जो आज भी खडी हुई इनकी याद दिला रही है।

राणिया

शेखावाटी प्रकाश के अनुसार इनके सात राणिया थी।

१ पँवार जी — मालपुरो के पूजाजी (पज्जन जी) शादूलसिहोत की पुत्री।

२ निरबाण जी — पपुरणा के पूरणमलजी जगमलोत की पुत्री।

३ निरबाण जी — पातोली के गगा सिंह शेषमलोत की पुत्री।

४ सोलकी जी — ताडा पटोदा के सूरजमलजी सग्रामसिंहोत की पुत्री

५ तँवरजी — भिवानी सालदास जी उग्रसेनोत की पुत्री।

६ तँवरजी — गावडी के साबदास जी छीतरदासोत की पुत्री।

७ पँवार जी— श्री नगर के सूर्यमल जी प्रतापसिंहोत की पुत्री।

---

1 Another son of Raisal s Bhojraj, who was a commander of eight hundred 400 horses

Padshahinama page 314
हिंदी अनुवाद, भाग २ पेज ७१

पुत्र–
इनके तीन पुत्र थे। टोडरमल, केसरीसिंह और रघुनाथ सिंह। टोडरमल जी पिता की मृत्यु बाद गद्दी पर बैठे। केसरी सिंह के वंशधर चवरा, जोधपुरा, सुनारी, भोभिया की ढाणी, जोरावरसिंह की ढाणी, गोलवाली, भादुवडी आदि गावो मे बसते है।

राव टोडरमल

(वि स १३६७ – १७१५ ई १६४० – १६५८)

टोडरमलजी अपने पिता के ज्येष्ठ पुत्र थे। राव भोजराज जी की मत्यु के बाद इनको ही उदयपुर का राज्य प्राप्त हुआ। इन्होने अपने कनिष्ठ भाइयो को पाच पाँच ग्राम दे दिये और इनके स्वय के अधिकार मे ४७ ग्राम रहे।

आमेर की सहायता

शाहजहा (खुरम) जहागीर के समय मे पिता का विद्रोही बन बैठा। २६ मार्च, १६२३ ई को बादशाही सेना से खुरम को युद्ध करना पडा[1]। जयसिंह प्रथम जहागीर की सेना के साथ थे[2]। खुरम युद्ध मे हार कर दक्षिण की ओर दौडा, रास्ते मे आमेर पडा। उस समय जयसिंह जी की सेवा मे टोडरमल आमेर मे थे[3] इन्होने खुरम का मुकाबला किया। खुरम भाग गया।[4] १६ अक्टूबर, १६२४ को हाजीपुर मे खुरम और शाही सेना का युद्ध हुआ। इस युद्ध मे जयसिंह के पक्ष मे टोडरमल जी ने बहुत वीरता दिखाई। जयसिंह जी

1 शादूलसिंह शेखावत इतिवृत पृष्ठ ३४

2 ओ जो इ भाग १ पृष्ठ ३६३

3 शादूलसिंह शेखावत पृष्ठ ५४

4 हे दूसरा हिन्दाल, भ्रंट न कर आमेर सू।
गढ़ म टोडरमाल, माली लिया भोजवत ॥



८ टोडरमल जी (उदयपुर)



टोडरमलजी के महल(उदयपुर)



टोडरमल जी की छतरी (किरोडी)

के सानिध्य और समय समय पर दिये गये सहयोग के कारण टोडरमल जी आमेर के दरबार मे प्रसिद्ध हो गये।[1]

शाहपुरा पर अधिकार

जिस समय राव टोडरमल जी गद्दीनशीन हुए। उस समय शाहपुरा कायमखानियो के अधिकार मे था, जिसके अधिकार मे १२ ग्राम थे। यह कायमखानी फतेहपुर के नवाब का भाई था। यह शहर काशली के अति निकट था। काशली पर इस समय राव निमलराव जी के खवास वाल पूरणमल का अधिकार था। यह शाहपुरा पर अधिकार करना चाहता था। टोडरमल जी ने शाहपुरा पर चढाई करदी और वहा के नवाब को हराकर कब्जा कर लिया। शाहपुरा गढ की रक्षाय अपने पुत्र श्यामसिंह को तैनात कर दिया। शाहपुरा पर अधिकार हो जाने पर पूरणमल नाराज हुआ। कुछ समय बाद टोडरमल जी और पूरणमल मे लडाई हुई, जिसमे पूरणमल पराजित हुआ।

राणा जगतसिंह द्वारा दातारी की परीक्षा

राणा जगतसिंह उदयपुर (मेवाड) ने टोडरमल जी की दानवीरता की बातें सुनी तो परीक्षा के लिए सिढायच हरिदास जी को भेजा।[2] हरिदास जी के आगमन पर राव टोडरमल जी ने उनकी पालकी के स्वय कधा दिया, उन्हे छ माह तक अपने यहाँ रखा और मेवा से चारण को प्रभावित व सतुष्ट कर दिया। हरिदास जी इनसे बहुत

1 इस समय सम्बधी एक दोहा आज भी शेखावाटी म गाया जाता है।

तू शेखा तू रायमल, तू ही रामासाल।
जयसिंह रा दल ऊजला थाबू टोडर मान॥

2 भोजराज जी का निधन अनुमानत वि स १६६७ के आस पास हुआ और जगतसिंह प्रथम वि स १७०६ तक मेवाड की गद्दी पर रहे। अत यह घटना वि स १६६७ से १७०६ के बीच की होनी चाहिए।

प्रभावित हुए और उसी समय यह दोहा कहा–

दोय उदैपुर ऊजला, दुइ दातार अटल्ल ।
इक तो राणो जगतसी, दूजो टोडरमल्ल ।।[1]

हरिदास जी जब उदयपुर (मेवाड) गये तो राणाजी के पूछने पर उपर्युक्त दोहा कह कर टोडरमल जी का बखान किया। इतिहास व दन्त कथाएं इस बात का प्रमाण देती है कि टोडर मल जी निश्चय ही दानवीर थे। इनकी दानवीरता की गाथा लोक साहित्य मे भी मुखर हुई है। आज भी अनेको दोहे इनकी दान वीरता के सुने जाते हैं।[2]

नकली आमेर की रक्षा

अकबर के शासन काल मे राजस्थान मे घीणावता स्थान म तांबे की खान थी। इनके समय मे खान का कार्याध्यक्ष एक ब्राह्मण था। टोडरमल जी और ब्राह्मण मे किन्ही कारणो से अनबन हो गई तो ब्राह्मण ने टोडरमल जी की शिकायत दिल्ली बादशाह को भिजवादी। टोडरमल अपनी रक्षा के लिए उदयपुर (मेवाड) चले गये।

एक बार दशहरे के दिन नकली आमेर की रचना की गई और उसे ध्वस करने का विचार किया। जब यह बात टोडरमलजी को ज्ञात हुई तो वे बडे क्रोधित हुए और नकली आमेर की रक्षार्थ तैनात हुए। रणसज्जा से सज्जित होकर जब महाराणा जी नकली आमेर का विध्वस करने अपने सैनिको सहित आये तो देखते क्या हैं कि समुख

---

1 विविध सग्रह भूरसिंह जी, मलसीसर, पृ ५७

2 'पयी पूछ पन्थिया आ बन किम हरान।
टोडरमाल रसोवडे, पातल पूग्या पान।
जीम टोडरमाल जठे, सो सामन्ता थण्ड।
चल्कर जिए चीखलै, मीन रहे घर मण्ड ।।

रणोद्यत टोडरमलजी खडे हैं। राणाजी ने अपने सामन्तो को एकत्रित कर पूछा। सलूम्बर रावजी और देवगढ के ठाकुर ने राणाजी से अर्ज की, टोडरमल जी इस समय आपकी शरण आये हुये हैं शरणागत की रक्षा ही आपका धर्म है। टोडरमल जी एक वीर योद्धा हैं। ये अपनी राजधानी को विध्वस होते नही देखेंगे, चाहे यह नकली आमेर ही हो। अत आप ही विचार कर लीजिए कि आपको क्या करना चाहिए? राणा ने अपना निणय बदल दिया और उन्होंने यह कोतुहल नही किया। वे टोडरमल जी से वहुत प्रभावित हुए और इन्हे इसके लिए वधाई दी।

आमेर पति ने जव यह समाचार सुना तो टोडरमल जी से बडे प्रसन्न हुए और दिल्ली पति से अर्ज कर उदयपुर वापिस दिलवाया। जब ये उदयपुर (मेवाड) से उदयपुर (शेखावाटी) लौटे तो जनता को अपार हर्ष हुआ।[1]

टोडरमल जी वलवान, वीर, सद्चरित्र, क्षत्रियोचित गुणो से सम्पन्न और मान मर्यादा के धनी थे। अनुमानत इनकी मृत्यु वि स १७१५ मे हुई थी।

राणिया—

शेखावाटी प्रकाश के अनुसार टोडरमल जी के ६ राणिया थी —

१ निरवाण जी— खरखडा के कल्याणदास जी की पुत्री।

२ उदावत जी— जितारण के कल्याणदास सग्रामसिहोत की पुत्री।

1 इसी समय हर्ष म स्त्रियो न इनकी की विजय का गीन गाया जो एक परम्परा वन गइ और विवाहोत्सव म वधू क घर आने पर आज भी स्त्रिया के मधुर कण्ठो से वह गीत सुना जाता है।

जीया जीत्या जी टोडरमल जी क पाण
जीत्या जीत्या जी

३ बीदावत जी— छापर के धनराज जी शेषमलोत की पुत्री ।
४, वागवत जी— कसु भी के रघुनाथ सिंह बाघसिंहोत की पुत्री ।
५ तंवर जी— गावडी के सुन्दरदास भीमराजोत की पुत्री ।
६ चौहान - - रामपुरा के जूभार सिंह राघोदासोत की पुत्री ।

पुत्र

१ पुरुषोत्तमदास जी–

टोडरमल जी के ज्येष्ठ पुत्र थे । जागीर के रूप मे इनको भाभड प्राप्त हुआ, जहा इनके वशधर निवास करते हैं । इनके भाई भीमसिंह द्वारा विष देने से इनकी मृत्यु हो गई । इस कारण टोडरमल ने ज्येष्ठ पुत्र के अधीन राज्य रखने की प्रथा समाप्त करदी तथा सब भाइयो को समान भाग देने की प्रथा चालू की। उसी समय से टोडरमल जी के वशधरो मे बराबर भाई बट की प्रथा चल रही है । इनके एक पुत्री सुखरूपदे कवर थी जिसका विवाह रतनसिंह रतलाम के राजा के साथ हुआ था । रतनसिंह १६ अप्रेल १६५८ को धरमत की युद्ध भूमि मे औरगजेब के खिलाफ लडते हुए वीरगति को प्राप्त हुए तो रतनसिंह की अन्य चार रानियो के साथ इनकी पुत्री सुखरूपदे कवर भी सती हुई थी ।[1]

२ भीमसिंह–

इनको पाच गावो सहित मण्डावरा प्राप्त हुआ था । इनके वशधर उदयपुरवाटी मे धमोरा गोठडा मण्डावरा, हर्तिदा देवगाव आदि गावो मे बसते हैं ।

३ श्यामसिंह -

इनको जागीर के रूप मे छापोली मिली । पिता के जीवन काल में

1 वचनिका राठौड रतनसिंह जी महेशदासोत री खिडिया जगा री कही स काशीरामशर्मा एव डा० रघुबीर सिंह सीतामऊ, पृ १३३

टोडरमल जी पूरणमल खवासवाल से लडे, तब इनको शाहपुरा के गढ मे रखा गया था। इनके पुत्र सुजानसिंह ने खण्डेला मे औरगजेब की फौज के विरुद्ध मोहनदास जी के मन्दिर की रक्षार्थ लडकर सन् १६७९ मे वीरगति प्राप्त की। बाद मे छापोली इनके वशधरो से छुट गई। इनके वशज मेही, मिठोई आदि गावो में बसते हैं।

४ हिम्मतसिंह -

इनको जागीर के रूप मे कारी ग्राम प्राप्त हुआ। इनके वशधर झुझूनू जिले मे इख्तियारपुरा आदि गावो मे रहते हैं।

५ हरनाथसिंह -

इनको रसुलपुर प्राप्त हुआ। रसुलपुर छुट जाने के बाद इनके वशज बडवासी, पबाना, बलोदी आदि गांवो मे बसते हैं। इनके कई वंशधर सु यक्त प्रान्त मे चले गये।

६ जूझारसिंह –

इनका जीवन चरित्त आगे लिखा गया है।

जूझार सिंह

(वि स १७१५-१७५४ ई स १६५८ - १६९७)[1]

जूझारसिंह टोडरमल जी के छटे पुत्र एव अपनी मा के इकलौते पुत्र थे। ये स्वछन्द प्रकृति के व्यक्ति थे। अपने पिता व भाइयो से इनकी अनबन रहती थी। पिता के जीवनकाल मे ही इन्होने नये ठिकाने का निर्माण कर लिया था।

गुढा की स्थापना–

ये शिकार के बहुत शौकीन थे। एक बार शिकार करते हुए ये उदयपुर से पूव-उत्तर मे कई दूर निकल गये। इस क्षेत्र मे प्राय चोर लुटेरे प्रजा को सताया करते थे। जूझारसिंह ने चोरो को मार कर प्रजा

1 ये सवत अनुमानित है–

जित हुई और वह भाग गई ।[1] दिल्ली बादशाह द्वारा किये गये कागडा और खुरासान के हमलो मे भी जूझारसिंह बादशाही फौज के साथ थे ।[2]

राणिया

शेखावाटी प्रकाश के अनुसार इनके पाच राणिया थी -

१ गौड जी [3] नानीगवास के आसकरण जी उदयसिंहोत की पुत्री

२ बीदावत जी[4] - सोवासर के रामचन्द्र जी मदनसिंहोत की पुत्री

३ तंवर जी - पाटन के केशरीसिंह प्रतापसिंहोत की पुत्री

४ जोधी जी[5] – गोविन्दगढ के कनीराम जी की पुत्री

५ *निरबाण जी – खरखडा के जोरावर सिंह प्रतापसिंहोत की पुत्री*

मेवाती' र बिलोच माय कूरम हरियालो ।
मानगढ को धणी, वो भी तन लाग्योवालो ।।
चौहान फतो दोनो अजब मछर छाड ।
एक दिन मालरा ।।

1 इस घटना का सूचक एक दोहा इस प्रकार है ।
डूगर बाको है गुढो रण बाको जूझार ।
एकण आग असुरगण, भाग्या पाच हजार ।।

2 शेखावाटी प्रकाश अध्याय ६ पृ ६

3 आसलपुर के सबल सिंह बडुवा की बही अनुसार गौड राणी मारोठ की थी तथा राणी का नाम लखधीर कुवर था । गौड जी ने गुढा मे वि स १७२० म कोठी करवाई ।

4 बीदावत राणी ने गुढा म वि स १७३४ म कोठी करवाई । उपयुक्त बड्वा की बही के अनुसार बीदावत जी का नाम बीर कुवर था ।

5 उपयुक्त बडवा की बही मे जोधीजी का जिताई गाव व तमसुखदे कुवर नाम बताया है ।

पुत्र

१ मोहर्रसिह-ये जूझारसिंह के ज्येष्ठ पुत्र थे, जो उनकी गौड राणी से से पदा हुए थे। जगरामसिंह से इनको बहुत स्नेह था। इन्होंने नरहड के नवाब को दिल्ली मे किसी समय सहायता दी थी। इस कारण नवाब ने इन्हे भेरली व खुडानिया गाव दिये थे। इनके पुत्र सेवासिह बाघोरा के दगे मे मारे गये। इनके वशधरो के दीपपुरा, खुडानिया, भेरली, टीटनवाड, पोसाणा आदि गाव हैं।

२ मुकनसिह- ये जूझारसिंह की बीदावत राणी से पैदा हुए थे। इनके दो राणिया एव चार पुत्र थे। दो पुत्र दुजनसिंह व भारमल जी बाघोरा के दगे मे मारे गये। इनके अधिकार में चिराणा, लोरडी, किरोडी, हासिलसर, आदि गांव थे। छापोली को इन्होने ठाकुर रूपसिह के पुत्र छाजूसिंह से छीनली थी। छाजूसिह ने यही छापोली श्याम सिंह के वशधरो से छीनी थी। इन्होने ठाकुर शादूल सिंह को नरहड लेने मे मदद दी थी। मुकन सिंह के वशजो के छापोली, चिराणा, पचलगी आदि गाव हैं।

३ रूपसिंह-इनका जन्म जूझारसिंह की गौड राणी से हुआ था। इनके दो राणी एव छ पुत्र थे, जिनके नाम इस प्रकार थे छाजूसिह, जीवराजसिंह, बलूसिंह, दलूसिह, नोर्पसिह तथा शेरसिंह। रूपसिंह ने अपने भाई मोपसिंह के साथ हरीपुरा के युद्ध मे भाग लिया था। इनके पुत्र दलूसिह बाघोरा के दगे मे मारे गये। झुझुनू एव नरहड पर अधिकार करने मे शादूलसिह की इन्होने मदद की। इसके फलस्वरूप जीवराजसिंह को चीचडोली व छाजूसिह को छावसरी गाव प्रदान किया। जहा इनके वशज आज भी रहते हैं। रूपसिंह जी के वशजो के अन्य गाव गुडा, गुढा, पापडा, (दोना) बाघोली, भोजगढ, गिरावडी लोह, हुकमपुरा, रघुनाथपुरा, भोजनगर आदि हैं।

४ दीपसिंह -

इनका जन्म जूझारसिंह की बीदावत राणी से हुआ । हरीपुरा के युद्ध में इन्होने केशरीसिंह खण्डेला के पक्ष में तलवार उठाई थी ।[1] इस युद्ध में इनके चौरासी सैनिक भी लडे थे । केशरीसिंह समर में इनकी बहादुरी का वरणन है । इसी युद्ध में इन्होने जूझते हुए वीरगति प्राप्त की । इनके चार पुत्र पदमसिंह, नाथूसिंह, डूगरसिंह और शेषमल जी थे । इनके वशज रसूलपुरा, गुडली, भरवाडी, सेफरागुवार, चीचडोली दुड्या, बहाऊ आदि गावो में हैं।

५ भगुतसिंह -

इनका जन्म जूझारसिंह की गौड राणी से हुआ । इनको जागीर के रूप से पूख आदि गाव प्राप्त हुए । इनके पुत्र तेजसिंह एव फतेहसिंह वाघोरा के दगे मे मारे गये । इनके वशधरो के पौख, मणकसास, नागल, गुडा, भोजनगर, सुरजन पुरा आदि गाव हैं ।

६ जगराम सिंह— इनका जीवन चरित्र आगे लिखा गया है ।

७ किसोर सिंह— *ये वाघोरा के दगे मे मारे गये । इनके छ पुत्र थे,* जिनके वँशधर गुडा, नेवरी, वासपोपाणा, ककराणा, उदयपुर आदि गावों मे निवास करते हैं ।

८ सरदारसिंह इनके वशज इन्द्रपुरा, रघुनाथपुरा आदि गावो में बसते हैं।

९ सूरत सिंह— इनके वशधर बडागाव मे निवास करते हैं । बीकानेर डिवीजन मे सोनपालसर आदि गावो मे भी इनके वशधर वसते हैं ।

१० अभयसिंह ११ साहिबसिंह १२ सुल्तानसिंह १३ मानसिंह १४ प्रेम सिंह १५ गुमान सिंह १६ जयत सिंह १७ शक्तिसिंह १८ सावत सिंह ।

---

1 उभो भींव रो, भीव री भाति मण्डे,
उभो झूजरो, दीप सग्राम तण्डे ।

के स पृ १२०

इस प्रकार जूझार सिह के अठारह पुत्र थे परन्तु राज्य का हिस्सा गौड राणी के पाच पुत्र सोहनसिह, रूपसिह, किशोरसिह, भगुत सिह और सरदार सिह व बीदावत राणी के तीन पुत्र मुकन सिह, दीप-सिह और जगराम सिह को ही प्राप्त हुआ। गौड जी के पुत्रो को राज्य का ११ अ श व बीदावत जी के पुत्रो को राज्य का ६ अ श प्राप्त हुआ। शेष पुत्रो ने गुढा के पास हुई लडाई में जूझार सिह का साथ नहीं दिया। इस कारण शेष दस पुत्रों को राज्य का हिस्सा प्राप्त नही हुआ। जूझार-सिह की गौड राणी के पुत्र 'गौड जी का' एव बीदावत राणी के पुत्र 'बीदावत जी का' कहलाते हैं।

पुत्रिया

आसलपुर के वडवा सबलसिह की वही अनुसार जूझार सिह के आठ पुत्रिया थी —

१ लाड कवर २ हस्त कवर ३ बने कवर ४ चतर कवर ५ अभय कवर ६ जतन कवर ७ जनक कवर और ८ सुख कवर।

जगरामसिह

जगराम सिह का जन्म जूझारसिह की बीदावत राणी से हुआ था। जूझार सिह द्वारा कारतलब खा व कुतुबखा के विरुद्ध लडे गये युद्ध में अपने आठ भाइयो के साथ जगराम सिह भी लडे थे। वि स' १७५४ ई स १६९७ मे ये हरीपुरा के युद्ध में भी गये थे। केसरी सिह समर से ज्ञात होता है कि जहा इस युद्ध मे बहुत से शेखावतो ने प्राणोत्सग कर अपना नाम उज्ज्वल किया, वहा कुछ व्यक्तियो ने अपनी कायरता या स्वार्थप रता का परिचय दिया। कहा नही जा सकता कि जगराम सिह ने कौनसे स्वार्थ के वश होकर रणभूमि से पलायन किया, परन्तु यह निश्चित है कि इन्होने युद्ध भूमि को छोड दिया था।

राणिया

१ चान्धलोतजी-रावतसर के प्रतापसिह की पुत्री
२ तॅवर जी-मावडा के अजनदास जी की पुत्री

पुत्र–

१ कुशलसिंह—ये जगराम सिंह की कांधलोत राणी से पैदा हुए थे। अपने भाइयों में ये सबसे बड़े थे। पिता की जिन्दगी में ही इनका देहान्त हो गया था। इनके वंशधर नडाऊँ आदि गावों में बसते हैं।

२ सुखसिंह- इनका जन्म भी जगराम सिंह की कांधलोत राणी से हुआ था। बाघोरा के दंगे में अपने अन्य बंधुजनों के साथ ये मारे गये। इनके वंशधर सूरपुरा, सराय, भाभ और पचलगी में बसते हैं। इनके वंश में गाम सूरपुरा में मेघसिंह पुत्र मोहनसिंह की धर्म पत्नी मडतनी जी सरताज कंवर २५ फरवरी, १९७४ को दिन के १२ बजे सती हुई।

३ गोपालसिंह—इनका जन्म भी जगरामसिंह की कांधलोत राणी से हुआ। ये अपने समय में शेखावाटी के बहादुरों में गिने जाते थे। अनुमानत वि स १७७० ई १७१३ के करीब बबाई व पपुरणा पर चढाई कर फौलादखां और बुलन्द खां दोनो भाइयों को मारकर राव निरवाण को पपुरणा व बबाई दिलवाया।

सिंगरोड का दुश्चरित्र नवाब बादूखां परशुरामपुरा के एक फकीर की औरत से बलात्कार करता था। फकीर का कोई जोर नही चलता था। उसने गोपालसिंह से अर्ज की। इन्होने उसे नवाब को दण्ड देने का आश्वासन दिया। इसी नवाब ने एक परिहार राजपूत का भी अपमान किया था, इसने भी इनसे शिकायत की। अत प्रजा पालक गोपालसिंह ने एक दिन नवाब से भिडकर उसका काम तमाम कर दिया। भोजनगर के बडवा की बही से ज्ञात होता है कि वि स १७७७ में गोपालसिंह ने केड के नवाब अजमेरी खां से केड छीनकर उस पर अधिकार किया था।

बाघोरा के दंगे के समय खण्डेला के राजा उदयसिंह ने इनको खण्डेला बुलवाया। इनको मारने का व्यूह रचा गया, परन्तु उदोजी व भूदोजी ने इनके प्राण बचाये। लुमास के युद्ध में इन्होने सल्हेदीसिंह की मदद की। गोपाल सिंह के तीन राणियां व एक पुत्र गजसिंह थे। इनके वंशधर केड में बसते हैं।

४—शार्दूलसिंह ५—सल्हेदीसिंह—इनका वर्तान्त आगे लिखा गया है।

तृतीय खण्ड

अध्याय १

शार्दूलसिंह के समय की राजनीतिक स्थिति

शार्दूलसिंह के जन्म के समय इस्लाम का कट्टर समर्थक बादशाह औरंगजेब दिल्ली के तख्त पर था। एक वर्ष पूर्व औरंगजेब के कट्टर शत्रु मराठा केशरी शिवाजी और मेवाड के राजसिंह दोनों ही चल बसे थे। औरंगजेब दक्षिणी भारत के युद्धों में रत था और बहुत तंग आ चुका था। इधर दुर्गादास ने मारवाड में लडाई छेड रखी थी और उसकी नाक में दम कर रखा था। दूसरी ओर दक्षिण में ऐसी संकटमय स्थिति थी कि वह उनसे निकल ही नहीं पा रहा था। हिन्दू मन्दिरों का विध्वंस और हिन्दुओं पर जजिया कर आदि से देश भर के हिन्दू नाराज थे। उनका मन औरंगजेब के प्रति विद्रोही हो बैठा था। फिर सम्राट के स्वयं के अविश्वास ने उसको चिन्ताग्रस्त कर दिया था। "१७ वीं शताब्दी के आखिर चरण तक तो मुगल साम्राज्य की जड भीतर ही भीतर खोखली हो गई थी खजाना खाली पडा था, मुगल सेना दुश्मनों के हाथों अपमानित व पराजित हो चुकी थी, देश में अलग अलग खण्ड राज्य स्थापित होने लगे थे और मुगल राज्य छिन्न भिन्न होने को ही था। साम्राज्य का नैतिक पतन भौतिक पतन से अधिक भयंकर था। ——सरकारी कर्मचारी ईमानदारी व कार्य-कुशलता सर्वथा खो चुके थे, मन्त्रियों और राजाओं दोनों में ही शासन पटुता की पूरी पूरी कमी थी, सेना बिल्कुल निस्तेज और बलहीन हो

चुकी थी।"[1] इस प्रकार मुगल साम्राज्य का ढाचा चरमरा कर ढीला हो गया था। औरंगजेब की मृत्यु के बाद उसके पुत्रो मे सिंहासन के लिए युद्ध हुआ और उसमे विजयी मुअज्जम बहादुर शाह के नाम से बादशाह हुआ। उसके बाद तो दिल्ली तख्त एक ऐसा रंगमंच हुआ कि फिल्म के दृश्यो की भांति मुगल सम्राट पद पर आते गये और जाते गये। सयद बन्धु सम्राट निर्माता बन गये थे। बादशाह फरुखशियर के समय इनकी ताकत काफी बढ गई थी, परन्तु शीघ्र ही फरुखशियर के साथ ही साथ वे भी राजनीतिक रंगमंच से विदा हो गये। सैयद बन्धुओ की समाप्ति पर फरुखशियर के उत्तराधिकारी मुहम्मदशाह को चैन की श्वास मिली, परन्तु वह भी कोई बहुत योग्य बादशाह नही था। पतन की ओर जाते हुए मुगल साम्राज्य को वह बचा नहीं सका। उसमे ऐश आरामी और विलासिता बहुत अधिक मात्रा मे थी। इस कारण उसे रंगीला बादशाह कहा जाता था। उससे राज्य पर कोई नियंत्रण नही हो पा रहा था। विभिन्न प्रदेशो मे गडबडें होनी शुरु हो गई थी। ऐसे ही समय मे शादूलसिंह झुंझनू की कमजोर नवाबी को नष्ट कर स्वयं मालिक बन गये।

राजस्थान के राजघरानो मे जिसका मुगलो से गहरा सम्बंध था, वह आमेर (जयपुर) था। आमेर के भारमल ने सन् १५६२ वि स १६१६ मे मेल जोल कर लिया था और तब ही से आमेर के राजा मुगल दरबार मे सम्मानित पद पर रहते आ रहे थे। मानसिंह के बाद मिर्जाराजा जयसिंह मुगलबादशाह शाहजहा व औरंगजेब के प्रसिद्ध सेनापतियो मे से थे। ये योग्य राजनीतिज्ञ भी थे। जहा कही भी कोई कठिन या चतुराई पूर्ण गूढ काम करना होता था, वहा बादशाह जयसिंह का ही मुंह ताकता था। युक्तिपूर्ण चातुरी और व्यवहार कुशलता के साथ ही

1 जदुनाथ सरकार कृत औरंगजेब, पृष्ठ ३

साथ अडिग धैर्य भी उसमें कूट कूट कर भरा था। राजस्थानी और उर्दू बोलियों के अतिरिक्त वह तुर्की और फारसी भाषाओं का भी पूर्ण ज्ञाता था। इन्हीं सब विशेषताओं के कारण ही दूज के चाद में व्यक्ति दिल्ली के शाही झण्डे के नीचे संगठित होने वाली अफगान तुर्क राजपूत और हिन्दुस्तानी सैनिकों की उस सम्मिश्रित मुगल सेना का सेनापतित्व करने के लिए वह सर्वथा उपयुक्त था।[1] इस प्रकार जयसिंह राजस्थान ही नहीं हिन्दुस्तान के योग्यतम व्यक्तियों में थे। रामसिंह व विशनसिंह के बाद जयसिंह द्वितीय जयपुर के राजा हुए। ये शार्दूल सिंह के समकालीन थे। मुगल साम्राज्य में औरंगजेब के बाद होने वाली उथल पुथल से इनका गहरा सम्बन्ध था। सम्राट निर्माता सैयद बन्धुओं के ये विरोधी थे सैयदों की शक्ति को समाप्त करना चाहते थे। प्रारम्भ में इनको कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ा, परन्तु आखिर में वे सफल हुए और सैयदों को खत्म करवाकर मुहम्मदशाह को होले कांटों से बचा लिया। मुहम्मद शाह के दरबार में इनका पूरा दबदबा रहा। खण्डेला और मनोहरपुर पर इन्होंने अधिकार कर लिया। अन्य शेखावत बन्धुओं को चतुराई से अपनी ओर मिलाया और अपनी रियासत का विस्तार किया। शार्दूलसिंह एवं शिवसिंह को झुंझनू एवं फतेहपुर दिलाने में जयपुर के युद्ध में जयसिंह के लिए ढाल का काम किया। इस प्रकार जयसिंह के राज्य काल में जयपुर राज्य की स्थिति सुदृढ़ हो गई।

दिसम्बर १६७६ वि. स. १७३६ में जसवन्त सिंह जोधपुर की जमरूद में मृत्यु हो गई। औरंगजेब के अनुसार उसका एक महान धर्म विरोधी खत्म हो गया, यद्यपि जसवन्त सिंह सम्राट के दरबार में रहते थे, परन्तु औरंगजेब और उसकी आमतौर से धार्मिक नीति के सख्त विरोधी थे। जसवन्तसिंह की मृत्यु के बाद गर्भवती राणी से उत्पन्न

1 जदुनाथ सरकार कृत 'औरंगजेब' पृष्ठ २६४ ६६

अजीतसिंह को औरंगजेब के चंगुल से वीर दुर्गादास ने बहुत ही होशियारी से बचाया। सन् १६७९ से १६८७ तक दुर्गादास ने अनेकों कठिनाइयां सहकर जोधपुर के स्वामी अजीतसिंह की रक्षा की। इस समय मे मारवाड की जनता ने बादशाही फौजो से छापामार युद्ध किये। मारवाड की जनता अजीतसिंह को ही अपना स्वामी समझती थी। वि स १७४४ ई स १६८७ मे दुर्गादास एव अजीत सिंह खुले रूप से सामने आ गये और मारवाड की सेना का नेतृत्व करने लगे।[1] मुगलो के लगातार हमलो का मारवाड के बहादुरो ने पूर्णरूप से मुकाबला किया। उस समय की मारवाड की स्थिति का वर्णन करते हुए कवि करणीदान ने लिखा है–'सूर्यास्त से दो घडी पहले ही मरु मे सारे दरवाजे बद हो जाते थे, किलो पर मुसलमानो का राज्य था, परतु मैदानो मे तो अजीत की ही आज्ञा का पालन होता था''[2] सैयदो के जमाने मे अजीतसिंह सैयदो के साथ थे और कोटा के भीमसिंह भी सैयदो के पक्ष के थे। अजीतसिंह को उनके पुत्र ने जहर देकर मार डाला और अभयसिंह गद्दी परबैठा। अभयसिंह ने वि स १७९६ ई स १७३९ मे बीकानेर पर हमला किया। शार्दूलसिंह ने इस युद्ध मे अभयसिंह की सहायता की। दूसरे वर्ष फिर जोधपुर और बीकानेर मे युद्ध हुआ। जयसिंह ने बीकानेर की सहायता की, जिसके फलस्वरूप गगवाणा का युद्ध हुआ। दोनो रियासतो के लिए यह युद्ध बहुत घातक हुआ। इस युद्ध मे शार्दूल सिंह जयसिंह के साथ थे। इस प्रकार जोधपुर की राजनीति के उतार चढाव म शार्दूलसिंह का भी सम्बन्ध था।

बीकानेर पर इस समय जोरावरसिंह शासन करते थे। इनके

---

1 जदुनाथ सरकार कृत औरंगजेब पृष्ठ ५०१

2 ,, ,, ,, पृष्ठ ५०३

कुछ सामन्त विद्रोही हो गये, उन्होंने अभयसिंह जोधपुर को बीका-नेर पर आक्रमण करने के लिए प्रेरित किया। जोरावरसिंह ने जयसिंह से सहायता मांगी। बीकानेर की जयसिंह ने सहायता की, फलस्वरूप जोधपुर की फौज बीकानेर से हट गई। इसके बाद ही बीकानेर के कुछ साईदासोतो ने विद्रोह कर दिया। सवाई जयसिंह की आज्ञा से शादूलसिंह एव शिवसिंह ने साईदासोतो के गाव सापरणा आदि पर हमले किये।[1] कुछ दिनो बाद शादूलसिंह ने लालसिंह (भादरा) को कैद कर जयपुर भेज दिया। इस प्रकार बीकानेर की राजनीतिक स्थिति मे शादूलसिंह का गहरा हाथ रहा।

कोटा मे इस समय महाराणा भीमसिंह व दुजनशालसिंह का शासन रहा। बूंदी के शासक बुद्धसिंह थे। सवाई जयसिंह का जब बूंदी से सघष हुआ' सम्भवत शादूलसिंह जयसिंह के साथ थे। उदयपुर के महाराणा इस समय अमरसिंह थे, जिनसे शादूलसिंह का कोई विशेष सम्पक नहीं रहा।

शेखावाटी मे इस समय अधिकतर शेखावत शासक थे। केवल फतेहपुर, झुंझनू एव नरहड पर मुसलमानो का शासन था। हरीपुरा का प्रसिद्ध युद्ध शादूलसिंह के समय मे ही हुआ था। खण्डेला की पराजय होने के बाद उदयसिंह अजमेर मे बंदी बना लिए गये थे। इनको कद से छुडाने एव खण्डेला की गद्दी पर बैठाने मे शादूलसिंह ने अपूव योग दिया था। बाद मे उदयसिंह इनके विरूद्ध हो गये थे तथा इन्होने भोजराजाता को धोखे से नष्ट करना चाहा था।

मनोहरपुर के राव सगतसिंह एव खण्डेला के उदयसिंह, जयसिंह के विरोधी और सवद गुट के समयक थे। शादूलसिंह जयसिंह के साथ थे।

1 महता बख्तावरसिंह की हस्तलिखित ख्यात, पृष्ठ २३

झुंझनू व फतेहपुर पर कयामखानियो का अधिकार था और नरहड पर पठानो का। इस समय इन राज्यो की स्थिति अच्छी नही थी। झुंझनू नवाब के नियन्त्रण मे रहने वाले छोटे २ नवाब विद्रोही हो गये थे। फतेहपुर के कयामखानी परस्पर लड रहे थे। इस आपसी फूट एव गिरती हुई दशा का शादूलसिंह एव शिवसिंह ने पूरा पूरा लाभ उठाया और दोनो ने मिलकर हमले कर फतेहपुर की नीव को हिला दिया था। शादूलसिंह ने अपनी कूटनीति से झुंझनू पर अधिकार कर लिया था। इसके बाद दोनो ने मिलकर फतेहपुर पर अधिकार कर लिया और शीघ्र ही नरहड पर भी अपना कब्जा कर लिया।

साराश के रूप मे शादूलसिंह के समय देश की राजनीतिक स्थिति मे काफी उथल पुथल हुई और इस उथल पुथल मे शादूलसिंह ने अपने राज्य को सुदृढ कर लिया था।

अध्याय ?

शार्दूल सिंह (वि म १७८७-१७६६ ई स १७३० १७४२)

मुगल साम्राज्य रूपी सूर्य, जो अकबर के शासन काल मे गगन मे चमकने लगा था, औरगजेब के शासन काल मे अवसान की ओर बढ चला था उसके कुकृत्यो से साम्राज्य रूपी ढाचा चरमराकर ढीला हो गया था। साम्राज्य का विगत गौरव बहुत कुछ मिट चुका था, उसका सारा वैभव विलीन होने लगा था। आर्थिक स्थिति बिगड कर उसका दिवाला निकल चुका था। शासन सगठन छिन्न भिन्न हो रहा था।[1] एक ओर मारवाड का बहादुर दुर्गादास उसे नाको चने चबा रहा था तो दूसरी ओर बहादुर मराठा शिवाजी से वह तग आ चुका था। परन्तु वि स १७३७ ई स १६८० मे शिवाजी की मृत्यु हो जाने से औरगजेब को कुछ चैन की सास मिली। ठीक इसके एक वर्ष बाद झुझनू मे एक नये शिवाजी ने जन्म लिया, जिसने अपनी रण चातुरी, कुशलनीति एव बहादुरी से राजस्थान के प्रसिद्ध इलाके शेखावटी मे स्थित झुझनू, फतेहपुर और नरहड के नवाबी शासन से आतकित प्रजा को मुक्त किया। इसी नये शिवाजी (शार्दूलसिंह) का हम यहा क्रम बद्ध इतिहास रखेंगे - पहिले उनके जीवन का पूर्वार्द्ध और तत्पश्चात् उनके जीवन का उत्तरार्द्ध।

शार्दूलसिंह के जीवन का पूर्वार्द्ध

जन्म

राजस्थान के प्रसिद्ध तीर्थस्थल लोहागल से उत्तर की ओर बसे

1 औरगजेब जदुनाथ सरकार पृष्ठ ६ (हिन्दी स)

छीलरी से डेढ़ मील की दूरी पर बसे टोक[1] नामक गाव मे ठाकुर जगरामसिंह की द्वितीय राणी कुन्दनकवर तंवरजी के गर्भ से वि० स १७३८[2] तदनुसार ई १६८१ मे शादूलसिह का जन्म हुआ।[3] इस समय जगराम सिंह यहा रहते थे। शादूलसिह की उम्र जब ६ वर्ष की हुई, उस समय उनके छोटे भाई सल्हेदीसिह का जन्म वि स १७४४[4] मे हुआ।

1 टोंक अब उजड चुका है। यह गाव इस जगह स दक्षिण की ओर डेढ मील दूरी पर बस गया है। जिसे आज 'छीलरी' कहते हैं।

2 कु० देवीसिह कृत शादूलसिंह इतिवृत, अध्याय ३, पृष्ठ ७० शेखावाटी प्रकाश, अध्याय १०, पृष्ठ १

3 शादूलसिह के जीवन के सम्बन्ध म दो विचार धारायें प्रचलित हैं—
कुछ विद्वान इनका जन्म सवत १७३८ म मानते हैं, इस तथ्य के समर्थक शेखावाटी प्रकाश के लेखक भगवतीप्रसाद रामचन्द्र देवीसिहजी मण्डावा व सुरजनसिहजी भाभड हैं। कवर देवीसिहजी ने बडवे की बही म लिखित होने के कारण इसे सही मानते हैं। सुरजनसिहजी भाभड घटनाक्रम के हिसाब से ही इसे सही मानते हैं। दूसरी विचारधारा म मुख्य विद्वान रावल हरनार्थसिहजी डूडलोद भूरसिहजी मलसीसर के सग्रह के आधार पर इनका जन्म फाल्गुन सुदि ५ वि स १७४२ मे मानते हैं किन्तु ऐतिहासिक दृष्टिकोण से यह जन्म सवत सत्य के अधिक नजदीक प्रतीत नही होता, क्योंकि वि स १७५७ म जोरावरसिहजी का उत्पन्न होना सभी सही मानते हैं इस हिसाब से १४ १५ वर्ष की उम्र म जोरावरसिह का जन्म होना अधिक विश्वसनीय नहीं कहा जा सकता। दूसरे शादूलसिह की मृत्यु के समय १७९९ म इनकी उम्र ६० वर्ष १० माह और १५ दिन बताई गई है। इस हिसाब स इनका जन्म वि स १७३८ म ही पडता है।

3 शादूलसिहजी शेखावत इतिवृत, पृ० ७०
Shekhawats and their Lands chapter eight, page 96

ननिहाल मे निवास

शेखावाटी के उदयपुर नगर से पूव - दक्षिण मे स्थित मावडा शादू लसिह का ननिहाल था। अनुमानत वि स १७४८[1] की वात है, जगरामसिंह व उनकी पत्नी तँवरजी मे अनबन हो गई।[2] दशहरे का दिन था, तँवरजी अपने दोनो पुत्रो का लेकर अपने पीहर मावडा के लिये एक बैलो पर बैठकर रवाना हो गई। गुढा के पास बलो का एक बैल थक-कर बैठ गया। अत शादू लसिह निकटवर्ती ढाणी से बैल लाने के लिये गये। जाट बैल देने से इन्कार हो गया। इस समय शादू लसिह की अवस्था ६ वष की थी। इस समय तक यह नव वर्षीय क्षत्रिय कुमार अपनी मान मर्यादा को भली भाति समझने लगा था। छोटे भ्राता सल्हेदीसिह की उम्र इस समय तीन वष की थी। विपति मे भी कुमार विचलित नही हुये और २४ मील पैदल चलकर अपने नाना अजु नदास तँवर के घर मावडा आ गये।

अर्जुनदास तँवर ईश्वर के बडे भक्त थे। अनुमानत वि स १७५० - ५१ ई स १६९३-९४ की बात है। एक बार शादू लसिह व सल्हेदीसिह दोनो भ्राता गेंद से खेल रहे थे। अचानक उनकी गेंद ध्यान-मग्न नाना अजु नदास के पास जा पडी। बच्चे, बच्चे ही होते हैं। उन्होने गेंद लेने को एक योजना बनाई और यह तय हुआ कि सल्हेदीसिह नानाजी का उपवस्त्र लेकर दौडे और शादू लसिह गेंद लेकर जाये।

1 शेखावाटी प्रकाश अध्याय १०, पृ० १

2 Annals and antiquities of Rajasthan Vol 3 Page 1423
शेखावाटी प्रकाश, अध्याय १० पृ० १
रावल हरनाथसिंहजी डूडलोद ने अनबन होन का कारण दशहरे के दिन शादू लसिह को उनके सहोदर भ्राताओ के समान घोडा चढने के लिए न देना माना है।

जोरावर सिंह का ज म हुआ । इस समय शादू ल सिंह काट मे क्यो आय और उनका निवास यहा कसे हुआ ? मालूम नही, पर तु यह बात सही है कि इनका ज म इस ग्राम मे स्थित बुज मे हुआ था, जो पिछले दिनो तक मौजूद थी ।[1] यही पर इनकी बडी पुत्री गुमान क वर का ज म हुआ ।

खण्डेला राजा उदयसिंह की सहायता

खण्डेला के राजा केशरी सिंह औरगजेब की हि दू विरोधी नीति से प्रसन्न नही थे । उ होने खण्डेला के निकटवर्ती शाही इलाको को लूटना शुरु कर दिया था[2] और साथ ही दिल्ली सम्राट को ट्रिब्यूट देना भी ब द कर दिया था ।[3] इस लूट पाट और केशरी सिंह की मनचाही नीति से बादशाह बहुत अप्रस न हुआ और उसने अजमेर के सूबेदार अबदुल्ला खा को खण्डेला पर चढाई कर देने का आदेश दिया। यह आदेश पाकर अब्दुला खा ने अपने पुत्र नरुद्दीन खा को खण्डेला भेजा कि वह किसी प्रकार छल कपट से केशरी सिंह को पकड लाये परन्तु वह इसमे सफल नही हुआ ।[4] कोई चारा न देखकर अब्दुला खा को खण्डेला पर चढाई करनी पडी । केशरीसिंह की सहायताथ सभी शेखावत सरदार एकत्रित हो गये । इन शेखावत सरदारो मे जगत सिंह काशलो मुख्य थे । इनके अतिरिक्त भोजराज के, हरीराम के, लाडखानी, टकणोत, उग्रसेन, मुलकपरिया आदि सभी थे । माचेडी के रावजी के साथ राठौड, गौड, च देल और निरबाण राजपूत भी इस युद्ध म शामिल हुये थे । [5]

आसोज सुदि ७ रविवार वि स १७५४ का साभर के निकट

---

1 शादूलसिंह शखावत इतिवत, पृष्ठ ७३
2 , ,, , , ६२
3 Shekhawats and their Lands, page 28
Shekqawats and their Lands P 96
4 केसरी सिंह समर, पृ ७४
5 शादूलसिंह शखावत इतिवत पृ० ६३

हरीपुरा नामक स्थान पर दोनो सेनाओ का मुकाबला हुआ। अब्दुला खा ने शेखावतो की सेना मे फूट डालने का प्रयास किया था, किन्तु वह असफल रहा। दोनो सेनाओ का यहा डटकर युद्ध हुआ। जगतसिह काशली की प्रथम भिडन्त नूरुद्दीन खा से हुई। नूरुद्दीन धराशायी हो गया और उसकी फौज भाग निकली। अब जगतसिह अब्दुल्ला खा पर टूट पडे, किन्तु बीच मे उसका पुत्र नूरुद्दीन खा आगया। जगत सिह ने तलवार से हाथी पर वार किया जिससे उसका सूँड कट गया और नूरुद्दीन हाथी से गिर कर मर गया, किन्तु वह बहादुर भी अरिदल से घिर गया और अन्त मे भीषण युद्ध करता हुआ काशली का जगतसिह वीर गति को प्राप्त हुआ। दूसरी ओर बाये बाजू से दीपसिह जूझारसिहोत उदयसिह भीमसिहोत आदि भी युद्ध करते हुये मातृभूमि पर बलिदान हो गये। किन्तु दुर्भाग्य की बात है कि मनोहरपुर के राव इस युद्ध मे बिना लडे ही चले गये और इसके बाद मे अन्य लोग कानसिह समतसिह लाडखानी जगरामसिह जूझारसिहोत आदि भी युद्ध भूमि से भाग गये।

युद्ध की परिस्थितिया बदलगई, केशरीसिह ने उदयसिह को जबरदस्ती खण्डेला भेज दिया ताकि खण्डेला का वश लुप्त न हो जाये, क्योकि केसरीसिह ने इससे पूर्व अपने छोटे भाई फतेहसिह का वध कर दिया था। उदयसिह को खण्डेला भेजकर केसरीसिह समर भूमि मे भूखे नाहर की भाति कूद पडे। दुश्मनो से चारो ओर से घिर जाने पर भी इन्होने भीषण सग्राम किया और अन्त मे २०० बहादुरो के साथ वे स्वय भी बलिदान हो गये। उनके साथ उनकी चारो राणिया भी सती हो गई।

हरीपुरा का युद्ध समाप्त होने पर अब्दुल्ला खा खण्डेला की ओर चढ आया। खण्डेला मे केसरीसिह की माता गौडजी ने तलवार से डटकर सामना किया, किन्तु वह वीरागना भी युद्ध करती हुई मातृभूमि पर

उत्सग हो गई और अब्दुल्ला खा की फौज किले मे घुस गई' उदयसिह को वदी बनाया गया और अजमेर ले जाकर कद कर दिया गया।

इसी समय जगतसिह काशली के पुत्र दीपसिह और भोजराजजी को ने बादशाह के विरुद्ध बगावत शुरू कर दी। यह शाही स्थानो पर धावा बोलकर लूटमार किया करते थे और इस प्रकार यह छापामार युद्ध लगातार छ वर्षों तक चला।[2] गोपालसिह और शादूलसिह, जूझारसिह के पुत्र जगरामसिह के पुत्र थे। इन दोनो भाइयो ने छापामार युद्ध मे बहुत भाग लिया। इन्होने दूसरे सरदारो के साथ मिल कर उदयसिंह को भी अपनी योजना बतलाई। शादूलसिह सहित शेखावत सरदारो ने खण्डेला पर हमला किया और वहा के अध्यक्ष देवराज को मारकर खण्डेला पर अधिकार कर लिया। इस समय बादशाह दक्षिण मे था और मारवाड मे राठौड मुगलो को बुरी तरह से तग कर रहे थे। इधर शेखावाटी मे छापामार युद्ध चल रहा था। यही कारण था कि अब्दुल्ला खा को किसी ओर से सहायता नही मिल पा रही थी।

अब्दुल्ला खा ने उदयसिह से राय मागी। उदयसिह ने कहा अगर आज्ञा~हो तो मै स्वय जाकर उनसे खण्डेला मुक्त करवाकर आपको सौंप दूगा। उसके विश्वास न करने पर उन्होने अपनी मा को जमानत बतौर रखने के लिये कहा। अब्दुल्ला खा उनकी बातो मे आगया और इस प्रकार उदयसिह ने शान्ति स्थापित की और अपनी प्रतिज्ञानुसार अजमेर चले गये। इससे अजमेर का सूबेदार बहुत प्रभावित हुआ और बादशाह से खण्डेला उदयसिह को दिलवा दिया।[3] सूबेदार का प्रतिनिधि खण्डेला पहुँचा और खण्डेला की सनद उदयसिह को

1 शादूलसिह शेखावत, इतिवत, पृ ७४

2 खण्डेला का इतिहास, पृ ६८

3 Annals and antiquities of Rajasthan vol 3 page, 1393

सौप दी। इस प्रकार गोपालसिंह, शादू लसिंह व अन्य शेखावत सरदारो के प्रयत्न से उदयसिंह को खण्डेला वैशाख सुदि ८ वि स १७६१ को पुन प्राप्त हो गया।

ववाई व पपुरना के राव निरवाण की सहायता

अरावली पवत की शृ खला के मध्य स्थित दो मुख्य स्थान ववाई और पपुरना पर वि० की अठारहवी सदी के उत्तराद्ध मे निरबाणो का राज्य था। उस समय दिल्ली के सिंहासन पर औरगजेव आरूढ था। औरगजेव द्वारा इस्लाम धम के प्रचार हेतु हिन्दुओ को मुसलमान बनाने की कुप्रवृत्ति से वहुत से हि दू मुसलमान वन गये थे। इसी काल मे ववाई व पपुरना के रावजी के दो छोटे भाई औरगजेव की सेवा मे रहते थे। उन्होने वही इस्लाम धम स्वीकार कर लिया तथा उनका नाम फौलादखा और बुलन्दखा रखा गया।[1] उन्होने बादशाह की फौज की सहायता से ववाई पर चढ़ाई कर दी और अपने भाइयो को मुसलमान बनने की सम्मति दी।[2] तत्पश्चात् रावजी को पपुरना से निकाल दिया और स्वय ववाई व पपुरना के स्वामी हो गये। रावजी सहायता प्राप्त करने के लिये धूला राव के पास गये, क्योकि उनकी बहिन धूला के कछवाहो के ब्याही थी, परन्तु धूला के राव बादशाह द्वारा समर्थित फौलाद खा और बुलन्द खा से युद्ध करने की सामथ नही रखते थे। इस कारण धूलाराव ने पपुरना राव को गोपालसिंह उदयपुरवाटी के पास जाने की सम्मति देते हुये कहा कि वे इस समय बहादुर व्यक्तियो में गिने जाते हैं। वे ही इस समय सहायता कर सकते हैं। पपुरना राव वहा से चलकर गोपालसिंह के पास पहु चे और सहायता की प्राथना की। गोपालसिंह ने उनको सन्तुष्ट किया। परन्तु लगता है कि जब तक औरगजेव जीवित रहा। गोपालसिंह उनको कोई सहायता

1 शादू लसिंह जी शेखावत दृतिवत्त पृ० ७७
2 शेखावाटी प्रकाश, अध्याय ६ पृ ६४

नही कर सके। औरंगजेब की मत्यु के बाद सम्भवत दिल्ली सम्राट बनने के लिए उथल पुथल हो रही थी। जल्दी २ बादशाह बनते जाते थे और समाप्त होते जाते थे। ऐसी स्थिति मे गोपालसिंह ने वि स १७७० ई स १७१३ के लगभग अपने भाई शादूर्लसिंह और अन्य बन्धुओं से सलाह की और मौका पाकर फौलाद खां और बुल द खा पर हमला बोल दिया और उनको मार डाला। रावजी का नवाई और पपुरना पर पुन अधिकार होगया। राव पपुरना न अपने ४५ गावो मे से २२ गाव भोजराजजी का को दिये, वे गोपालसिंह ने अपने भाइयो मे बाट दिये।[1]

तीसरा विवाह

शादू लसिह का तृतीय विवाह मारवाड के मुख्य नगर डेगाना से २० मील की दूरी पर स्थित दू गलोता ग्राम के मेडतिया राठौड ठाकुर देवीसिंह की पुत्री एव अनुपसिंह की पौत्री वख्त कवर के साथ हुआ। यह विवाह किसी समय मे हुआ, सही नही कहा जा सकता। शादू लसिह का मेडतणी के साथ विवाह २४वष की अवस्था मे हुआ माना जाता है[2] इस हिसाब से यह विवाह वि स १७६२ मे होना प्रतीत होता है और चू कि मेडतणी के प्रथम पुत्र किशनसिंह का जन्म वि स १७६६ मे हुआ। अत कहा जा सकता है कि यह विवाह वि स १७६२-६३ मे ही होना चाहिये। कहा जाता है कि शादूर्लसिंह द्वारा मेडतणी से विवाह किये जाने पर उनकी ज्येष्ठ राणी बीकावत जी नाराज हो गई और वे सल्हेदीसिंह के साथ च रास रहने लग गई। शादू लसिंह व सल्हेदी सिंह अपनी माता के साथ मावडा से यही आकर कोटडी बनाकर रहे थे।

---

[1] शेखावाटी प्रकाश अध्याय १०, पृ० १२

इनकी माता तँवर जी का देहान्त भी यही वि स १७६१ क करीव हुआ था।

शादूलसिंह की तृतीय राणी मेडतणी के गभ मे वि स १७६६ मे द्वितीय कुमार किशन सिंह का जन्म हुआ और उनके दो वष पश्चात वि म १७६८ मे इनके गभ से ही तृतीय कुमार बहादुर सिंह का ज म हुआ।

नवलडी नवाव का वध

नवलगढ से उत्तरी पूर्वी कोने मे दो मील की दूरी पर बसा हुआ नवलड़ी ग्राम उस समय झुभनू नवाव के अधिकार क्षेत्र मे था। उस समय वडे नवावो के नीचे छोटे छोटे नवाव भी थे और इन छोटे नवावो मे एक नवलडी का नवाब भी था। एक वार शादूलसिंह जो उस समय उदयपुर मे रहते थे धाडा करने के लिये नवलडी जा पहुँचे। यहा नवाव को जानकारी मिली तो उसने कई आदमियो का साथ लेकर शादूलसिंह का पीछा किया। शादूलसिंह घोडे पर सब व्यक्तियो से आगे चल रहे थे। इस प्रकार वे नवलडी से दक्षिण की ओर ६ मील की दूरी पर स्थित भाभड गाव मे पहुचे। वहा उन्हे भाभड के ठाकुर फतेह सिंह घोडे पर चढे हुये मिले। शादूलसिंह ने फतेहसिंह को नवाव द्वारा पीछा करने की स्थिति से अवगत कराया। फतेहसिंह शादूलसिंह सहित नवाव को रोकने के लिये पीछे मुड गये और युद्ध मे नवाव को मारकर भाभड आगये।

भाभड के फतेहसिंह का वध

नवाव की मृत्यु का समाचार सुनकर नवलडी नवाव की वेगम ने साजनिया फकीर को वदला लेने की बात कही। साजनिया फकीर उस समय नवलडी के आस पास के गावो से भीखमाग कर लाया करता

था और वह इसीलिये झाझड भी आया जाया करता था। इसलिये वह झाझड की हर गतिविधि से अवगत था। सम्भव है इसी कारण नवाब की बेगम ने साजनिया को बैर लेने का काय सौंपा हो। साजनिया ने नवलडी से झोली ली और उसमे प्राण घातक छुरा छुपाकर झाझड पहुँचा। रात्रि को साजनिया फकीर फतेहसिह के पास ही रुका किसी ने भी शका नही की, क्योकि साजनिया फतेहसिह के पास प्राय रात्रि मे रुका करता था। रात्रि को जब सब लोग सो गये, साजनिया फकीर उठा और सोये हुये फतेहसिह क पेट पर छुरे से दो वार किय।

फतेहसिह बहुत बलिष्ट व्यक्ति थे। वे उठ खडे हुए, शोरगुल सुनकर घुडशाला के कर्मचारी घटना स्थल पर पहुँच गये। उन्होंने साजनिया को मारडाला पर तु फतेहसिह भी बच नही सके और कुछ दिनो बाद वे भी मृत्यु को प्राप्त हो गये।

नारसिघाणी का युद्ध

फतेहसिह की मृत्यु से सम्पूण शेखावत समाज क्रुद्ध हो उठा। सभी ने फतेहसिह की मौत का बदला लेने की ठान ली। अनुमान है कि फतेहसिह के बारह दिन पूरे होते ही झाझड के शेखावत व शादूलसिह के भाई ब धु सबसे मिलकर नवलडी पर हमला बोल दिया। क्यामखानी भी अपने दल बल सहित तैयार हो गये। डू डलोद मुकुदगढ रेलवस्टेशन से दो मील की दूरी पर स्थित नारसिघाणी गाव से डेढ मील पूव दक्षिण की ओर स्थित एक टीले के उत्तरी कोने के पूव की तरफ ढालू जमीन पर दोनो सेनाओ का घमासान युद्ध हुआ। एक ओर मौत के सग खेलने वाले बहादुर राजपूत थे और दूसरी ओर दिलेर वे चौहान राजपूत थे जो फिरोज तुगलक के समय ही इस्लाम स्वीकार कर मुसलमान बने थे। दोनो ओर की सेना ही रण में पारगत थी। टीले की इस ढालू जमीन

पर दोनो सेनाम्रो का भीषण युद्ध हुआ, शेखावत प्रतिशोध की भावना से युद्ध कर रहे थे। इस कारण पूरी तरह से मरने मारने पर उतारू थे, वे इस युद्ध मे घायलसिंह की भाति लडे । शाद् लसिंह के छोटे भाई सल्हेदी सिंह ने इस युद्ध मे अनुपम वीरता प्रदर्शित की। भीषण सग्राम मे ८४ क्यामखानी मारे गये। शेखावतो की ओर से कितने मारे गये और कितने घायल हुये इसका विवरण कहीं नही मिलता, परन्तु यह निश्चित है कि इस ओर भी मरे नही तो भी घायल अवश्य हुये थे। इस युद्ध के भीषण परिणाम को देखते हुए क्यामखानियो की ओर से किसी ने कहा

"बुरी करी रै साजनिया तू उल्टी राड बसाई
एक फतेहसिंह कारणँ चौरासी राड कराई।"[1]

यह युद्ध सम्भवत वि स १७६८-१७६९[2] मे हुआ था और इस इस युद्ध को नारसिंघाणी का युद्ध कहा जाता है। इस वप वि स

---

1 शादूलसिंह शेखावत इतिवृत, पृ० ७२

2 इस युद्ध म सल्हेदीसिंह जी ने बहुत बहादुरी दिखाई थी और ये इस समय पूर्णतया शक्ति सम्पन्न थे। अत माना जा सकता है कि इस समय इनकी आयु २४ २५ वप थी। इनका जन्म वि स १७४४ म हुआ, इससे अनुमान लगाया जा सकता है कि यह युद्ध १७६८ ६९ में ही हुआ होगा।

जिस स्थान पर यह युद्ध हुआ है वह रणभूमि मने देखी है। इस ऊचे टीले को लोग आज भी साजनिया की मर कहते हैं। जहा क्यामखानी मरे हैं वहा पक्की ईटें कब्र की भाति गडी हुई हैं ये कब्रें ही हो सकता हैं। पास ही एक चबूतरा है जो पहले भी था और अभी ३० ३५ वप हुए इसे फिर बनाया गया है। इस चबूतरे की लोग आज भी जात देते हैं। लोगो का विश्वास है कि इसमे सभी तरह के मस ठीक हो जाते हैं।

१७६६ ई स १७१२ मे मेडतणी के गभ से चतुथ पुत्र अखयसिह का जन्म हुआ।

परशुरामपुरा पर अधिकार

परशुरामपुरा झुझनू से दक्षिण की ओर ३४ मील व उदयपुर वाटी से उत्तर-पश्चिम की ओर ७ मील की दूरी पर स्थित है इसके नियत्रण मे पाच गाव और थे। वि स १७७२ मे इस गाव पर भोजराज के पुत्र रघुनाथसिह के वशज दो भाइयो का अधिकार था। उनके नाम विष्णुसिह व शिवसिह थे। एक वार विष्णुसिह व शिवसिह दोनो भाइयो मे परस्पर बटवारे पर विवाद खडा हो गया और झगडा बढते बढते यहा तक पहुँच गया कि इसे सुलझाने के लिये उन्हे दिल्ली बादशाह के पास जाना पडा। इस समय तक शार्दूलसिह की प्रसिद्धि फल चुकी थी और वे इस इलाके के बहादुर व्यक्ति समझे जाने लगे थे। अत दोनो भाइयो ने अपने पाचो गाव व परशुरामपुरा इस शत पर शार्दूलसिह को सौंप दिया कि जब तक वे दिल्ली रहे, खर्चे की रकम भरते रहे और दिल्ली से लौटने पर दोनो भाइयो को वापस सौंप दें। शार्दूलसिह ने यह शत स्वीकार कर ली, यह १७७२[1] की घटना है। शार्दूलसिह ने परशुरामपुरा और उससे लगने वाले पाचो गावो पर अधिकार कर लिया और उक्त दोनो भाइयो के दिल्ली चले जाने के बाद उनका खर्चा भरते रहे। उस समय दिल्ली के सिहासन पर बादशाह फरुखशियर शासन करता था, जो सयद भाइयो के प्रभाव मे था। उस समय केन्द्र की स्थिति अच्छी नही थी। राजपूताने मे राजपूतो की समस्या बनी हुई थी और पजाब मे सिक्खो की शक्ति बढ रही थी। इधर जाटो ने दिल्ली, आगरा तक अपनी शक्ति का प्रसार कर लिया था, उनका दमन करना

1 शेखावाटी प्रकाश अध्याय १०, पृष्ठ ४

करना भी एक जटिल समस्या थी। ऐसा प्रतीत होता है कि इन परिस्थितियों में विष्णुसिंह और शिवसिंह का झगड़ा बहुत दिनों तक नहीं सुलझ सका और अन्त में वे वहीं मर गये।[1]

शार्दूलसिंह के पांचवें पुत्र नवलसिंह का जन्म भी इसी वर्ष वि. सं. १७७२ ई. सन् १७१५ में मेडतणी जी के गर्भ से हुआ।

बाघोरा का दंगा

शेखावाटी के उदयपुर शहर से तीन मील दूर दक्षिण पश्चिम के कोने पर बाघोरा का घाट स्थित है। अरावली की सुरम्य गिरि शृंखलाओं से घिरा हुआ यह स्थान सुरक्षा की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। खण्डेला उस स्थान से ७ मील दक्षिण पश्चिम में स्थित है। वि. सं. १७७६[2] ई. स. १७१९ की बात है, खण्डेला राजा उदयसिंह ने ठाकुर गोपालसिंह व अन्य भोजराजोतों को आदेश दिया कि वे खण्डेला को मामला अदा किया करें। गोपालसिंह व अन्य भोजराजोत उनके अधीन नहीं थे। इस कारण सब भोजराजोतों ने मामला देने से इन्कार कर दिया। खण्डेला राजा उन्हें अपने अधीन करना चाहते थे। इस

1. शार्दूलसिंह शेखावत इतिवृत, पृष्ठ ७३

2. बाघोरा का दंगा किस समय हुआ ? कहीं उल्लेख नहीं मिलता, किन्तु उदयसिंह ने मनोहरपुर के राव सगतसिंह पर वि. सं. १७७६ में आक्रमण किया था और इसी आक्रमण में दीपसिंह कासली उदयसिंह से अलग हो गये थे। वि. सं. १७७७ में जयपुर राजा जयसिंह ने खण्डेला पर हमला किया जिससे घबराकर उदयसिंह जी खण्डेला छोड़कर बड़ू (मारवाड़) चले गये और वे फिर कभी खण्डेला के शासक नहीं बने। बाघोरा के तुरन्त बाद गोपालसिंह व शार्दूलसिंह, दीपसिंह कासली के पास गये, क्योंकि वे मनोहरपुर के हमले के समय उदयसिंह से नाराज हो गये थे, अतः उन्होंने दोनों को शरण दी। इससे मालूम पड़ता है कि बाघोरा का दंगा वि. सं. १७७६ में ही हुआ होगा।

कारण वे नेतृत्व करने वाले भोजराजोतो को समाप्त करना चाहते थे किन्तु उनकी उठती हुई शक्ति का युद्ध से दमन नही किया जा सकता था। अत उन्होने भोजराजोतो को धोखे से मारना चाहा और फतेहपुर के नवाब सरदार खा को अपने साथ मिलाकर भोजराजोतो को नष्ट करने का षडयन्त्र रचा। कुछ समय पहले गोपालसिंह ने सिगरोड के नवाब बादूखा को फकीर की स्त्री के साथ व्यभिचार करने के कारण मार डाला था। इसलिये फतेहपुर का नवाब भी गोपालसिंह से नाराज था। दूसरे सयदो के उत्थान के साथ साथ फतहपुर और खण्डेला का उत्थान भी हो रहा था। वे अपने अपने राज्यो के विस्तार की युक्तिया सोच रहे थे क्योकि खण्डेला व फतेहपुर दिल्ली की राज नीति मे सयदगुट के साथ थे।

खण्डेला के राजा उदयसिंह व फतेहपुर के नवाब सरदार खा दोनो ने मिलकर एक उपाय सोच निकाला कि उदयसिंह भोजराजोतो के मुखिया गोपालसिंह को खण्डेला बुलवा कर मरवादें तथा नवाब अन्य भोजराजोतो को बाघोरा स्थान पर धोखे से खत्म करदे। तय हुआ कि खण्डेला मे गोपालसिंह के खत्म होने पर सकेत के लिये एक तोप दागी जायेगी और उसी समय योजनानुसार नवाब सरदार खा उनका अन्त करदे।

खण्डेला राजा व नवाब फतेहपुर ने अपने षडयन्त्र को सफल बनाने के लिये प्रयत्न शुरु कर दिये। उदयसिंह ने गोपालसिंह को स्नेह भरा आमन्त्रण दिया कि वे स्नेह पूर्वक मिलने के लिये खण्डेला आयें और दूसरी ओर नवाब फतेहपुर सरदार खा ने बाघोरा घाट पर भोजराजोतो की एक सभा का आयोजन किया। बाघोरा घाट पर एक तम्बू लगाया गया और उसके नीचे बारुद बिछा कर उपर दरिया बिछादी गयी। बाघोरा की इस सभा मे भाग लेने के लिये तेरह भोजराजोत आये।

बारह भोजराजोत तम्बू मे निश्चित नियत स्थान पर जाकर बैठ गये। शादूलसिंह को बुहाणा का पठान अपने तम्बू मे ले गया।

खण्डेला राजा के निमन्त्रण के अनुसार गोपालसिंह वहा गये उनके साथ उनके दो खवासवाल भाई उदोजी व भूदाजी भी थे। खण्डेला मे भोजन व शराब मे गोपालसिंह को विष दिया गया।[1] और जब ये मूर्छित हो गये तब इन पर तलवार से दो प्रहार किये गये। इस विकट समय मे उदोजी व भूदाजी ने अनेक शस्त्र प्रहार सहकर भी गोपालसिंह की प्राण रक्षा की। उदोजी गढ के दरवाजे के किवाड तोडकर उन्हे बाहर निकाल लाये और गुढ़ाला ग्राम मे उनकी मरहम पट्टी की।

इधर नवाब फतेहपुर तोप दागने की आवाज की प्रतीक्षा मे था। उसने शादूलसिंह को बुलाने के लिए कई बार कहा, किन्तु बुहाणा का पठान बाढेरा जो उनका दोस्त था, बडी चतुराई से उन्हे रोके रहा। यद्यपि गोपालसिंह खण्डेला से जीवित ही निकल गये थे लेकिन विष देने तथा तलवारो के प्रहार होने के कारण खण्डेला राजा ने उन्हे मरा मान कर गढ से सकेत स्वरूप तोप दाग दी। तोप की आवाज सुनते ही नवाब

1 इस घटना सम्बन्धी एक गीत इस प्रकार है

अनवी गढ आद उदपुरवालो साल मदा खण्डेला साल।
दारु पाय पियाना मानो कर किला घर माल ।। १ ।।
रोपी घात उदसिंग राजा भोजहरा भरम्या भापाल।
भडकी तेग कवहडी भीतर गाजकरी उठियो गोपाल ।।२।।
घावा घका भिडीज्यो घावा थहमाना जुधवार थयो।
विरच्यो जोध जगनरोवादी घणी अछूत गयो ।। ३ ।।
दो तरवार भई दगा सू अनवी घावा मिल्यो खरा
तेग ताड किवाडा ताड हद आयो भूभार हरो ।। ४ ।।

फतेहपुर किसी बहाने से तम्बू से बाहर आगया और संकेत के अनुसार बिछी हुई बारूद में आग लगादी। अपने मित्र शार्दूलसिंह की प्राण रक्षा के लिए उस पठान[1] ने उनको घोडा देदिया और वे उदयपुर की ओर दौड पड़े, बारह आदमी वही मारे गये।[2]

सरदारखा का उदयपुर पर अधिकार

बाघोरा के दंगे से शार्दूलसिंह का सकुशल बच निकलना तथा खण्डेला राजा के विश्वास घात के बाद भी गोपालसिंह का जीवित रह जाना उनके षड्यन्त्र की असफलता का सूचक है। फिर भी बाघोरा मे दगा करने के तुरन्त बाद फतेहपुर नवाब तथा उसके साथी की सेना ने

1 यह पठान एक बार सौदागर के रूप में उदयपुर आया था और यहा बीमार पड गया था तब शार्दूलसिंह ने उसकी बडी मदद की थी।

2 १२ भोजराजजी के ये हैं –

१ किशोरसिंह जुझारसिंह के बेटे
२ सेवसिंह मोहनसिंह के बेटे जुझारसिंह के पोते
~~३ दलसिंह रूपसिंह के बेटे जुझारसिंह के पोते~~
४ तेजसिंह भगवतसिंह के बेटे जुझारसिंह के पोते (पूख के)
५ फतेहसिंह भगवतसिंह के बेटे (पख के)
६ सुखसिंह जगरामसिंह के बेटे जुझारसिंह के पोते (पूख के)
७ दुर्जनसिंह मुकुन्दसिंह के बेटे जुझारसिंह के पोते (चिराणा के)
८ भारमल मुकुन्दसिंह के बेटे जुझारसिंह के पोते चिराणा के)
९ शम्भूसिंह मानसिंह के बेटे जुझारसिंह के पोते (गुढा के)
१० केशरीसिंह मानसिंह के बेटे जुझारसिंह के पोते (गुढा के)
११ नानसिंह सूरतसिंह के बेटे जुझारसिंह के पोते (बडागाव के)
१२ मेघसिंह सूरतसिंह के बेटे जुझारसिंह के पोते (बडागाव के)

उदयपुर पर आक्रमण कर दिया और शहर को लूटने व जलाने लगे। बारह भोजराज जी का के मारे जाने के कारण शादू लसिंह व गोपाल सिंह को बहुत सी कठिनाइयो का सामना करना पडा, उन्होने बडी मुश्किल से शहर के बच्चो व स्त्रियो को बचाया। कोई चारा न देखकर गोपालसिंह तथा शादू लसिंह कासली ठाकुर दीपसिंह के पास आ गये थे। ये दीपसिंह के पास एक साल मे भी अधिक समय तक रहे।[1]

उदयपुर पर पुन अधिकार

एक वर्ष बाद परिस्थितियो के सुधर जाने पर शादू लसिंह गोपालसिंह तथा दीपसिंह ने उदयपुर पर हमला किया और उसे पुन अपने अधिकार मे लेलिया।[2] Shekhawats and their Lands मे लिखा है कि उदयपुर को लेन के लिये एक बार पुन फतेहपुर नवाब व खण्डेला-राजा दोनो ने उदयपुर पर हमला किया। शादू लसिंह एव गोपालसिंह ने घाट की पहाडियो मे अपने मोर्च जमाये और विश्वस्त मीणाओ द्वारा शत्रु सेना को मार भगाया।

गुमान कवर का जन्म

शादू लसिंह की एक पुत्री गुमान कवर थी, जिसका जन्म[3] प्रथम राणी बीकावतजी के गर्भ से अनुमानत वि स १७७८ मे हुआ था।

---

1 Shekhawats and their Lands Page 98

2 98

3 गुमान कवर का जन्म कब हुआ ? इसके लिये मुझे परिस्थितिया तर्कों एव दन्तकथाओ का सहारा लेना पडा है और फिर ऐतिहासिक दृष्टिकोण से सत्य के नजदीक लाने का प्रयास किया गया है। शा० प्र० एव शा० शे० के अनुसार इनका जन्म खाट म हुआ। शे० प्र० के अनुसार जब गुमान कवर का जन्म हुआ शादू लसिंह के यहा लक्ष्मी का आगमन हुआ। दन्तकथाओ के अनुसार **गुमान**

शार्दूलसिंह का झुंझनू आगमन

झुंझनू शेखावाटी का एक प्रसिद्ध नगर है। यह दिल्ली से लोहारू होती हुई जयपुर जानेवाली मुख्य सडक पर दिल्ली से १५० मील की

कवर जोरावरसिह की सगी बहिन थी। Shekhawats and thier Lands व शे० प्र० के अनुसार इनका विवाह वि स १७९६ म हुआ था। जोरावरसिह का जन्म वि स १७५७ मे काट म हुआ, परन्तु उस समय शार्दूलसिह अधिक समय तक काट मे नही रहे थे। अत उस समय काट म जन्म होना युक्ति सगत प्रतीत नही होता। वि स १७७८ म जब शार्दूलसिह झुंझनू आये और उन्हे काट का पटटा मिला, उस समय म वे काट म रह थे। इस कारण उस समय अर्थात १७७८ म जन्म होना उचित जान पडता है। शेखावाटी प्रकाश के अनुसार शार्दूलसिह की ज्येष्ठ राणी बीकावत जी शार्दूलसिह के झुंझनू जाने के बाद भी जीवित थी। अत गुमान कवर का जन्म वि स १७७८ म होना समीचीन है। एक ओर गुमान कवर का जन्म होना और दूसरी ओर शार्दूलसिह को लक्ष्मी की प्राप्ति होना भी उचित जान पडता हैं क्योकि इस समय उनको काट की जागीर मिलगई थी और व नवाब के विश्वास पात्र बन गये थ तथा उनकी धाक जयपुर दरबार म भी जमने लगी थी। विवाह के सदभ म उक्त प्रसग को देखें तो वि स १७९६ म इनकी आयु १८ वर्ष की थी, जो हर तरह से ठीक प्रतीत होती है। यदि वि स १७५७ के समय काट मे इनका जन्म होता तो य विवाह के समय ३९ वर्ष के होती। इस उम्र में विवाह होना भी युक्ति सगत नहा लगता, विशेष रूप से जबकि वि स १७८७ मे शार्दूलसिह को झुंझनू मिल गया था और वे पूरी तरह समर्थ थे। अत हर दृष्टिकोण से विचार करने पर गुमान कवर का जन्म अनुमानत वि स १७७८ मे होना ही सत्य के अधिक नजदीक लगता है।

दूरी पर एक पहाडी की तलहटी मे बसा हुआ ऐतिहासिक नगर है। वि की १८ वी सदी के अन्तिम चरण के आदि मे यहा क्यामखानी नवाब फाजिल खा का पुत्र रोहिला खा शासन करता था। उस समय इस नवाबी राज्य की आन्तरिक व्यवस्था अस्त व्यस्त हो गई थी। नवाब के अधीनस्थ छोटे मोटे नवाब भी उनकी हुकूमत के बाहर होते जा रहे थे। काट के नवाब अली खा ने झुझनू के कुछ गाव अपने अधिकार मे कर लिये थे।[1] उसके अधिकर क्षेत्र के कई नवाबो ने कर देना भी बन्द कर दिया था। खेडी का बादू खा चोरी डाके डालने लग गया था, कोलसिया के नवाब तारु खा ने भी जमीन दाबनी शुरू करदी थी, बजावे का घासी खा तो झुझनू में आकर लूट मार कर के ले गया। इस प्रकार झुझनू की राजनीतिक स्थिति डावाडोल थी। नवाब रोहिला खा का विवाह नाथासर के बीका के यहा हुआ था और उसकी बेगम शार्दूल सिंह की पत्नी की बुआ थी। इस कारण झुझनूं की डावाडोल स्थिति का देखकर बेगम ने रोहिला खा से कहा कि यदि उसे झुझनू राज्य की स्थिति जमानी है तो वह शार्दूलसिंह को झुझनू बुलाकर उन्हे राज्य का भार सौंपदे। उन्ही दिनो शार्दूलसिंह भी ऐसे ही अवसर की तलाश मे थे। सम्भवत झुझनू की ऐसी हालत सुनकर वे स्वय झुझनू आये हो। वे नीले घोडे पर चढकर झुझनू की ओर चले, उनके साथ उनके छोटे भाई सल्हेदीसिंह भी थे। झुझनू से बगड जाने वाले मार्ग पर बुडाणा से कुछ दूर दोनो भाई एक पेड की छाया मे विश्राम के लिये रुके। उसी समय बुडाणा के पठान जो उस समय चोरिया किया करते थे।[2] झुझनू से चोरी कर सम्भवत बुडाणा आ रहे थे। शार्दूलसिंह

---

1 काट के अलीपा गाव यारी दाब लीयू (शिखर वशोत्पत्ति)

2 शेखावाटी प्रकाश अध्याय १०, पृ० ३

को उनसे भेंट होगई और यह जानकर कि ये डाकू हैं, दोनो भाई उनसे भिड पडे। डाकुओं के पास जो माल था, वह इन दोनो भाइयो ने छीन लिया। उस झगडे मे छ डाकू मारे गये और कुछ भाग गये। यह समाचार बिजली की तरह सब जगह फैल गया और जब यह सूचना नवाब को मिली तो उसने उनका टोडिया खाती के घर डेरा कराया। बेगम ने शादूलसिंह के खाने पीने का प्रबन्ध कराया,[1] यह अनुमानत वि स १७७८ की घटना है। रोहिला खा ने झुंझनू की नाजुक स्थिति के सम्बन्ध मे शादूलसिंह से बातचीत की और राज्य का काय शादूल सिंह को सौंप दिया।[2]

टूटिया पाचोदा का वध काट की जागीर प्राप्त करना

उन दिनो प्रजा टूटिया पाचोदा की लूटमार से आतंकित और परेशान थी। वह प्राय लूटपाट कर काट ग्राम के तालाब पर आकर

1 शेखावाटी प्रकाश, अध्याय १०,पृष्ठ ३

2 गोपाल कविया ने अपनी पुस्तक 'शिखर वंशोत्पत्ति मे झुंझनू की कमजोरी का वर्णन रोहिलाखा के मुख से इस प्रकार करवाया है।

सारा ही मता सो खासा न दाव लीना।
पसा मामला का पाच बरस मे न दीना।।
मौद्यां न बजाज सैर का न बरज दीनां।
बाणया रोसनी का तेल सारा बन्द कीना।।
सारी बाति मेरा कायदा न तो मिटाया।
सारा क्यामखा या राज सीगा न घटाया।।
सारा की जुबानी एक लासा न बठाणा।
गादी झुंझणू की स रुहिला को हटाणा।।
न्यारो ले रूहिलाखान बोल्यो बात सादा।
मेरे भायपा क जीव लेगा का ...।।

खानपान किया करता था। नवाब के भाई जाफ़वों ने इस डाकू को मारने के लिये शादूलसिंह का नाम सुझाया। शादूलसिंह ने काट मे मौका पाकर टूटिया पाचोदा का वध कर दिया। उसके सहयोगी १४-१५ सवार भाग गये और इन्होने इनके घोडे छीन लिये। नवाब को यह समाचार सुनकर बहुत प्रसन्नता हुई और उनको पुरस्कार स्वरूप काट की जागीर दी, १६ सवारो का मनसब बना दिया तथा ५ रुपये दैनिक दिये जाने लगे। इनके छोटे भाई सल्हेदी सिंह को ८००बीघा भूमि भी दी।[1]

विद्रोही नवाबो का दमन

टूटिया पाचोदा तथा अन्य डाकुओ का अन्त कर शादूलसिंह ने अपने पौरुष और बहादुरी का परिचय दिया। इससे नवाब को दृढ विश्वास हो गया कि निस्सदेह यह बहादुर व्यक्ति राज्य की अस्तव्यस्त स्थिति को व्यवस्थित करने मे सफल हो सकता है। अत उसने शादूलसिंह को उन नवाबो का दमन करने का आदेश दिया, जो झुझनू नवाब के प्रतिविद्रोह करते थे। इन्होने सर्व प्रथम अमानुला खा बडवासी[2] को अपना मित्र बनाया क्योकि उस समय यह नवाब बडा बहादुर और प्रभावशाली था।[3]

अवसर पाकर सबसे पहले इन्होने घोडीवारा[4] के हाथी खा और जरदला खा को हराया। इस प्रकार जो भी नवाब झुझनू के विद्रोही

---

1 शेखावाटी प्रकाश अध्याय १० पृष्ठ ४

2 बडवासी, नवलगढ से ६ मील पूर्वी उत्तरी कोने व झुझनू से दक्षिणी पश्चिमी कोने पर २० मील की दूरी पर बसा हुआ है।

3 शादूलसिंह शेखावत पृष्ठ १०८

4 यह गाव झुझनू से १४ मील पश्चिम उत्तर मे है।

बने हुयेथे, उन सब का दमन किया। किन्तु उन सभी नवाबो ने मिलकर शादूलसिंह की बढती हुई शक्ति और लोकप्रियता को समाप्त करने की एक तरकीब खोज निकाली और वे कोलसिया[1] ग्राम मे एकत्रित हुये।[2] यह समाचार शादूलसिंह को मिलते ही इन्होने अचानक कोलसिया के नवाब ताहसा पर आक्रमण कर उसे पराजित कर दिया और बजावा[3] के नवाब को मौत के घाट उतार कर बजावा व चेलासी[4] पर अपना अधिकार कर लिया। इनका दमन करने के बाद इन्होने रोहिली[5] रिजाणी[6] और काट[7] के नवाबो पर हमला कर उन्हे लूटा और उनके इलाके छीन लिये।[8] अब विद्रोही क्यामखानी नवाबो की कमर टूट चुकी थी। कुछ तो युद्ध मे मारे गये और जो बचे, उन्होने शादूलसिंह से संधि करली। नवाबो ने शादूलसिंह को कर देना स्वीकार कर लिया और भविष्य मे विद्रोह न करने का संकल्प किया। शादूलसिंह के इस महत्वपूर्ण कार्य से नवाब झुंझनू बहुत प्रभावित हुआ।[9]

---

1 यह गाव नवलगढ़ से ८ मील उत्तर-पूर्व मे है।

2 शादूलसिंह शेखावत इतिवृत, पृ० १०६

3 यह गाव झुंझनू से १४ मील पूर्व दक्षिण मे है।

4 यह नवलगढ से २ मील उत्तर मे स्थित है।

5 आज का नवलगढ ही उस समय का रोहिली था।

6 यह गाव झुंझनू से ८ मील उत्तर पश्चिम मे है।

7 यह गाव झुंझनू से १२ मील उत्तर मे है।

8 रोहिली रिजाणी काट तीन्यू गाव लूटया।
तीन्यू क्यामखान्या का ठिकाणा साथि छूटया।।

9 शेखावाटी प्रकाश अध्याय १० पृ० ४
शिखर वंशोत्पत्ति पृ० ६३
माधव वंश प्रकाश।पृ०।१४१

ज्येष्ठ पत्नी का बीमार होना शार्दूलसिंह का परशुरामपुरा मे निवास

अनुमानत वि स १७७८ई सन् १७२१की बात है, उनकी धमपत्नी ज्येष्ठ ठकुरानी बीकावतजी बीमार हो गई। बीमारी के बढते जाने के कारण शादूल सिंह इनके साथ परशुरामपुरा मे रहने लगे थे[1] इधर राज्य काय मे झुभनू नवाब को उनकी समय समय पर आवश्यकता पडती थी, इस कारण नवाब झुभनू उनको बुलाने के लिये बार बार सन्देश भिजवाता था, परन्तु ठकुरानी की हालत गम्भीर होने के कारण वे नवाब रोहिला खा के आदेश का पालन न कर सके, हालाकि वे उस समय झुभनू आना चाहते थे क्योकि वे जानते थे कि इस समय उनके दुश्मन उन्हे खदेडने की ताक मे बैठे हैं वे पर विवशता वश झुभनू न आसके और उन्हें कई दिन परशुरामपुरा मे ही रहना पडा।

दुश्मनो का जाल नवाब का अविश्वास

विद्रोही नवाबो का दमन कर शादूलसिंह ने झुभनू के राज्य की सुव्यवस्था करनी आरम्भ की। इस कारण कयामखानियो के साथ अन्य बहुत से व्यक्ति भी इन्हे झुभनू से उखाडना चाहते थे।[2] अत इनके दुश्मनो ने मिलकर एक षडयन्त्र रचा जिसका उददेश्य उनके प्रति नवाब के रुख को बदलना, शादूलसिंह के प्रति अविश्वास पैदा करना और उन्हे झुभनू से खदेडना था। विद्रोहियो ने मिलकर नवाब से शिकायत की - 'शादूलसिंह आपके बुलाने पर भी नही आया। राज्य के

1 शेखावाटी प्रकाश अध्याय १० पृष्ठ ४

2 शादूलसिंह शेखावत इतिवृत टिप्पणी पृष्ठ १०६

हस्तक्षेप के कारण उसे घमंड हो गया है, यदि आपको विश्वास न हो तो आप उससे टाट का पट्टा वापस लें, वह आपको हरगिज नही देगा।"

विद्रोहियो के इस स्वर से नवाब के हृदय मे शादूलसिंह के प्रति अविश्वास का अंकुर पनपने लगा बार बार आदेश भिजवाने पर उन्हें झुंझनू आना पड़ा। नवाब का मन अविश्वास से भर गया था। उनके आते ही नवाब ने उनसे टाट का पट्टा मांगा जो उन्हें टाट की जागीर के रूप मे दिया गया था। समय की चाल को देखते हुए इन्होंने नवाब को पट्टा लौटा दिया और स्वयं अपने डेरे पर लौट आये। नवाब इस घटना से बहुत लज्जित हुआ।

शादूलसिंह की अमालानुखा से अप्रसन्नता

शादूलसिंह ने झुंझनू मे अपने पैर जमाने शुरु कर दिये थे। झुंझनू दरबार मे इनके बढ़ते हुये प्रभाव से अमानुल्लाखा भविष्य के प्रति चिंतित रहने लगा। लगभग वि स १७७६ की बात है कि एक दिन एक राजपूत अपनी पत्नी को लेकर झुंझनू के बीड से गुजर रहा था कि अमानुलाखा के आदमियो ने उसका ऊंट लूट लिया और राजपूत को अपमानित किया। उक्त राजपूत अपमान नही सह सका, उसने अमानुलाखा के स्वारी को मार गिराया और वहां से सीधा शादूलसिंह के पास चला आया। अमानुलाखा ने शादूलसिंह से उस व्यक्ति की माग की, किंतु शादूलसिंह ने उसे देने से इंकार कर दिया। अमानुला खा ने इस सम्बन्ध मे नवाब रोहिला खा से शिकायत की और अपनी चालो से शादूलसिंह को झुंझनू से निकलवा दिया।[1]

बादशाही फौज का सीकर पर आक्रमण शादूलसिंह द्वारा सीकर की सहायता

1 Shekhawats and their Lands Page 99

वि स १७८० ई स १७२३ मे आगरा के किसी सेठ का लाखो रुपयो का सोना चादी डाकुओ ने लूट लिया था। संयोगवश इस वर्ष वि स १७८० ई स १७२३ मे शिवसिंह ने सीकर[1] नगर को व्यवस्थित रूप से बसाना आरम्भ किया था।

---

1 सीकर झुंझनू मे जयपुर जानेवाले मुख्य मार्ग पर स्थित एक ऐतिहासिक नगर है। सीकर को बसाने वाले राजा शिवसिंह के पिता दौलतसिंह थे। इनसे पाच पीढी पूर्व राव तिरमलजी थे, जो राजा रायमल दरबारी के पुत्र थे। बादशाह अकबर ने जब गुजरात पर दूसरा आक्रमण किया था तब तिरमलजी ने उस युद्ध मे अपनी बहादुरी का परिचय दिया था जिससे प्रसन्न होकर बादशाह अकबर ने उन्हे 'राव' की पदवी दी थी तथा साथ ही कासली की जागीर भी। कासली इस समय चन्देल राजपूतो के अधिकार मे थी। पिता की उपस्थिति मे ही इन्हे रावजी की पदवी मिली थी इस कारण तिरमलजी के वशज 'रावजी' का कहलाते हैं। अकबर ने इन्हे नागौर भी दिया किन्तु जहागीर ने नाराज होकर इनसे वापस लेलिया। तिरमलजी की मृत्यु के बाद उनके पुत्र गगारामजी को कासली छोडनी पडी, क्योकि अजमेर के सूबेदार ने उन्हे निकाल दिया था। गगारामजी के पुत्र श्यामजी हुये और उनके दो पुत्र जसवतसिंह तथा जगतसिंह हुए जसवतसिंह ढूजोद मे रहने लगे थे। खण्डेला इलाके में लूटपाट करने के कारण खण्डेला राजा बहादुरसिंह ने इनको मरवा दिया था। उनके पुत्र दौलतसिंह ने अपने बाप का बदला बहादुरसिंह के छोटे भाई सूनी के ठाकुर हणवतसिंह को मारकर लिया। वि स १७४४ ई स १६८७ में बीरभान का बास जो खण्डेला राजा ने इनके पिता को मारने के बाद दौलतसिंह को प्रसन्न करने हेतु दिया था। इसी जगह सम्भवत 'श्री' शब्द को शुभ मानकर इन्होने 'श्रीकर' नाम से नगर बसाया जो बाद में सीकर कहा जाने लगा।

किसी व्यक्ति द्वारा जब दिल्ली बादशाह को यह सूचना मिली कि आगरे के सेठ के यहां हुई सोने चांदी की चोरी से शिवसिंह सीकर में किला बनवा रहे हैं। बादशाह ने सीकर पर आक्रमण करने के लिये जानिसारखां के सेनापतित्व में एक सेना भेजदी।[1] यह समाचार सुनकर शिवसिंह ने सभी रायसलजी के वंशजों को रणभूमि में आ डटने का निमन्त्रण दिया। शार्दूलसिंह को यह समाचार उदयपुर में मिला वे अपने बड़े भाई गोपालसिंह के साथ सीकर की सहायता के लिये आ पहुँचे। मुगल सेना को पानी न उपलब्ध हो इस दृष्टि से शिवसिंह ने मार्ग में पड़ने वाले शेखावाटी के सभी कुओं को रेत से भरवा दिया। सचमुच इससे बादशाह की सेना को काफी परेशानियां उठानी पड़ी।

सवाई जयसिंह इस समय मथुरा में थे। उन्होंने अपनी पुत्री का विवाह अभयसिंह जोधपुर के साथ भाद्रपद ८ वि. सं. १७८० को करना तय किया था, किन्तु बादशाह ने न तो जयसिंह को जयपुर आने की अनुमति दी और न अभयसिंह को जोधपुर आने की। इस कारण यह विवाह मथुरा में ही हुआ। इसी समय शिवसिंह के भाई स्वरूपसिंह सीकर की सहायतार्थ जयसिंह के पास मथुरा गये। जयसिंह की शिशोदिया महाराणी जो दौलतसिंह की गोद थी, स्वरूपसिंह की बहिन थी, इस समय जयसिंह मथुरा से दिल्ली गये और बादशाह द्वारा जानिसारखां को वापस आने का आदेश दिलवाया। इस प्रकार जयसिंह के प्रयत्नों से सीकर भयंकर युद्ध की विभीषिका से बच गया तथा अनेक राजपूतों को व्यर्थ में अमूल्य जीवन नहीं खोना पड़ा।

तत्पश्चात् इनके पुत्र शिवसिंह ने इस नगर को और अधिक सुव्यवस्थित कर विकसित किया

1 शेखावाटी प्र. अध्याय ८, पृ. ६, माधव वंश प्रकाश, पृ. १३२, शि. व. पृ. ४६, शार्दूलसिंह शेखावत इतिवृत्त पृ. ११६

बाकीदास की ख्यात अनुसार यह युद्ध तीन महीने तक चला,[1] पर यह उचित नहीं मालूम पडता क्योंकि युद्ध तो हुआ ही नहीं था। देवीसिंह के अनुसार दिल्ली फौज को आन जाने मे तीन महीने लग सकते हैं। यह तथ्य तक सगत है और इस कारण समीचीन जान पड़ता है।

शार्दूलसिंह दीवान के पदपर

शार्दूलसिंह के उदयपुर चले जाने पर झुझनू दरबार मे अमानुल्ला खा बडवासी का प्रभाव पुन बढगया, किन्तु वह न तो झुझनू राज्य का प्रबन्ध ही अच्छी तरह से कर सका और न अपने मालिक को ही प्रसन्न कर सका। इसलिये नवाब रोहिला खा की बेगम ने नवाब को फिर से सलाह दी कि वह राज्य मे व्यवस्था जमाने के लिये शार्दूलसिंह को फिर बुलाये। नवाब ने बेगम की बात मानली और उसने शार्दूलसिंह को फिर से बुलाया तथा अपने राज्य को पूरी तरह से शार्दूलसिंह को सौंप दिया। इस प्रकार शार्दूलसिंह वि स १७८० में झुझनू राज्य मे दीवान की हैसियत से कार्य करने लगे।[2]

बहुत दिनो से दिल्ली को झुझनू की ओर से ट्रिब्यूट की रकम नहीं पहुंची थी। यह रकम लगभग ४ लाख रुपये हो गई थी। इस कारण दिल्ली से ट्रिब्यूट लेने के लिये कई बार कर्मचारी आचुके थे,

1 बाकीदास की ख्यात, पृ १२८

2 (i) Shardool Singh was alredy in Jhunjhunu Connected to the Nawab by marrige and holding the position of his Diwan W R Reply on page 73

(ii) Shardool singh he was in a much bettar position as the Diwan of the Quamkhani in Jhunjhunu (Jaipur state P S 4 A and Tod volum II Page 1423 W R Reply, Page 85

परन्तु नवाब का खजाना खाली था । इस कारण वह ट्रिब्यूट देने मे सर्वथा असमर्थ था ।

शादूलसिंह का दीवान का पद प्राप्त करना अमानुलाखा के लिये असह्य था । इसी वर्ष की बात है कि एक दिन शादूलसिंह हुक्का पी रहे थे[1] नवाब उनके सामने था । अमानुलाखा ने जब यह देखा तो अपना द्वेष प्रकट करते हुये बोला 'राज्य पर तो अधिकार कर ही लिया और साथ ही साथ नवाब का अपमान भी करते हो' शादूलसिंह से नही रहा गया, सम्भव है इन्होने भी उसे कुछ कह दिया हो । वाकयुद्ध शुरु हुआ और शान्त हो गया किन्तु इस घटना ने अग्नि मे घी डालने का काम किया । शादूलसिंह व अमानुलाखा के हृदय मे शत्रुता की गहरी दरार पड गई ।

फतेहपुर पर प्रथम आक्रमण

बाघोरा के दगे मे भोजराजजी का के १२ आदमी मारने मे फतेहपुर के नवाब ने अपनी पूरी बहादुरी का प्रदर्शन किया था । इस कारण इस बहादुरी का इनाम देना शादूलसिंह के लिये आवश्यक हो गया था। उनके छोटे पुत्र सल्हेदीसिंह भी इस इनाम को देने के लिये उतावले हो उठे थे । इसी समय मे एक घटना और घट गई जिसने शादूलसिंह को और अधिक सचेत कर दिया था और फतेहपुर नवाब को पुरस्कार देना अत्यावश्यक हो गया था । इन्ही दिनो नवाब फतेहपुर ने शादूलसिंह के इलाके के दो ढाढियो को मार दिया था ।[2] इन सभी कारणो के कारण फतेहपुर पर आक्रमण करना अनिवार्य था किन्तु शादूलसिंह की ताकत

1 श० प्र० अध्याय १०, पृष्ट ६

2 शे० प्र० अध्याय ८, पृष्ठ १०

शा० शे० इतिवृत्त, पृष्ठ ११८ की टिप्पणी

इस समय तक इतनी दृढ नही थी कि वे अकेले ही फतेहपुर पर आक्रमण कर देते। इसलिये इन्होने दूरदर्शिता से काम लिया। इन्होने सभी भाइयो का बुलाया और सीकर के राजा शिवसिह के पास गये। शिवसिह रायसलजी से ६ ठी पीढी पर तथा शादूलसिह पाचवी पीढी पर थे। शादूलसिह इस हिसाब से शिवसिह के चाचा लगते थे। यह वि स १७८२ ई सन् १७२५ की बात है। शेखावाटी के दो भावी महापुरुषो ने इस समय सीकर मे शेखावाटी के नवावी राज्य को खत्म करने की योजना बनाई। इस योजना मे यह तय हो गया था कि शेखावाटी के दो मुख्य क्यामखानी राज्यो को किसी भी तरह खत्म कर दिया जाये। फतेहपुर को शिवसिह अपने अधिकार मे करलें तथा झुझनू राज्य शादूलसिह के अधिकार मे रहे,[1] इसी के साथ फतेहपुर पर आक्रमण करने की योजना बनाई। उस समय दोनो ही व्यक्तियो की ताकत इतनी बढी हुई नही थी, इस कारण यह उनका प्रथम आक्रमण फतेहपुर की शक्ति को आकना मात्र था और भविष्य मे दूसरे हमले का सूचक था।

दोनो योद्धाओ ने १५० घुडसवारो को साथ लेकर फतेहपुर पर हमला बोल दिया। फतेहपुर के पास एक घना जगल था, जिसे बीड कहते हैं। वहा नवाब का ऊँटो का टोला चर रहा था। इन्होंने इन ऊँटो को ले जाने की सोची, क्योकि वे इससे ही योजनानुसार फतेहपुर की ताकत आकना चाहते थे। ऊँटो के घेरे जाने के बाद राइको ने नवाब फतेहपुर को खबर दी, फतेहपुर नवाब ने २०० सवारो के साथ काजी को भेजा[2] ११ आदमियों सहित काजी सल्हेदीसिह के हाथो मारा गया तथा काजी के बाकी सवार भाग गये।

---

[1] शेखावाटी प्रकाश, अध्याय ८ पृ० १०

2 शा० शे० इतिवृत्त, पृ० ११८

वि० स १७८३ ई स १७२६ मे जयसिंह II जयपुर ने झुंझनू की ट्रिव्यूट का इजारा लिया। विल्स रिपोर्ट के अनुसार यह इजारा जागीरदार इस्लाम खा से लिया था।[1] झुंझनू के ट्रिव्यूट के इजारे की रकम इकट्ठी करने के लिये जयसिंह II ने हरिसिंह छावडा को, जो एक वनिया था, यह काय सौंपा। सम्भव है पहले क्यामखानियो ने ट्रिव्यूट देने से इन्कार कर दिया था।[2] इसलिये छावडा ने जयपुर राज्य के १००० सवार तैनात किये तथा नवाब के मुत्संदी और शादूलसिंह को १०००) रुपये दिये।[3] विल्स रिपोर्ट के उत्तर मे लिखा है कि इसके उपरान्त भी वह ट्रिब्यूट वसूल नही कर सका तो नवाब से ३१०००) रुपये व मुत्संदी तय किये। इसके वाद भी १०००) रुपये शार्दूलसिंह को देने पडे,[4] इससे प्रतीत होता है कि वि स १७८३ मे शार्दूलसिंह के पैर इतने मजबूत हो गये थे कि इनकी सहायता के बिना झुंझनू मे कोई भी काय करना किसी के लिये सम्भव नही था।

महबूबखां का अन्त अमानुलाखा द्वारा मीरखा का वध

फतेहपुर का नवाब सरदार खा II दिन प्रतिदिन ऐश आराम मे डूबा जा रहा था, फतेहपुर मे ही वह एक तेलिन को अपनी बेगम के रूप मे रखने लगा था, उस तेलिन के एक पुत्र उत्पन्न हुआ जिसका नाम महबूब खा रखा गया। सरदार खा इसी को अपना उत्तराधिकारी बनाना चाहता था। जिससे अन्य क्यामखानी इससे वहुत नाराज थे, क्योंकि उस समय रक्त की पवित्रता व खानदान पर विशेष बल दिया जाता था।

1 W R Reply page 151
2 151
3 , 152
4 , 152

अत क्यामखानी लोग मिश्रित खून से उत्पन्न महबूब खा को फतेहपुर का राज्य नहीं देना चाहते थे। वे फतेहपुर नवाबों के चलने वाले खानदानी व्यक्ति को ही फतेहपुर का नवाब बनाना चाहते थे। महबूब खा अपने आप को फतेहपुर का नवाबजादा मानने लगा था और उसे इस का बहुत घमण्ड हो गया था। सरदार खा के छोटे भाई का नाम मीर खा था। एक दिन महबूब खा ने मीरखा के घोड़े से अपना घोड़ा टकरा दिया।[1] मीर खा इससे पहले से ही नाराज था समय का सदुपयोग करते हुये उसने क्रुद्ध होकर महबूब खा पर तलवार चलादी। इस प्रहार से महबूब खा मारा गया।

इस समय झुंझनू व फतेहपुर दोनो की परस्पर दुश्मनी थी।[2] इस कारण मीर खा फतेहपुर से चलकर झुंझनू आगया व झुंझनू से वह फतेहपुर के इलाके म धाडा मारा करता था और उसे लूट पाट कर झुंझनू लौटा करता था। इससे सरदार खा बहुत चिंतित हुआ और उसने किसी प्रकार मीर खा को मरवाना चाहा। उसने गुप्त रूप से अमानुल्ला को फतेहपुर बुलाया, क्योंकि उस समय अमानुला खा झुंझनू मे शादूलसिंह की बढती हुई शक्ति से बडा चिंतित था और नवाब से भी नाराज था। इस कारण फतेहपुर नवाब ने अमानुला खा को पूरा लालच देकर अपनी ओर मिला लिया और मीर खा को मारने का काय इसे सौंपा। मीर खा को मारने के लिये अमानुला खा राजी हो गया। एक दिन झुंझनू दीवान खाने मे बैठे बैठे दोनो मे वाक्युद्ध छिड

1 महबूब को घोड़े पर सवार देखकर किसी कवि ने कहा –
"खानाजादा खेती कर, तेली चढ तुरंग।
देखो मेरा सुनायक क के पलट रंग॥"

2 शा० शे० इतिवत, पृ० ११०

गया। दुश्मन तो सिर्फ बहाने की खोज मे रहता है, बातो ही बातो मे अमानुला खा ने तलवार खीचली और मीर खा पर प्रहार कर दिया। अमानुला खा के प्रहार से मीर खा मारा गया,[1] फतेहपुर के नवाब को जब यह समाचार मिला तो वह बहुत खुश हुआ और उसने चैन की सास ली।

शादूलसिंह द्वारा नवाब को दिल्ली ले जाना राज्य कर की किश्तो का निर्धारण

झुंझनू फतेहपुर और नरहड आदि नवाबी राज्य उस समय दिल्ली के सीधे नियंत्रण मे थे। झुंझनू राज्य की अव्यवस्था के कारण उससे नियन्त्रित छोटे छोटे नवाबो ने कई वर्षों से राज्य कर नही चुकाया था। इस कारण झुंझनू की ओर से दिल्ली बादशाही का राज्य कर करीब ४ लाख रुपये बकाया था। शादूलसिंह वि स १७८० ई स १७२३ मे राज्य के दीवान बनाये गये। इन्होने राज्य को सुव्यवस्थित किया। एक साथ इतनी रकम दिल्ली को देना बहुत मुश्किल काम था। इस कारण शादूलसिंह नवाब रोहिला खा को वि स १७८३ ई स १७२६ मे दिल्ली ले गये। वहा इन्होने झुंझनू के राज्य कर (ट्रिब्यूट) की किश्तें कायम की। शादूलसिंह नवाब रोहिला खा को तो वही छोड आये तथा स्वय झुंझनू लौट आये। सम्भवत नवाब को शादूलसिंह पर पूरा विश्वास था, इस कारण कुछ दिन के लिये वह वही रुक गया।

फतेहपुर पर दूसरा हमला कामयाब खा को नवाब बनाना

फतेहपुर का नवाब सरदार खा जिसने एक तेलिन को बेगम के रूप मे रख लिया था और उसके पुत्र महबूब खा को अपना उत्तराधि-

---
1 शा० शे० इतिवत पृ० १११

कारी बनाना चाहता था। इस कारण फतेहपुर के अधिकतर क्यामखानी उससे नाराज थे। इसके अतिरिक्त उसने अपने भाई मीर खा को भी मरवा दिया था, इन सभी कारणों से क्यामखानी उससे प्रसन्न नहीं थे। वे मीर खा के पुत्र कामयाब खा को नवाब बनाना चाहते थे। इस कारण अधिकतर क्यामखानी कामयाब खा के पक्ष में थे। कामयाब खा के नाना अहमद खा भिरड ने क्यामखानियों की इस भावना का पूरा लाभ उठाना चाहा। वह बड़ी वेसवा के क्यामखानियो से मिला और सलाह की, इस समय फतेहपुर नवाब सरदारखा से शिवसिंह टक्कर ले सकते हैं और उनकी ताकत से सरदार खा को अपदस्थ कर कामयाब खा को नवाब के पद पर आसीन किया जा सकता है। एक बार शिवसिंह को कुछ लालच देकर अपना काम निकाल लेना चाहिये।

आपसी सलाह करने के बाद वे सीकर के राजा शिवसिंह के पास गये और उन्हे फतेहपुर पर आक्रमण करने के लिये प्रेरित किया। शिवसिंह अपनी योजनानुसार फतेहपुर पर अपना अधिकार करना चाहते थे। वे इसके लिये तुरंत राजी हो गये। उस समय शिवसिंह और क्यामखानियो के बीच एक शर्तनामा मजूर हुआ, जिसके अनुसार सरदार खा को नवाब के पद से हटाकर कामयाब खा को फतेहपुर का नवाब बनाया जायेगा, राज्य प्रबन्ध शिवसिंह की सलाह से ही चलेगा और शिवसिंह को फतेहपुर के २५ गाव दिये जायेंगे जो इनके प्रति वफादार रहेंगे।

शर्तनामा होने के बाद शिवसिंह ने रामसिंह कासली तथा शादूलसिंह को सीकर बुलाया और फतेहपुर पर हमला करने की योजना बनाई।

शिवसिंह, रामसिंह व शादूलसिंह तीनो ने मिलकर वि स १७८६ ई स १७२६ मे फतेहपुर पर हमला किया। सभी शेखावत

रात्रि मे ही फतेहपुर पहु च गये। सुवह होते ही जव दरवाजे खुले, राजपूत लोग पूव योजनानुसार किले मे घुस गये । शेखावतो से घवडाकर किले मे स्थित नवाव की सेना इधर उधर भागने लगी । क्यामखानी तो पहले ही किले से वाहर आ गये थे । नवाव की सेना के एक क्यामखानी ने रामसिह पर वार किया परन्तु वह प्रहार घोडे पर हुआ और वह वही मर गया, तुरत ही रामसिह ने उसे वही ढेर कर दिया । सरदार खा को शेखावतो के समुख झुकना पडा । सरदार खा को[1] नवाव-पद से हटाकर उसकी सालाना पेशन नौ हजार रुपये कर दी गयी तथा उसके स्थान पर कामयाव खा को फतेहपुर का नवाव बनाया गया । शिवसिह ने अपने श्वसुर भावसिह बीदावत (ठाकुर दातरू) को प्रधान नियुक्त किया । इस प्रकार दूसरे हमले मे भी शेखावतो की विजय हुई ।

वि स १७३० ई १७८७ मे जयसिह II ने नारनौल के नवाव सयद मुज्जफर अलीखा से पाच मुगल महालो को इजारे पर लिया । इजारे[2] की साल १७३० की रकम १७८५८५)रु० तीन आना नारनौल के नवाव को देनी थी । इसमे से३७२३४) चुका दिये गये, शेष रकम १४१३५१) रु० तीन आने रही । वह रकम मोहनसिह, शादूलसिह एव हरिसिह छावडा को देनी थी,[3] क्योकि जयसिह ने इन तीनो को इजारा दे दिया था। अत उक्त तीनो के हिस्से की रकम ४७११८)रु०एक आना इन्हे चुकानी थी।

1 नवाव सरदार खा II ने अपनी उपाधि सवाई कयाम खा रखी थी । इस कारण यह नवाव सरदार खा II तथा सवाई कयामखा कहलाता था ।

2 P S 30 40 *E* 49 W R Reply page 154

3 W R Reply

अध्याय ३

शार्दू लसिह् के जीवन का उत्तरार्द्ध

शादू लसिह् के पूर्वाद्ध जीवन मे उनके पारम्भिक जीवन का ऐतिहासिक दृष्टिकोण से मूल्याकन करने के बाद उनके उत्तराद्ध जीवन का इतिहास सामने आता है। उनका प्रारम्भिक जीवन बडे सघष के साथ बीता एव इन्हे अनेक कठिनाइयो का सामना करना पडा, किन्तु सोना खरा तभी होना है जब उसे आग मे खूब तपाया जाता है। प्रारम्भिक जीवन के अनेक कष्ट और सघष उनके उत्तराद्ध जीवन को निखारने के लिये आवश्यक थे। राज्य प्राप्ति के समय से अन्त तक के जीवन को उत्तराद्ध भाग मे रखकर ऐतिहासिक दृष्टिकोण से मूल्याङ्कन करेंगे।

झु झनू पर अधिकार

शादू लसिह् ने अनुमानत वि स १७७८ मे झु झनू मे पदापण किया। इसके उपरान्त प्रखर बुद्धि, कुशल राजनीतिज्ञ और एक बहादुर व्यक्ति होने के कारण वि स १७८० ई स १७२३ मे वे झु झनू राज्य के दीवान बन गये। वि स १७८३ मे नवाब रोहिला खा के साथ दिल्ली पहुच कर तथा झु झनू की ट्रिब्यूट की किश्तें कायम कर लौट आने के बाद इन्होने राज्य को व्यवस्थित प्रशासन दिया। झु झनू राज्य से नियन्त्रित सभी छोटे छोटे नवाबो को जमीदारो के रूप मे बदल दिया।[1] उनसे प्राप्त होने वाला राज्य कर प्रजा से सीधे सम्पक द्वारा लिया जाने लगा। सभी नवाबो की शक्ति कमजोर हो गई। बडवासी

1 शेखावाटी प्रकाश अध्याय १० पृ० ५

का नवाब अमानुला खा एलमाए पहले से ही इनका कट्टर शत्रु बन गया था। इस कारण उसने अन्य नवाबों को भी शादूलसिंह के विरुद्ध भडकाया,किन्तु उनकी शक्ति के प्रभाव से छोटे छोटे नवाब चाहते हुये भी उनका सामना नही कर पाते थे।

अमानुला खा एलमाए के लिये दिल्ली जाकर नवाब झुंझनू से शिकायत करने के सिवाय कोई चारा नही रहा। इसलिये वह अपने भाई मदारी खा के साथ दिल्ली गया और वहा जाकर रोहिला खा से शादूलसिंह की शिकायत की तथा उनका घोर विरोध किया। नवाब को शादूलसिंह पर पूर्ण विश्वास था, किन्तु अमानुलाखा के विरोध ने उसके विश्वास की जडें खोखली करदी। अमानुला खा की बात उसे कुछ कुछ सत्य प्रतीत हुई और वह झुंझनू के लिये रवाना हो गया। नवाब कानूड पहुँचा, कानूड पहुँचते पहुँचते वह बीमार हो गया। दन्तकथाओं द्वारा सुना जाता है कि बीमार होने के कारण रोहिला खा कानूड या सिंघाना मे ही मर गया, परन्तु शिवसिंह एव शादूलसिंह द्वारा फतेहपुर के अन्तिम आक्रमण के समय वि स १७८८ माह सुदि८ लाला हेमराज जयपुर को भेजे गये पत्र से मालूम होता है कि रोहिला खा झुंझनू, शादूलसिंह के नियत्रण मे फतेहपुर के विरुद्ध लडा था।[1] प्रतीत होता है कि रोहिला खा मरा नही था, वह झुंझनू आया होगा और यहा पहुँचकर जब उसने एक ओर शादूलसिंह द्वारा किये गये सुव्यवस्थित शासन को देखा तथा दूसरी ओर उदण्डो क्यामखानियो की विद्रोही भावनाएँ तो अपनी व्यवस्था कायम कर शादूलसिंह को झुंझनू का राज्य सौंप दिया होगा। झुंझनू का राज्य दिलाने मे सम्भवत नवाब की बेगम का बहुत हाथ था,क्योंकि उसका उन पर बहुत स्नेह था। शादूलसिंह ने नवाब से झुंझनू का पट्टा प्राप्त किया और राज्य पर

1 W R Reply page 160 (English)

पूर्ण अधिकार करने के लिए उदयपुरवाटी से अपने विश्वसनीय भाई बन्धुओं को बुलाया तथा मार्गशीर्ष सुदि ८, शनिवार, वि स १७८७ तदनुसार ५ दिस १७३० को झुंझनू पर अधिकार कर लिया[1] और इस प्रकार झुंझनू मे उनकी स्थिति सुदृढ हो गई,[2] जिसका सूचक निम्न लिखित दोहा है -

"सतरा सौ सत्तासिये, अगहन मास उदार ।
सादै लीनी झुंझणू, सुद आठै सनिवार ॥"[3]

झुंझनू पर दोसौ वर्षो से ऊपर तक चलने वाला कयामखानी शासन हमेशा के लिये समाप्त हो गया ।

---

1 शा शे इतिवत, पृष्ठ १२१ कर्नल लाकेट जनरल, पृष्ठ ६०, वाकीदास री ख्यात पृ० १२८, विलस रिपोर्ट उत्तर पृ० ८२ (हिंदी) ए ए वाल्यूम ३, पृ १४२३

शेखावाटी प्रकाश, अध्याय १०, पृ ७

खेतडी का इतिहास, पृ ३५

2 W R Reply Page 167 (English)

3 ठा० देशराज ने अपनी पुस्तक 'जाट इतिहास' में पृ ६११ पर लिखा है ।

सादै लीयो झुंझणू लीनो अमर पट
बेटे पोते पडौते पीढी सात लट ॥

अर्थात–सादुल्ले खा से इस राज्य को झुझा (जुझारसिंह) ने लेलिया वह तो अमर हो गया । अब इसम तेरे वशज सात पीढी राज करेंगे ।

झुंझनू का मुसलमान सरदार जिसे सरदार जुझारसिंह ने परास्त किया था, सादुल्ला नाम से मशहूर था । झुंझनू किस समय सादुल्ला खा से जुझारसिंह ने छिनाया था । इस बात का पता निम्न काव्य से चलता है ।

"सत्रह सौ सत्यासी, आगण मास उत्तार ।
साद, लहो झुंझनू सुदि आठैं शनिवार ॥

अमानुलाखा का दिल्ली जाना

नवाब रोहिला खा द्वारा राज्य सौंपने पर शादूलसिंह ने झुंझनू पर अधिकार कर लिया तो अमानुला खा एलमाणी इससे बहुत चिंतित हुआ और सभी क्यामखानियो ने यह सोच लिया कि अब हम अपनी ताकत से झुंझनू का राज्य छीन नही सकते। क्यामखानियो की सत्ता का अंत देखकर अमानुला खा जो बहादुर योद्धा के साथ साथ हौसले वाला व्यक्ति भी था, ने सभी क्यामखानियो को एकत्रित किया

मालूम नही, लेखक ने ऐसी अनगल और उटपटांग बातें कैसे लिख डाली। दोहो के अर्थों को देखने से मालूम होता है कि लेखक ने या तो जानबूझ कर अपना अहम् दिखाया है या दोहो के अर्थ करने म असमर्थ रहा है। उपयुक्त प्रथम दोहे का अर्थ कितना गलत लिखा है। सादुलेखा से झूझा ने इस राज्य को ले लिया। साद' का अर्थ यहा शादूलसिंह शेखावत है, न कि सादुले खा मुसलमान। यह दोहा शादूलसिंह द्वारा झुंझनू लने के बाद किसी चारण ने कहा था जिसका सही अर्थ यह होगा–

'सादे लीयो झुंझणू अर्थात् शादूलसिंह ने झुंझनू लेलिया 'लियो अमर पट अर्थात राज्य अमर पट्टे पर है(उनसे कोई छीन नही सकता) 'बेटे पोते पडौते पीढी सात लट अर्थात-इनके पुत्र, पौत्र एव प्रपौत्र सात पीढी राज्य करेंगे।

इसी तरह दूसरे दोहे म भी'सादे का अर्थ शादूलसिंह है और यह दोहा उनकी झुंझनू विजय का सूचक है न कि जुझारसिंह की विजय का। न तो सादुल्ले खां नाम का कोई झुंझनू म मुसलमान सरदार था और न जुझारसिंह ने उसे परास्त किया था। ये सब कपोल कल्पित और मनगढ त बातें हैं। इस इतिहास म ऐसी अनेको निराधार बातें जगह जगह लिखी हुई हैं। इतिहास के विद्यार्थियो, शोध कर्ताओ एव पाठको को ऐसे गलत प्रसगो को पढकर अपनी गलत धारणाए नही बना लेनी चाहिए।

और भुभनू से क्यामखानी सत्ता की समाप्ति तथा शादूलसिंह द्वारा झुंभनू राज्य को हडपने की वात उनसे कही तो सभी क्यामखानी अमानुलाखा के साथ हो गये। उन्होने निश्चय कर लिया कि अमानुला खा जिस व्यक्ति को भुभनू का नवाब मनोनीत करेगा, हम पूर्णरूप से उसका समथन करेंगे।

क्यामखानियो की शक्ति अब इतनी नही थी कि वे शादूलसिंह को भुभनू की गद्दी से उतार सकें। इस कारण अमानुला खा के नेतत्व मे क्यामखानी दिल्ली बादशाह के पास भुभनू वापस लेने के लिये मदद हेतु गये। काटी मे उन्होने नूआ के एक लडके को नवाब घोषित किया। इसी समय सवाई जयसिंह जयपुर, मालवा के सूबेदार थे, उनकी दिल्ली दरबार मे अच्छी धाक थी। अमानुलाखा की पुकार एक वर्ष तक बादशाह के पास नही पहुँची। सम्भव है सवाई जयसिंह ने उनकी आवाज बादशाह तक न पहुँचने दी हो।

उदण्ड क्यामखानियो का दमन प्रदेश मे शान्ति स्थापित

शादूलसिंह द्वारा भुभनू की गद्दी पर अधिकार जमा लेने के बाद क्यामखानी इनसे बहुत असन्तुष्ट हुये। उधर अमानुलाखा भुभनू पर क्यामखानियो का आधिपत्य स्थापित करने के लिये दिल्ली की ओर चल पडा और इधर क्यामखनी प्रदेश मे उत्पात मचाने लग। इस कारण शादूलसिंह स्वय भुभनू मे रहे तथा अपने पुत्र जोरावरसिंह व भाई सल्हेदी सिंह को उदण्ड क्यामखानियो का दमन करन हेतु भेजा। सल्हेदीसिंह और जोरावरसिंह दोना प्रदेश मे शान्ति स्थापना हेतु निकले व समस्त उपद्रवी क्यामखानियो का दमन किया। जिन क्यामखनियो ने इनकी अधीनता स्वीकार की वे ही इस प्रदेश मे टिक सके अन्य मारे गये या प्रदेश छोडकर भाग गये। इस प्रकार उत्पाती क्यामखानिया का दमन कर भुभनू प्रदेश मे शान्ति व सुव्यवस्था कायम की गई।

शार्दूलसिंह का १७८८ का परवाना

मलूकचन्द कानूनगो जो नवाब रोहिलाखा के दरबार मे था, उसे जीविका के रूप मे नवाब न देहलसर और सोनासर गाव दे रखे थे। शादूलसिंह ने झुंझनू पर अधिकार करने के बाद फिर से एक परवाना वैशाख वदि ६ वि स १७८८ को जारी किया और दोना गाव मलूकचन्द कानूनगो को उसकी (नानकार) जीविका के रूप मे प्रदान कर दिये।[1]

वृन्दावन गमन

झुंझनू पर अधिकार करने के बाद शादूलसिंह ने तीर्थ यात्रा हेतु वृदावन जाने का विचार किया। ज्येष्ठ वि स १७८८ मे वृदा-

---

1 1 सिद्धश्री राजश्री शादूलसिहजी लिखत मलुकचन्द कानूनगो वाक कदीम सू नानकार मे मौजा देलसर को सोनासर माह छ मो माह का अमल मे वो बात पर गावा म गाव १ की सेचल हो नही यासू कोई जावेगा सेवल दाय १ की करवा पावे नही मीती वसाख बदी ६ स १७८८ द करमचन्द का

2 मोहर शादूलसिंह की

सिद्ध श्री राज श्री शादूलसिंहजी लिखत मलुकचन्द कानूनगो वाको दस्तूर परगना झुझणू मे छ सो सरवरा करादेस्या जागीरदारा के गाव रुपया २) अकेही खालसा के गावा पावण सिरियासर १/१२।। अकेहो ढाई सैंकड़ा सू ऐ मुवाफीक मीखी सरवरा कराई देस्या मीती बैसाख बदी ६ स १७८८ का

3 W R Reply page 181 (English)

Parwana of Shardool Singh The villages of Dahelsar and Sonasar are from old in Nankar mantenance grants of Maluk Chand Qanoongo There will be no sort of troable in my amal Shardool Singh is styled as Banda i Dargah

(Baisakh Badi 9 Sambt 1788)

2 मथुरा शहर से ४ मील उत्तरी पूर्वी कोने पर वृन्दावन हिन्दुओं का प्रसिद्ध तीर्थ स्थल एव श्री कृष्ण की क्रीडा भूमि है।

बन गये और वहा अपने कुल के इष्टदेव श्री गोपीनाथ के दर्शन किये तथा परशुरामपुरा का एक गाव गोपीनाथ पुरा श्री गोपीनाथ जी की पूजा हेतु ज्येष्ठ वदि २ वि स १७८८ को भेंट किया।[1]

महन्त पुरुषोत्तमदास के नाम जमीन का पट्टा

कार्तिक वदि २ वि स १७८८ मे शार्दूलसिह ने लोहागल की ५०१ वीघा जमीन महन्त पुरुषोत्तमदास जी को श्री जी के भोग के लिये प्रदान की, जिसका पट्टा कार्तिक वदि २ वि स १७८८ सन् १७३१ का है। जिसको शादूलसिह के आदेश से कर्म चन्द ने प्रदान किया।[2]

नरहड पर अधिकार

नरहड शेखावाटी का एक प्राचीन नगर है। यह वि स १७८८ ई स १७३२ मे नवाव अव्दुल करीम खा पठान के अधिकार मे था। अव्दुल करीम खा के पिता कुतुव खा और नारनौल के हाकिम अली-कुली खा की परस्पर दुश्मनी थी। जोरावर सिह अली कुली खा के दोस्त थे। जोरावर सिह ने अलीकुली खा से मिलकर नरहड का पट्टा वादशाह मुहम्मदशाह से अपने पिता शादूलसिह के नाम करवा लिया। दुश्मनो ने शादूलसिह को वहकाने की कोशिश की कि जोरावर सिह ने नरहड का पट्टा अपने नाम करवा लिया है। यह सुनकर शार्दूलसिह

---

1 W R Reply Page 181
Grant by Shardool Singh Shardool Singh went to Darshan of Shri Gopinathji in Bindraban and so he presented the village of Gopinathpore for Bhog Deity of the land of this vill ge formerly formed part of Parasrampura Signed by Karam Chand (Jeth Badi 2 Sambat 1788)

2 W R Reply Page 181

पुत्र से कुछ नाराज हुए, परन्तु वास्तविक स्थिति जानने पर बहुत खुश हुए और वि स १७८८ ई स १७३२ मे बगड नरहड पर चढाई करदी।[1] अब्दुल करीम खा का केन्द्रस्थल उस समय बगड ही था। शादूलसिंह की धाक इतनी जम चुकी थी कि नाम सुनते ही बगड के पठान भाग खडे हुए। वे नरहड की ओर दौड गये, बगड पर अधिकार कर लिया गया। बाद मे जोरावर सिंह ने नरहड पर अधिकार कर लिया और पठान भाग गये।

फतेहपुर पर तीसरा आक्रमण शिवसिंह का आधिपत्य

वि स १७८६ ई स १७२६ मे शिवसिंह व शादूलसिंह ने नवाब सरदार खा को हटाकर कामयाब खा को फतेहपुर का नवाब बना दिया था, किन्तु शिवसिंह और क्यामखानियो के बीच हुये शतनामे का नवाब कामयाब खा ने उलघन करना शुरु कर दिया था। उसने न

1. (अ शेखावाटी प्रकाश भ १०, पृ० ६ शादूलसिंह शेखावत, पृ १२४ पर शादूलसिंह द्वारा नरहड पर अधिकार करना वि स १७६४ मे लिखा है परन्तु यह समीचीन नही जान पडता। बगड के प्रसिद्ध सन्त रूपादास जी को शादूलसिंह ने कार्तिक सुदि १५ वि स १७६१ को बगड की ३०० बीधा जमीन का ताम्र पत्र दिया। अगर वि १७६४ में शादूलसिंह का बगड-नरहड पर अधिकार होता तो वि १७६१ में पठानो की जमीन का ताम्रपत्र नही दिया जा सकता। पठान मे० यासीन खां जयपहाडी का भी यही कहना है कि शेखावतों ने उनसे सन् १७३२ मे राज्य ले लिया था। अत यही ठीक प्रतीत होता है कि शादूलसिंह ने झुंझनू लेने के कुछ दिनो उपरान्त ही बगड नरहड पर अधिकार कर लिया था।

(ब) थिर झुंझणू थान, फिरी आन सादूल नप।

तो शिवसिंह को २५ गाव ही भेंट किये और न भावसिंह बीदावत व चूडी बेसवा के क्यामखानियो को शासन प्रबन्ध मे रखा। उन्हें शासन प्रबन्ध से हटा दिया गया। शिवसिंह को यह अच्छा नही लगा। इनकी ताकत अब अधिक बढ चुकी थी, उधर झुंझनू पर शादूलसिंह अधिकार कर चुके थे और इधर फतेहपुर की हालत भी दिनो,दिन बिगडती जा रही थी। शादूलसिंह का झुंझनू पर, अधिकार होने के कारण फतेहपुर के क्यामखानियो को बहुत चिंता हुई कि कही शेखावत फतेहपुर पर भी अधिकार कर क्यामखानी राज्यो को समूल ही नष्ट नही कर दें। इसलिये क्यामखानी अपने आपसी वैर भाव को ताक मे रखकर सब एकत्रित हो गये।

फतेहपुर पर आक्रमण करने और उस पर विजय प्राप्त करने के लिय शिवसिंह व शादूलसिंह के माग मे कई बाधाए थी। वे यह भी जानते थे कि विजय प्राप्त कर लेने पर भी स्थिर रह सकना मुश्किल है। क्यामखानियो की सहायताथ दिल्ली से भी सेना आ सकती है और ऐसी परिस्थितियो मे वे फतेहपुर कब्जे मे नही रख सकेंगे। इस कारण हमले से पूव दिल्ली से आने वाली शक्ति को रोकना आवश्यक था। दिल्ली के सिंहासन पर इस समय मुहम्मदशाह शासन करता था और जयपुर के सवाई जयसिंह इस समय मालवा के सूबेदार थे। दिल्ली दरबार मे उनकी अच्छी प्रतिष्ठा थी। इस कारण शिवसिंह और शार्दूल सिंह जयपुर गये तथा फतेहपुर पर अधिकार करने की अपनी योजना प्रस्तुत की और दिल्ली की ओर से आने वाली शक्ति को रोकने की उनसे प्रायना की।

फतेहपुर सैयदो के गुट मे था और इस कारण वह शुरु से ही जयसिंह का विरोधी था। जयसिंह भी अपने दुश्मन को नष्ट करना चाहते थे। इसके अतिरिक्त शिवसिंह व शादूलसिंह भी कछवाहा कुल

के होने के कारण रक्त का सम्बन्ध भी था। यही दो कारण थे जिनके कारण जयसिंह ने सहायता देना उचित समझा तथा शिवसिंह और शार्दूलसिंह से कहा कि दिल्ली की ओर से होने वाली हरकतों को रोकने के लिये नारनौल के नायब सूबेदार सैयद मुजफ्फर अली खा को तीस हजार रुपए देने पड़ेंगे और कोषागार का काम करने वाले खत्रियो को ६००००) रुपये देने होंगे[1] इसके अतिरिक्त आक्रमण का खर्चा भी चाहिये। शिवसिंह व शार्दूलसिंह ने इन्हे मंजूर कर लिया और इसके बाद वे दीपसिंह कासली और रायमल खत्री से भी बातचीत की तथा तय किया कि जयसिंह को पेशकश के पचास हजार रुपये दिये जायेगे। जयसिंह ने उन्हे भली भांति आश्वासन देकर संतुष्ट किया कि यदि दिल्ली की ओर से कोई गड़बड़ी होगी तो इसकी पूर्ण जिम्मेदारी उनकी होगी। इसके अतिरिक्त युद्ध में तोपो की सहायता देने की बात भी तय रही। शिवसिंह के पास इतनी भारी रकम चुकाने का प्रबंध नहीं था, इसलिए उन्होंने अपने राज्य की चार पट्टियां कटराथल, जुलियासर, सीहोर तथा धाटोदा के ८० गांव गिरवी रखे।[2] इस प्रकार उन्होंने अपनी पूर्ण व्यवस्था की और फतेहपुर पर हमला करने के लिए वापस चल पड़े तथा १२ दिन बाद उदयपुरवाटी पहुंचे। वहां शार्दूलसिंह की जागीरें उदयपुर, बसावा और गुढा मे जो कुछ गड़बड़ियां थी, उन्हे सुलझाया और उदयपुर के भाइयो के साथ सीकर पहुँच गये, परन्तु गोपालसिंह इनके साथ नहीं आये।

1 W R Reply Page 162
Shiv Singh s letter S 40 Dated 12th March 1732-
शार्दूलसिंह शेखावत इतिवृत, पृ १२५

2 *W R Reply, Page 162*
S 40 A Letter written by Shiv Singh to a Jaipur Minister Vija, Ramji on 12th march 1732

सीकर पहुँचकर शिवसिंह और शार्दूलसिंह ने अपनी सेना इकट्ठी की और फतेहपुर पर आक्रमण करने के लिये चल पडे। वे फतेहपुर से २ मील की दूरी पर रेतीले टीला मे अगे माडीले स्थान पर पहुँचे। फौज का पडाव वहीं हुआ। इसी स्थान पर शिवसिंह के श्वसुर भावसिंह बीदावत अपने ८०० वीरो को लेकर उनसे मिले और अब इनके पास ८६ हजार फौज हो गई। दुश्मनो पर किस ओर से तथा किस ढंग से आक्रमण किया जाये और विजय किस प्रकार हासिल की जा सके, पूर्ण सोच विचार के बाद हमले की पूरी तैयारी की गई। इस हमले की योजना बनाने मे पूंख के ठाकुर ज्ञान सिंह भगवन्त सिंह (भोजराजजी का) ने अपनी बुद्धि का परिचय दिया[1] और विजय के लिए व्यवस्थित व अनुशासन बद्ध योजना तैयार की।

माडीला का युद्ध

शेखावतो के हमले की पूर्ण तैयारी का समाचार जब फतेहपुर पहुँचा तो नवाब ने फतेहपुर मे रुके रहने की अपेक्षा बाहर निकल कर माडीले के पास ही शेखावतो की फौज से भिडना उचित समझा और वे पूर्ण तैयारी के साथ माडीले स्थान पर पहुँच गये। दोनो सेनाओ में युद्ध शुरु हो गया। युद्ध की इस पहली झडप मे ११ कयामखानी मारे गये और शेखावतो की फौज के चार व्यक्ति घायल हुये।[2] इस झडप मे शेखावतो की विजय हुई। इस युद्ध के बाद भी कई छुट फुट लडाई हुई और इनमे भी शेखावत ही विजयी रहे।

---

1 W R Reply Page 156

। जन १७३२ मे शिवसिंह द्वारा जयपुर भेजे गये पत्र के अनुसार

2 W R Reply Page 156

इसके बाद शेखावतो ने फतेहपुर पर पूर्ण रूप से तैयारी के साथ आक्रमण करने की योजना बनानी शुरु की इससे पूर्व शेखावतो की सेना मे ८-६ हजार व्यक्ति थे, अब लडने वाली फौज की सख्या बढकर १० हजार हो गई। उन्होंने सम्पूर्ण सेना को दो भागो मे विभक्त किया। एक भाग का नेतृत्व करने वाले शादूलसिंह थे तथा दूसरे विभाग का नेतृत्व सीकर के राजा शिवसिंह ने किया।

शेखावतो ने अपने दोनो विभागो को युद्ध भूमि मे इस प्रकार तैनात किया।

प्रथम विभाग

शादूलसिंह के नेतृत्वमे	अन्य भाई बेटे
	दातल, भादोली (मावडा) के
रुहेलाखा जी झुझनू। मोहकम सिंह का लडका एव पहाडसिंह जी खण्डेला के लडके।	तवर, पपुरा के निरवान।
लाडखानी।	बगड के पठान।
चिराने का विशनसिंह जी।	गोपालजी का(झाडली वाहथीडे)
फतेहपुर के कायम खा जी,[1] मदारी खा जी और नाथूखा जी।	

दूसरा विभाग[2]

शिवसिंह के नेतृत्व मे	अन्य भाई बेटे

1 भू पू नवाब फतेहपुर के सरदार खा (सवाई कयाम खा) कयाम खा शेखावतो के विरुद्ध लड रहे थे, शखावतो के साथ दूसरे कायम खा जी थे।

2 W R Reply page 160 161

नारायणदास जी खण्डेला के

कुम्भोजी भोजराजजी के

खिरोड के[1]

अखयसिह दूजोद का[2]

रूपसिह कुहुडी (खण्डेला)

मनरूपसिह, देवीसिह

गोरीसर का बीदावत[3]

सवाईसिह, दानसिह,

गुमानसिह, बाघसिह,

जैतसिह और रासोजी ।[4]

भोजराजजी प्रतापसिह का

पोता और सुजानसिह[5]

जोधसिह हरिसिह का,

जोधसिह दीपसिह का बेटा

बागूर का जोधा राठौड

युद्ध भूमि की व्यूह रचना को मजबूत बनाने के लिये फतेहपुर की फौज के तीन विभाग किये गये, जो इस प्रकार थे —

प्रथम विभाग

इन्द्रसिह चूरु के नेतत्व मे इनके पास १२०० सैनिको की स्थल सेना थी तथा इन्द्रसिह स्वय हाथी पर बैठे हुये सबसे आगे थे ।

दूसरा विभाग

बयामखा जी के नेतत्वमे

इनके साथ लगभग २५०० या ३००० क्यामखानी थे तथा क्यामखा जी स्वय हाथी पर सवार थे । यह विभाग पहले विभाग के पीछे था ।

---

1 भोजराजजी का

2 तिरमलजी का

3 शिवसिह के विवाह के कारण रिश्तेदार

4 5, भोजराजजी का ।

तीसरा विभाग

इस विभाग मे बीदावत, राठौड, झुंझनू के खानजादा पेलमेन तथा अफगार खा मुदफरखानी थे। यह विभाग दूसरे विभाग के बाई ओर था।

इसके अतिरिक्त तीनो टुकडियो के पीछे एक टुकडी और थी, जिसमे १२०० सिपाही थे और शहर के आदमी भी शामिल थे।

युद्ध भूमि मे दोनो सेनाए आमने सामने आ डटी। दोनो ओर के लोग राज्य प्राप्ति की लालसा मे मौत से खेलने जा रहे थे घमासान युद्ध मे विजय श्री झूले पर झूल रहा थी, एक क्षण मे इधर और दूसरे क्षण मे उधर। यह युद्ध इसका निर्णय करने वाला था।

वि स १७८८ के पौष मास के शुक्ल पक्ष की एकादशी का दिन था। प्रात काल का समय और तिस पर कडाके की ठण्ड, बाहर निकलने को मन नही करता था, किन्तु राज्य प्राप्ति की आकाक्षा मे दोनो ओर सेनाए इस विकट मौसम मे भी युद्ध मे रत थी। लोहे से लोहा बज रहा था, गोलो की बौछारें हो रही थी और तलवार चल रही थी। फतेहपुर की ओर से सबसे आगे की पक्ति मे इन्द्रसिह राठौड थे और इनके नेतृत्व मे लडने वाले भी राजपूत थे। दोनो ओर से राजपूतो का युद्ध शुरु हो गया। शेखावतो की सेना मे अश्वारोही अधिक थे। दोनो टुकडियो ने इन्द्रसिह की आगे वाली टुकडी पर एक साथ हमला बोल दिया। इन्द्रसिह के पीछे की टुकडी 'जिसका नेतृत्व कयामखा जी कर रहे थे, आगे की ओर बढ ही नही सकी। शेखावतो की दोनो टुकडियो के भारी आक्रमण को अकेले इन्द्रसिह की टुकडी नही झेल सकी। थोडी ही देर मे चूरू के ठाकुर इन्द्रसिह को मोर्चा छोड कर भागना पडा। इनकी टुकडी के थोडी ही देर मे ११०

सैनिक मारे गये। धरमत[1] के युद्ध मे ६००० सैनिक काम आये। इस मे अधिकतर संख्या राजपूतो की थी।[2] इस प्रकार इस युद्ध मे ही इन्द्रसिंह के नेतृत्व मे लड़ने वाली राजपूत फौज के ही ११० आदमी मारे गये, जिनमे से ४० तो रिश्तेदार थे तथा ७० अन्य राजपूत थे।[3]

युद्ध की अगवानी करने वाले चूरू के ठाकुर इन्द्रसिंह नवाब कायमखां के पास भागकर चले गये। शेखावतो की फौज ने भागते हुये इन्द्रसिंह का पीछा किया। फौज को पीछा करती हुई जानकर इन्द्रसिंह वहा नही टिक सके और वहा से उन्हें भागना पडा। अब क्यामखानी भी अधिक समय तक नही टिक सके और वे भी भाग खडे हुये। भागती फौज के १५० सैनिक शेखावतो ने मार गिराये। ये १५० सैनिक बहादुर लडाके थे। नवाब हाथी पर सवार था। शिवसिंह ने अपने भाले से वार किया, लेकिन वार खाली गया। शार्दूलसिंह और गुमानसिंह लाडखानी ने अपने भालो से हाथी पर वार किया।[4] हाथी भाग खडा हुआ। शेखावतो के पाच बाण और गोली उसके लगी। भागते हुये नवाब के पीछे भी आठ दस तीर छोड गये। नवाब किले मे घुस गया और दरवाजा

---

1 यह स्थान उज्जन से १४ मील दक्षिण पश्चिम म स्थित है। इस स्थान पर ई १६५८ म शाहजहा के उत्तराधिकार युद्ध मे जसवत सिंह जोधपुर के नेतृत्व मे शाही फौज का औरंगजेब की फौज के साथ घमासान युद्ध हुआ था। घमासान युद्ध के बाद जसवत सिंह के एक सेनापति कासिम खा के धोखा देने पर उनको जोधपुर के लिये पलायन करना पडा और इस उत्तराधिकार के प्रथम युद्ध म औरंगजेब की जीत हुई।

2 औरंगजेब सर जदुनाथ सरकार, पृ० ८०

3 शिवसिंह एव शार्दूल सिंह द्वारा जयपुर के लाला हेमराज को लिखा गया पत्र, माघ वदि ८ वि स १७८८ (W R Reply page 161)

4 शेखावाटी प्रकाश, खण्ड २, अध्याय ८, पृ १३

बंद कर दिया। शेखावतो ने फतेहपुर पर कब्जा कर लिया और किले को घेर लिया। माण्डौले के युद्ध के समय व्यापारी फतेहपुर छोड़ कर भाग निकले थे। बहुत से व्यापारी रामसिंह कांशली के गांव मे चले गये थे। इस युद्ध मे शेखावतो की ओर से दस सनिक मारे गये और १३० सैनिक बाणो व गोलियो से घायल हुये, बीस सैनिक तलवार की चोटो से घायल हुए।

फतेहपुर के किले को चारों ओर मे घिरा देखकर घायल नवाब बहुत चिंतित हुआ। वह अपने प्राणो की रक्षा करन का उपाय सोचने लगा। नवाब ने घासीराम पुरोहित (यह पुरोहित जयपुर व फतेहपुर दानो जगह रहा करता था।)को बुलाकर अपने प्राणो की रक्षा करने के लिये कहा "श्री जी से रक्षा की प्रार्थना करो, शहर लुट रहा है। यदि श्री जी का यही हुक्म हो कि मुझे मार दिया जाये तो मुझे मार डालो, नही तो मेरी और मेरे शहर की रक्षा करो और फौज का बाहर ही डेरा डालने का इंतजाम करो।"[1]

पुरोहित जी ने अपने रिश्तेदारो से सब बातें कही और उन्होने सब बातें शिवसिंह व शादूलसिंह को कही तब फतेहपुर मे जयपुर महाराज की दुहाई फिरा दी।[2] इस युद्ध मे शादूलसिंह व शिवसिंह को कोई घाव नही लगा। बक्सी भूथालाल के अनुसार सरदार खा अब भी किले के दरवाजे पर आया और उसने तीर चलाने शुरु किये, किन्तु इस युद्ध मे वह भी घायल होकर अचेत हो गया। क्यामखानी सैनिक उसे किले के

1 शिवसिंह व शादूलसिंह द्वारा लाला हेमराज को लिखा गया पत्र माघ वदि ८ वि १७८८ W R. Reply Page 161

2 इसी माघ वदि ८ वि १७८८ के पत्र म उपयुक्त युद्ध का वर्णन है।

बाहर ले गये और किला खाली कर दिया।[1] शेखावतो ने किले पर अपना ध्वज फहराया।[2] क्यामखानी सरदार खा को नारनौल ले गये, वहा उसकी मृत्यु हो गई।[3] नवाब कामयाब खा भागकर बीकानेर चला गया।[3]

इसी समय सवाई जयसिंह द्वारा भेजी गई दो तोपें खाटू(श्यामजी) पहुँची थी[4] किन्तु अब तोपों की कोई आवश्यकता नहीं थी, क्योंकि इस समय फतेहपुर पर शेखावतो का पूर्ण अधिकार हो गया था।[5]

नारनौल नवाब मुज्जफर खा द्वारा क्यामखानियो की, सहायता

झुंझनू और फतेहपुर दोनो राज्यो से ही क्यामखानी हाथ धो बैठे। इन राज्यो पर दो शेखावतो ने अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिया। झुंझनू पर शार्दूलसिंह का राज्य स्थापित हो गया और फतेहपुर पर सीकर के राजा शिवसिंह ने अधिकार कर लिया। झुंझनू के पतन के बाद बडवासी का नवाब अमानुला खा दिल्ली से सहायता प्राप्त करने के लिये चला गया और सम्भवतः फतेहपुर पतन के बाद

1 माधव वंश प्रकाश पृष्ठ १३८

2 शा० शे० इतिवृत्त पृष्ठ १३१

3 शा० शे० इतिवृत्त पृ० १३१ मेहता बख्तावरसिंह की ख्यात, पृ० ८१ -

4 विलस रिपोर्ट का उत्तर, पृ० ७६ ७७ (हिन्दी)

5 सीकर का इतिहास तथा Shekhawats and their Lands म फतेहपुर पर अधिकार चैत्र मास के कृष्ण पक्ष में वि स १७८७ में होना लिखा है। किन्तु शिवसिंह व शार्दूलसिंह द्वारा जयपुर को लिखे गये पत्रो से यह स्थिति सामने आगई है और उनके अनुसार माघ १७८८ म फतेहपुर पर अधिकार हुआ, जो सही है। शे० प्र० म चैत्र १७८८ म लिखा है। सम्भवतः उन्हें फतेहपुर की अच्छी तरह से व्यवस्था जमाने म दो माह और लग गये हो और इस हिसाब स शा० प्र० में चैत्र, १७८८ लिखा होगा।

वहा के क्यामखानियो ने भी दिल्ली से सहायता लेने का प्रयत्न किया हो।

शिवसिह ने जयपुर को एक पत्र मे लिखा कि दिल्ली से एक फौज बूढे नवाब की सहायता के लिये आयेगी और वे नवाब के पुत्र को दिल्ली ले जाने का प्रस्ताव कर रहे हैं।[1] शिवसिह को इन सब बातो की जानकारी थी, इस समय उनका आत्मविश्वास इतना दृढ हो गया था कि जयपुर को पत्र लिखते हुये उन्होने लिखा

If the Nawab's son does go there what of it ?
He cannot take the country in his head'[2]

दिल्ली से दिल्ली फौज के २००० घुड सवार सना और तोपखाना ७ माच,१७३२को नारनौल पहुँचा।[3] नारनौल मे एक अन्य मुसलमानी सेना इससे मिल गई[4] यह सेना क्यामखानियो की मदद के लिये आयी थी।[5] इसी समय १२ माच, १७३२ को शिवसिह ने जयपुर को एक पत्र लिखा जिसमे लिखा था कि-'सुना गया है, मुज्जफर खा (नारनौल का नवाब) ५०० घुडसवार और ५०० पैदल सेना क्यामखानियो की सहायता के लिये भेज रहा है, इसलिये महाराज जयपुर को दिल्ली की स्थिति पर नियत्रण रखना चाहिये।[6]

---

1 W R Reply Page 163 (English)

2 " " "

3,4,5, नारनौल स्थित शादूलसिंह का गुमाश्ता गगाराम के पत्र के अनुसार

W R Reply Page 165 (English)

in formed his master that the Delhi forces consisting of 2 000 Sawars and Artillery had certain Mohomedan local forces has joined them

6 W R Reply, Page 163

इस समय शादूलसिंह फतेहपुर मे थे। उन्हे मुगल सेना के नारनौल पहुँचने का समाचार मिला तो वे १२माच, १७३२ को रवाना हुये और इन्होने मुस्लिम मुगल सेना के साथ युद्ध करने की तैयारी की।[1]

डूमरे का युद्ध अमानुलाखा का वध

झुंझनू पर शादूलसिंह का अधिकार होने के बाद अमानुलाखा बडवासी नवाब दिल्ली गया था और वहा से झुंझनू पर हमला करने के लिये शाही फौज को लेकर रवाना हुआ। फौज नारनौल पहुँचकर कुछ समय के लिये वहा रुक गई। अमानुलाखा कुछ सवारो के साथ आगे आ गया। वह पहले बडवासी गया और फिर वहा से वापस योजनानुसार झुंझनू की ओर बढने लगा। शादूलसिंह को यह समाचार मिलते ही वे अपने पुत्र जोरावरसिंह तथा कुछ सनिको के साथ बडवासी की ओर रवाना हो गये। बडवासी से ६ मील उत्तर मे बसे डूमरा[2] नामक गाव से डेढ मील उत्तर मे डूमरा से झुंझनू जाने वाले कच्चे माग पर जहा सोटवारा[3] से जेजूसर[4] का माग इस माग को काटता है, ठीक उसी कोने पर समतल मैदान मे १३माच, १७३२[5] को नवाब अमानुलाखा तथा शादूलसिंह का मुकाबला हुआ। असम्भावित विपत्ति से

1 शा० शे० इतिवत, पृ० १३२

2 झुंझनू से १६ मील दक्षिण पश्चिम म यह ग्राम स्थित है।

3 डूमरा से एक मील पश्चिम म

4 डूमरा से साढ़े तीन मील

5 शा० शे० इतिवत पृष्ठ १३२

१४ माच, १७३२को शिवसिंह सीकर ने एक पत्र जयपुर के एक मत्री विजयराज को लिखा, जिसम झुंझनू के पास शादूलसिंह का मुस्लिम सेना की भिडन्त होने की बात लिखी है।

नवाब बेखबर था, किन्तु उसने इसका मुकाबला करने का निश्चय किया। उसने कुवर जोरावरसिंह पर तलवार से वार किया। यह प्रहार कुवर के मस्तक पर लगा। उनकी पाघ कटी और माथे पर घाव हो गया[1] शादूलसिंह ने जोरावरसिंह पर वार करते हुये अमानुला खा को ललकारा, वह शादूलसिंह की ओर मुडा। क्रुद्ध कुमार जोरावरसिंह ने बडे वेग से अपने भाले का वार अमानुला खा पर किया। भाला उसके शरीर के पार हो गया और वह घोडे से नीचे लुढक पडा। कहा जाता है कि जब वह मैदान मे गिरा उसने पास खडे छोटे शमीवृक्ष को उखाड लिया और कहा "सादा बल वही है पर जमीन ने जवाब दे दिया" और बहादुर नवाब अमानुला खा वही खत्म हो गया सम्भवत अमानुला खा की मृत्यु का समाचार सुनकर तथा जयसिंह द्वारा मुजफ्फर अली खा से समझौता होने पर दिल्ली से आयी हुई सेना वापस लौट गई हो, क्योकि जयसिंह व नवाब मुजफ्फर अली खा से गहरी दोस्ती थी[2] बिना प्रभावयुक्त उद्देश्य के दिल्ली से फौज बुलाना उन दोनों (जयसिंह व मुजफ्फरअली खा) की मिली भगत थी,[3] जैसे भी हो फौज बिना युद्ध किये ही वापस चली गई और शादूलसिंह का काटा सहज ही निकल

---

1 किसी कवि ने उनके इस घाव का बहुत ही सुन्दर वर्णन किया है –
"वणिया घाव वणाव, जोरा मोहरा ऊपर।
जडिया नग्ग जडाव सोना में सादूलवत ॥

2 W R Reply Page 164 (English)

3 Nawab Mozaffar Khan and Maharaja Jaisingh were very close friends and the going out of Imperial forces without effecting any purpose was a Common practice

W R Reply Page 164 and Irvin Later Moghals Vo II P P 123 and 279

गया। रावल हरनाथसिंह डूडलोद ने डूमरे की लडाई वि स १७८५ मे होना लिखा है, वाकयात कौम कायमखानी का लेखक भी इसी समय को मानता है, पर शिवलाल बड्वा झुझनू की बही तथा शेखावत समाज मे अमानुलाखा सम्बन्धी चली आरही दतकथाओ के अनुसार डूमरा की लडाई शादू लसिंह द्वारा झुझनू पर अधिकार करने के बाद ही हुई एव शिवसिंह (सीकर) द्वारा जयपुर को लिखे गये पत्रो मे भी मुस्लिम (दिल्ली की) सेना से शादू लसिंह की भिडत का सकेत मिलता है। ये बातें इसी युद्ध सम्बन्धी होनी चाहिए। फिर भी बिना ठोस प्रमाणो के अभाव मे लेखक यह दावा नही करता है कि यह युद्ध वि स १७८८ मे ही हुआ था। वास्तव मे यह विषय और अधिक शोध चाहता है।

पठानो का झुझनू पर हमला

पठानो ने अपने खोये हुए राज्य को पुन प्राप्त करने के लिए कुछ समय उपरात बगड मे एकत्रित होकर अनुमानत वि स १७८८ ई स १७३२ मे[1] झुझनू पर चढाई करदी। बुहाना के पास से झुझनू

---

1 शादू ल सिंह शेखावत, पृ १२४ पर इस घटना का वि स १७६४ के बाद होना माना है, परन्तु यह सत्य प्रतीत नहीं होता। शादू लसिंह ने बगड नरहड पर वि स १७८८ मे ही अधिकार कर लिया था। अत शीघ्र ही पठानो ने वापिस अपने राज्य को हथियाने के लिए हमला किया होगा। दूसरे बिसाऊ ठिकाने के कागजातो से पाया जाता है कि तिलोका वाला कुआ के पास वैशाख सुदि १२ वि स १७६२ म एक मदिर की स्थापना की। तिलोके वाले कुए के पास बहादुरसिंह की सती राणी चापावत जी का मदिर व छतरी है। इससे मालूम होता है कि बहादुरसिंह की मृत्यु वि स १७६२ से पूर्व ही हो गई थी। तोमर इस युद्ध मे शादू लसिंह नही थे, वे बाहर थे। इस समय फतेहपुर का युद्ध चल रहा था और शादू लसिंह उस युद्ध मे सम्मिलित थे। इन

के बीड मे आगे बढती हुई पठानो की सेना को शेखावतो ने रोका और यहा जमकर लडाई हुई। दुश्मनो के दल की बहुत हानि हुई। शार्दूल सिंह के छोटे पुत्र बहादुरसिंह, जो केवल १६-२० वर्ष के थे इस युद्ध मे वीरता दिखाते हुए वीरगति को प्राप्त हुए। मुख्य मंत्री बारिया का टकनेत सरदार भी वीरगति को प्राप्त हुआ। पठानो की सेना भाग खडी हुई और शेखावतो की विजय हुई।[1] बहादुरसिंह की कवरानी चापावत सती हुई, जिनकी उज्ज्वल स्मृति मे मंदिर एव छतरी का झुंझनू मे निर्माण कराया गया। टकनेत सरदार पर भी छतरी बनाई और उनके पुत्रो को बारिया की जागीर दी गई। नरहड पर पूर्ण अधिकार करने के बाद जोरावरसिंह ने सिकन्दर खा के वशजो से खुडाना आदम खा (अहमद खा) के वशधरो से नारीसारी व खजू खा से सुलताना हस्तगत किया।

फकीर द्वारा शार्दूलसिंह पर आक्रमण

बडवासी के नवाब अमानुला खा के मारे जाने के बाद कयामखानियो की रही सही आशा भी समाप्त हो गई। शेष कयामखानियो के हृदय मे ईर्ष्या रूपी अग्नि प्रज्वलित हो रही थी, परन्तु वे काफी सघर्षों के बाद इतने शक्ति हीन हो गये कि वे अब कुछ भी कर सकने मे असमर्थ थे।

सब कार्यों को देखते हुये प्रतीत होता है कि यह घटना वि स १७८८ की ही होनी चाहिये।

1 जनश्रुतिया के अनुसार बहादुरसिंह की गर्दन पर किसी पठान की तलवार का प्रहार हुआ और इससे उनकी गर्दन कट गई, केवल कुछ चर्म अटकी रह गई। बहादुरसिंह ने घोडे पर ही हाथ से अपनी गर्दन थमाई और झुंझनू की ओर चल पडे तथा शीघ्र ही झुंझनू पहुचते ही इनका प्राणान्त हो गया।

एक कयामखानी अमानुलाखा के वध को सहन न कर सका। उसके हृदयमें शार्दूलसिंह से प्रतिशोध[1] लेने की भावना उत्तरोत्तर बढ़ती गई। अंत वह उन्हें धोखे से मारने की योजना बनाने लगा और अंत में भावावेश में आकर वह कयामखानी वि स १७८९[2] के प्रारम्भ में ही फकीर[3] का वेश धारण कर शार्दूलसिंह को मारने हेतु चला। शार्दूलसिंह इस समय टांक गाव में थे,[4] फकीर टोंक पहुचा और भिक्षा

1 Shekhawats and Their Lands, पृ १०१ पर लिखा है। फकीर का स बध एक जाट स्त्री से था, जब उसने कुछ रुपयों की मांग की तो जाट स्त्री ने उससे कहा, 'वह इतना तुच्छ क्यों है? जबकि उसमें अपने शत्रु शार्दूलसिंह से मुकाबिला करने की भी शक्ति नहीं है।' यह एक दंत कथा है इसकी सत्यता का कुछ पता नहीं है।

2 देवीसिंह मडावा ने इस घटना का होना वि स १७८७ और १७८८ के बीच माना है, किन्तु यह तर्क के आधार पर सत्य प्रतीत नहीं होता, क्योंकि शार्दूलसिंह अपने अंतिम समय में परशुरामपुरा में रहे थे, और उस समय इतने लम्बे अर्से बाद प्रतिशोध लेने की बात उचित नहीं जान पड़ती।

3 एक जनश्रुति के अनुसार फकीर अमानुलाखा का भाई था। जब उसने सुना कि उसका भाई शार्दूलसिंह द्वारा मारा डाला गया है तो वह बदला लेने को तयार हो गया। उसकी बेगम ने कहा—'मर्दाने जंग में आप उसे नहीं मार सकते, क्योंकि वह बड़ा बहादुर है, वह तो धोखे से ही मारा जा सकता है।' ऐसा सुनकर उसका भाई फकीर का वेश धारण कर, चल पड़ा। अमानुलाखा के दो भाई थे— मदारी खा और सादूल खा। सादूलखा कयामखानियों द्वारा माडण की लड़ी गई लड़ाई में बताया जाता है। सम्भवत वह फकीर मदारी खा हो।

4 Shekhawats and their Lands (English) page 101
शेखावाटी प्रकाश, अध्याय १०, पृ० ७ पर इस घटना का झुंझनू में होना

मागने के बहाने चौक मे आगे बढ गया। शादू लसिह उस समय चौक (आगन) मे स्नान कर रहे थे। फकीर छुरा निकाल कर अचानक उनकी ओर झपटा, इस समय प्रेमसिह करणावत जो उस समय शादू लसिह के पास ही थे, फकीर पर टूट पडे। फकीर का छुरा करणावत के शरीर मे घुस गया और वे वही समाप्त हो गये। इस प्रकार वीर करणावत ने अपनी जान देकर भी अपने स्वामी को बचा लिया। वीर करणावत का उजडे हुए टोक से दक्षिण की ओर २ फला ग की दूरी पर स्थित श्मशान भूमि मे दाह सस्कार किया गया व उसकी उज्ज्वल स्मृति को चिर स्थायी रखने के लिये शादू लसिह ने एक ऊ चे चबूतरे पर आठ खम्भो वाली सु दर छतरी बनाई[1] जो आज भी उस स्वामीभक्त वीर की याद दिलाती है। शादू लसिह ने करणावत की स तान को गोगोण्डा गाव जागीर मे दिया।

सवाई जयसिह से मुलाकात

जयपुर के महाराजा सवाई जयसिह को दिल्ली के सम्राट

लिखा है तथा शा० शे० इतिवृत कु वर देवीसिंह मडावा ने पृ० १४६ पर घटना स्थल परशुरामपुरा माना है, किन्तु ये दोनो ही स्थान ऐतिहासिक कसौटी पर खरे नही उतरते, करणावत पर बनी छतरी टोक, जो अब उजड चुका है के जगल मे आज भी खडी है, जो लेखक ने देखी है। झु भनू से टोक लगभग ३० मील है तथा परशुरामपुरा से करीब ५ मील। ऐसी दशा म इतनी दूर से जाकर दाह सस्कार करना सही नहीं लगता। अत इस घटना का टोक मे होना ही सत्य के अधिक निकट लगता है।

1 शा० श० इतिवृत, पृ० १४७ एव बडवा की हस्तलिखित बही।

मुहम्मदशाह ने तीसरी वार ६ सितम्बर, १७३२[1] वि स १७८६ को मालवा का सूबेदार नियुक्त किया। जयसिंह जयपुर से २० अक्टूबर, १७३२[2] आसोज, वि स १७८६ को मालवा के लिये रवाना हुये। मौजावाद मे उनका पडाव हुआ, यहा सवाई जयसिह से शार्दूलसिंह और शिवसिंह की मुलाकात हुई।[3]

वि स १७८६ ई स १७२६ मे जयसिंह (जयपुर) व बुद्धसिंह (बूंदी) के आपसी अनबन के कारण दोनो मे पाचोलास गाव के पास युद्ध हुआ। बुद्धसिंह पराजित हुए और अपने ससुराल बेगू चले गए। जयसिंह का बूंदी पर पुन हमला वि स १७६१ ई स १७३४ मे हुआ।[4] शादूलसिंह इस युद्ध मे जयसिंह के साथ थे और इन्होंने लडाई मे अपूव बहादुरी दिखाई थी।[5]

वि म १७६२[6] सन् १७३५ मे किसी कारणवश इनके साले

---

1 Jaipnr and Its envirans by Rawal Harnath Singh page 17

2 ,, ,, ,, ,, ,,

3 ,, ,, ,, ,, ,,

4 मुगल साम्राज्य का पतन - जदुनाथ सरकार, अनु० मथुरालाल शर्मा, पृ १७८

छप्पय

5 इण राजा सादूल, पकड बूदी बिचलाई।
इण राजा सादूल, लक जिमी रिणी लुटाई॥
इण राजा सादूल, लिया बराठ मिघाणा।
इण राजा सादूल, दिया नरहड सिर थाणा॥
जगराम हर जोधार हू, मिडियो मत कोई भूल सों।
रण रोप रवन अनवी रह्यो, सबल वीर सादूल सों॥

6 बहवे की बही

उदयसिंह पूगलोता से यहां आ गये। इन्होंने उन्हें रखा एवं कारी के शेखावतों के यहां उनका विवाह कर दिया। यही उदयसिंह वगड में बस, जिनके वंशज आज भी वगड मे बसे हुये हैं।

वि स १७८४[1] ई स १७२७ मे इनके पुत्र नवलसिंह ने 'रोहिली' ग्राम मे गढ बनवाया और उसका नाम नवलगढ रखा, इसी वर्ष शार्दूलसिंह ने झुंझनू मे कल्याण जी का मन्दिर बनवाया।

शार्दूलसिंह का जयपुर की सेना से मुकाबला

शार्दूलसिंह और जयपुर राजा जयसिंह का घनिष्ट प्रेम था। किसी कारणवश जयसिंह वि सं १७६५ ई सं १७३८ म शार्दूलसिंह से नाराज हो गये। इस कारण उन्होंने इनके विरुद्ध सेना भेज दी। नागौर के बख्तसिंह ने शार्दूलसिंह की सहायता के लिए अपनी सेना भेजी। यह शाहपुरा नरेश उम्मेदसिंह के वकील गुलाब द्वारा उनको लिखे गये पत्र में पाया जाता है।[2] किंतु दोनो सेनाओं मे युद्ध हुआ या नहीं इसके बारे मे कोई विवरण प्राप्त नहीं होता है। लगता कि जयसिंह व शार्दूलसिंह दोनों मे समझौता हो गया होगा।

जोधपुर की मदद

महाराजा जोरावरसिंह वि स १७९६ ई स १७३९[3] मे बीकानेर की गद्दी पर बैठने के बाद जोधपुर के राजा अभयसिंह व नागौर के राजा बख्तसिंह के कायम किये हुये थानो पर आक्रमण किया।

---

1 शेखावाटी प्रकाश, अध्याय १४, पृ १ बडे की बही।

2 देखिये वकील गुलाब द्वारा राजा उम्मेदसिंह शाहपुरा को लिखा गया पत्र परिशिष्ट मे एवं विल्स रिपोर्ट का उत्तर पृ ३८

3 बीकानेर के मुसाहिब महता बख्तावरसिंह की हस्तलिखित ख्यात, पृ ८, जो कु देवीसिंह जी मण्डावा को प्राप्त हुई, के अनुसार।

बीकानेर से चलकर बीदासर-गोपालपुरे के पास पहुँचे और वहीं मुकाम किया। जोधपुर और नागौर के राजाओं ने पुरोहित जगनाथ को सेनापति बनाकर भेजा। इसी समय शादूलसिंह अपनी सेना लेकर जोधपुर की मदद के लिये वहा पहुँच गये।[1]

गुमान कवर का विवाह।

शादूलसिंह की प्रथम ठकुराणी बीकावत जी से बाई गुमान कवर का जन्म हुआ था। अनुमानत १८वष की अवस्था मे इन्होने अपनी पुत्री गुमान कवर का विवाह इन्द्रगढ मे हाडा छतरसिंह के साथ वि स १७९६ ई स १७३९ मे सम्पन्न किया।[2] विवाह के समय ही हाडाजी किसी बात पर अप्रसन्न हो गये और वे चल दिये। हाडाजी समझाने पर भी नही मानें तो अन्त मे जोरावरसिंह ने अपनी पगडी भी उनके पैरों मे रखदी[3] किन्तु हाडाजी ने इसे ठुकरा दिया। गुमान कवर यह सब देख रही थी, हाडाजी द्वारा अपने भाई का अपमान न सह सकी और उन्होंने प्रतिज्ञा की कि वह इन्द्रगढ का न पानी पीयगी और न भोजन ही करेंगी। इस समाचार को सुनकर शादूलसिंह ने इनके प्रबन्ध का वचन दिया और जब जयसिंह जयपुर ने यह सब सुना तब उन्होने उसी

1 महन्त बख्तावरसिंह जी की ख्यात पृ० १८ ख्यात के कुछ अंश परिशिष्ट मे देखे।

2 शा० शा० इतिवत पृ० १३६
शे० प्र० अध्याय १०, पृ० १४
Shekhawats and their Lands page 102 (English)

3 कहा जाता है कि जोरावरसिंह के पास एक बहुत सुन्दर घोडा था, हाडाजी ने यह घोडा माँग लिया किन्तु जोरावरसिंह को वह अत्यधिक प्रिय था और युद्ध म अति उपयोगी था। इस कारण वे इसे देना नही चाहते थे। इसी बात पर हाडाजी अप्रसन्न हो गये।

समय बूँदी की सीमा के दो गाव उनके नाम कर दिये, शादी होकर गुमान कवर बूँदी की सीमा पर पहुँची तो वही अपना रथ रुकवा दिया। सीमा के इस पार गुमान कवर के लिये महल बनवा दिया गया और वे जन्म भर यही रही।

जब हाडा जी की मृत्यु हुई, उस समय गुमान कवर झुंझनू थी। वह वापस जाने लगी तब उदयपुर के पास उनको इन्द्रगढ के ब्राह्मण से अपने पति की मृत्यु की सूचना मिली। पति की पाग को लेकर वह वही सती हो गई। इसी जगह उनकी स्मृति मे एक छतरी बनाई गई।[1] वि स १७९६ मे झुंझनू में शादूलसिह ने गोपीनाथ जी का मंदिर बनवाया।

चारण दान को सुलतानसर प्रदान करना

चारण दान ने बगड से पठानो को भगाने मे तथा शादूलसिह का बगड पर आधिपत्य जमाने मे पूर्ण योग दिया था।[2]

---

1 बडवे की बही
झा० शे० इतिवत, पृ० १३७

2 कहा जाता है कि नवाब बगड का एक बाछा खुलाकर दौड पडा था उसके सांकल लटती जा रही थी नवाब के आदमी उसके पीछे थे। एक जाट स्त्री ने उस बाछे की साकल पर नीचे दबा कर रोकली। बाछा तनिक भी आगे न जा सका और पकड लिया गया। इस घटना का मालूम जब नवाब को हुआ तो उसने इस जाट स्त्री के साथ अपना विवाह करना चाहा। जाट की अनिच्छा होते हुए भी नवाब ने नका का दिन नियत कर दिया। जाट भाग कर शादूल सिह के पास झुंझनू गया, इस समय यह चारण भी पास मे ही था। जाट ने अपनी व्यथा शादूलसिह को सुनाई। इन्होने जाट को उसका दुःख दूर करने का आश्वासन दिया। जाट के जाने के बाद यह चारण शादूलसिह से बोला, "मैं बगड जाता हूँ, आप किसी ऊँट पर नगाडा रखकर युद्ध का डका बजाना शुरु कर

इसलिये (पुरस्कार) स्वरूप सुलतान सर गाव वैशाख (वदि १२ वि स १७९७ ई (स) १७४० मे दिया)। इस गाव को आज चारणवास कहते हैं।

शिवसिंह सीकर से अनबन

वि-स १७९७ ई स १७४० मे शादूलसिंह एव शिवसिंह मे झुंझनू, नरहड और फतेहपुर - चार पट्टी के मसले को लेकर झगडा हो गया था। वे दोनो महाराजा जयसिंह के निर्णय को स्वीकर करने के लिए तैयार हो गये। जयसिंह ने फैसला दिया कि झुंझनू व नरहड शादूलसिंह के हैं, इनमे शिवसिंह कोई दखल न दें तथा फतेहपुर चारपट्टी शिवसिंह के हैं इनमें शादूलसिंह कोई दखल न दें। जयसिंह का फैसला दोनो ने स्वीकार कर लिया और उनका झगडा समाप्त हो गया।[1]

जयपुर की जोधपुर पर चढाई शादूलसिंह जयपुर के पक्ष मे

इस समय जोधपुर के सिंहासन पर अभयसिंह और बीकानेर की

दीजिए और ऊंट को बगड की ओर रवाना कर दीजिये तथा जितनी शक्ति है उसके साथ बगड की ओर प्रयाण कीजिये। सम्भव हुआ तो विना युद्ध किये ही बगड छीन लिया जायेगा। योजनानुसार काय हुआ। चारण ठीक उस समय पर जब कि नका पढने की तयारी हो रही थी, बगड पहु च गया और नवाब से बाला "हुजूर! शादूलसिंह बडी फौज के साथ बगड पर आक्रमण करने आ रहे ह, युद्ध का डका बज रहा ह; उपाय करना हो सो कर लीजिए। चारण से राय लेने पर उसने बगड छोडकर नरहड भाग जाने की सलाह दी। नवाब के पास न बडी फौज थी और न तयारी हो थी सो विना युद्ध किये ही बगड के पठान नरहड की ओर दौड गये और शादी मे जो हलवा बन रहा था वसे ही पडा रहा। इस प्रकार बिना युद्ध किये ही बगड पर शादूलसिंह का अधिकार हो गया।

1 विल्स रिपोट का उत्तर पृ ८५ (हिन्दी)

गद्दी पर जोरावरसिंह विराजमान थे। अभयसिंह बीकानेर को जोधपुर मे मिलाना चाहते थे। इसी समय वि स १७६७ ई स १७४० मे ठाकुर लालसिंह भादरा,[1] ठाकुर संग्रामसिंह चूरू[2] और ठाकुर भीमसिंह महाजन[3] बीकानर रियासत से विद्रोह कर अभयसिंह जोधपुर से मिल गये। अभयसिंह इससे बहुत प्रसन्न हुये और बीकानेर पर आक्रमण करने की तैयारी करने लगे। वि स १७६७ ई स १७४० मे बीकानेर रियासत के तीनो विद्रोहियो के साथ अभयसिंह ने बीकानेर पर चढाई कर दी। बीकानेर शहर पर अधिकार कर जूनागढ को घेर लिया। राजा जोरावरसिंह जूनागढ मे युद्ध की तैयारी कर रहे थे। भूकरका के ठाकुर कुशलसिंह को इन्होंने गढ का भार एव सेनापति पद सौंपा। इन्होने किले मे दुश्मन की सेना का बहादुरी से मुकाबला किया किन्तु विजय प्राप्त करना इनके वश की बात नहीं थी, क्योंकि गढ मे भोजन की कमी के साथ साथ सेना भी कम थी।

इस समय जोरावरसिंह को जयपुर के राजा सवाई जयसिंह के अतिरिक्त कोई रक्षक नही दिखाई दिया। इन्होंने जयसिंह के पास एक व्यक्ति को पत्र देकर भेजा और मदद मागी।

अभो ग्राह बीकाण गज, मारु समद अथाह।
गरुड छाडि गोविन्द ज्यू, साह करो जयसाह।।"

1 यह कान्धल राठोडो का ठिकाना था। यह राजगढ से उत्तर मे स्थित है।

2 यह बनीरोत कान्धल राठौडो का मुख्य ठिकाना था। यह झुन्झनू से ४० मील उत्तर पश्चिम मे स्थित है।

3 यह रतनसिंहोत बीका राठौडो का बडा ठिकाना था। यहा के शासक को 'राजा' की पदवी प्राप्त थी। यह बीकानेर से उत्तर पूर्व म करीब ७०मील की दूरी पर स्थित है।

जयसिंह शरणागत की सहायता के लिये तैयार थे। उन्होने अपने प्रमुख सरदारो से सलाह मशविरा किया। लगभग सभी सरदारो ने एक मत होकर निवेदन किया कि अभयसिंह अपने दामाद है। अत हमे उनके विरुद्ध बीकानेर की मदद नही करनी चाहिये, किंतु शिवसिंह (सीकर) ने सतर्क निवेदन किया कि राजनीति के क्षेत्र मे आपसी सम्बंधो को बुनियाद मान कर नही चलना चाहिये। अगर इस समय अभयसिंह बीकानेर पर अधिकार करने मे सफल हो जाते हैं तो उनकी शक्ति बढ जायेगी जो दूसरी रियासतो के लिये खतरा बन सकती है। अत हमे इस समय बीकानेर की मदद करनी चाहिये।[1]

यद्यपि यह सलाह जयसिंह की मन इच्छा के प्रतिकूल थी, फिर भी स्थिति की जटिलता का अनुमान करते हुये उन्होने शिवसिंह की राय मानना ही श्रेयस्कर समझा। बीकानेर सेना लेकर पहुँचने पर अधिक दिन लगने स्वाभाविक थे, तब तक सम्भव था अभयसिंह बीकानेर पर अधिकार करलें। इस कारण जयसिंह ने बीकानेर पर चढाई करने की अपेक्षा जोधपुर पर आक्रमण करना अधिक उपयुक्त समझा और श्रावण वदि ८ वि स १७९७ में दल बल सहित जोधपुर पर चढाई करदी।[2] इस समय शादूलसिंह भी अपने ३००० सैनिको सहित साथ थे।[3] जयपुर की सेना जोधपुर की ओर धीरे धीरे बढने लगी, क्योंकि जयपुर, जोधपुर पर अधिकार नही करना चाहता था बल्कि केवल अभयसिंह को बीकानेर से हटाना चाहता था। अभयसिंह को

1 बीकानेर का इतिहास भाग १, ओझा पृ० ३१२

2 (I) जोधपुर रिकार्ड के अनुसार
(II) देवीसिंह मण्डावा का ऐतिहासिक पत्र दिनांक २५ ११ १९७१

3 सादो सेखावत साथ असवार ३००० देवीसिंह मण्डावा के पत्र दिनांक २५-११ १९७१ के अनुसार (जोधपुर रिकार्डपर आधारित)

बीकानेर में जब यह सूचना मिली तो उनको अपने श्वसुर के इस विरोधी कृत्य पर क्षोभ हुआ, किन्तु क्या कर सकते थे? अतः उन्हें विवश होकर बीकानेर गढ़ का घेरा तोड़ना पड़ा और अपने घर (जोधपुर) की रक्षा के लिये चल पड़े। अभयसिंह जयपुर की सेना के पहुँचने से पूर्व ही जोधपुर पहुँच गये, फिर जयपुर की सेना वहां पहुँची। जयपुर और जोधपुर के बीच सन्धिवार्ता शुरु हुई। सन्धिवार्ता में निम्न शर्तें तय हुईं।

१ अभयसिंह जयपुर की फौज खर्च के २१ लाख रुपये देंगे।
२ बख्तसिंह का मेड़ता पर अधिकार रहेगा।
३ अभयसिंह बीकानेर के जीते हुए गांवों को वापिस लौटा देंगे।
४ जयसिंह को अजमेर के जो गांव इजारे पर मराठों से मिले थे अभयसिंह किसी तरह का हस्तक्षेप नहीं करेंगे।
५ अभयसिंह जयपुर दरबार में अपना पुत्र ठाकुर व कर्मचारी भेजेंगे।
६ अभयसिंह दिल्ली से अपना वकील बुलवा लेंगे। शाही दरबार में जोधपुर का कोई वकील नहीं रहेगा।
७ अभयसिंह मुगल सरकार व मराठों से अलग बात चीत नहीं करेंगे
८ इन शर्तों के पालन के मूल में जोधपुर के पांच ठाकुर जयपुर राज्य की सेवा करेंगे।[1]

सन्धि अनुसार जयपुर को फौज खर्च के २१ लाख रुपये देने तय किये थे। जोधपुर ने ११ लाख के जेवर[2] तथा १० लाख रोकड़ी चुकाये। इस

1 याददाश्त २५ जुलाई, १७४० (कपट द्वारा कागजात न ४६-क/१०६४) सवाई जयसिंह वी एस भटनागर पृ० १७०

2 यह जेवर जयसिंह ने अपनी पुत्री को दिये थे। इस पर जयसिंह के सामन्तों ने कहा कि यह तो अपनी बाई के गहने हैं। इस पर जयसिंह ने कहा "हम जयपुर बाईजी के गहने नहीं ले जा रहे, बल्कि जोधपुर राणी के गहने ले जा रहे हैं।

प्रकार २१ लाख रुपये लेने के बाद भादवा सुदि १ वि स १७६७ मे जयसिंह ने जोधपुर से घेरा उठाकर जयपुर को प्रस्थान किया।[1]

भखरी का युद्ध -

जयपुर के राजा जयसिंह द्वितीय की सेना जो जोधपुर मे लौट रही थी, अजमेर के उत्तर पश्चिम मे १३ मील की दूरी पर गुमे नाद गाव मे रुकी। यह फौज मारवाड से बिना युद्ध किये ही जयपुर लौट रही थी, उस समय भखरी के ठाकुर केशरीसिंह अपने घोडे पर सवार हुये शिकार खेलते हुये उधर से निकले। जब उन्होंने सुना कि इस फौज का मारवाड मे किसी ने भी प्रतिरोध नही किया, तो वे इस को सहन न कर सके। उन्होने इस को अपने पौरुष के लिये चुनौती समझा और जयसिंह की फौज पर छापा मार कर उनके सीतारामजी हाथी को पकड कर ले गये। जयसिंह ने इसके विरुद्ध भखरी पर चढाई करदी। भखरी की छोटी सी पहाडी पर स्थित गढी (किला) को घेर लिया। केशरीसिंह ने दो दिन[3] तक जयपुर की सेना का डटकर मुकाबला किया, किन्तु फिर उन्हे किला छोडना पडा। किले पर जयपुर की सेना का

बाईजी जब जयपुर आयेंगी तब उन्हें दे देंगे यह जेवर वगरह जो ११लाख के थे, महाराजा स० इश्वरीसिंह ने अपनी बहिन विचित्र कुमारी को लौटा दिए थे।

1 जोधपुर राज्य की ख्यात, जिल्द २, पृ० १५२

दयाल दास की ख्यात, जिल्द २, पृ० ६४

वीर विनोद भाग २ पृ० ५०२

जोधपुर रिकार्ड अनुसार

2 अजमेर से करीब उत्तर की ओर ३५ मील की दूरी पर स्थित मारवाड का छोटा सा ठिकाना था।

3 मारवाड का इतिहास, प्रथम भाग रेऊ पृ० ३५२

अधिकार हो गया, लेकिन वीर केशरीसिंह ने मारवाड की इज्जत बचाली ।[1]

शादूलसिंह का लालसिंह पर हमला और उन्हे पकडना

भखरी विजय के बाद जयसिंह जयपुर की ओर बढ़ रहे थे। जयपुर के निकट बैनाड मे उनका पडाव हुआ। इसी समय बीकानेर के राजा जोरावरसिंह उन्हें बीकानेर रक्षा की बधाई देने के लिये यहा पहुँचे और फिर इन्ही के साथ जयपुर चले गये। वहा वे बीमार हो गये और उधर साईदासोतो ने बीकानेर राज्य मे गडबडे करनी शुरु करदी। जोरावरसिंह ने सवाई जयसिंह से निवेदन किया कि वे साईदासोतों का दमन करें। इस के लिये जयसिंह ने इनका दमन करने के लिये शादूलसिंह के सेनापतित्व में १०,००० सैनिक भेजे।

शादूलसिंह के नेतृत्व मे जयपुर की फौज रिणी पहुँची। इस समय ठाकुर लालसिंह (भादरा) बाय के किले मे थे और मग्रामसिंह चूरू के किले में। शादूलसिंह रिणी से चलकर सीधे बाय पर चढे।[2] इमसे पूर्व ही लालसिंह रात्रि को बाय से भागकर भादरा चले गये। लालसिंह की बाय मे पड़ी १० तोपो पर शादूलसिंह ने अधिकार कर लिया और बाय पर कब्जा कर लिया।[3]

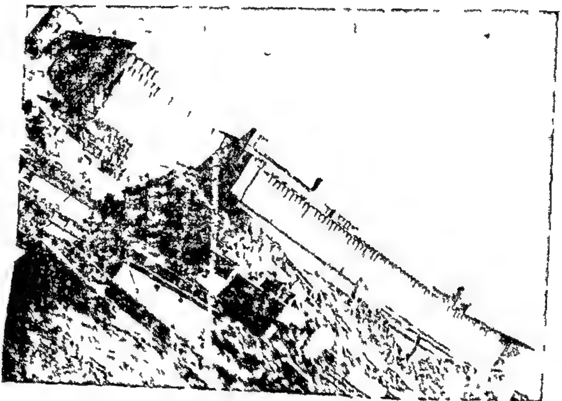
---

1 इस घटना पर किसी कवि ने केशरीसिंह की प्रशसा मे कहा

" केहरियो ! " करनाल, न जुडतो जयसिंघ सू ।

धा मोटी अवगाल, रहती सिर माह धरा ॥

2 राजपूताने का इतिहास बीकानेर का इतिहास, प्रथम भाग गौरीशंकर हीराचन्द ओझा पृ० ३१७



बादलगड, कुंभगढ़



शादुर्लसिंह की छतरी परशुरामपुरा



भखरी (नागौर) के किले का दृश्य



गोपीनाथ जी का मंदिर झुंझनू

शादू लसिह ने अब भादरा पर चढाई करदी । शार्दू लसिह द्वारा इस प्रकार लगातार पीछा करते देखकर लालसिह ने आत्म समर्पण कर दिया तथा पेशकशी के एक लाख रुपये शादू लसिह को दिये । शाद ल-सिह, लालसिह भादरा को लेकर जयपुर गये वहा उन्हे नाहरगढ मे कार्तिक वदि ११ वि स १७९७ तदनुसार ५ अक्टू० १७४० को कैद कर दिया गया ।[1] शादू लसिह द्वारा इस प्रकार लालसिह के दमन करने पर बीकानर राज्य में गडबड करने वाले साईदासोत शान्त हो गये । बीकानेर के विद्रोही सग्रामसिह ने भी बीकानर राजा जोरावरसिह से क्षमा याचना की और पच्चीस हजार रुपये देन का वचन दिया ।[2]

लूमास का युद्ध

जोधपुर नरेश अभयसिह द्वारा बीकानेर पर आक्रमण करने के कारण जयपुर नरेश जयसिह ने जोधपुर पर आक्रमण कर दिया । इस आक्रमण मे शेखावाटी के दो प्रसिद्ध वीर शिवसिह सीकर एव शादू ल सिह झुझनू भी जयसिह की सहायताथ गये थे । इन दोनो ने ९ वप पूर्व जो फतेतपुर क्यामखानियो से छीना था, वे उसे वापस हथियाने का प्रयत्न कर रह थे, उनके घाव अभी हरे थे और वे अवसर ढूढ रहे थे । शेखावाटी के इन दोनो वीरो के जयपुर की सहायताथ चले जाने पर क्यामखानियो को मौका मिलगया और उन्होंने एकत्रित होकर घोडीवारा के नवाब दोराज खा के सेनापतित्व मे वि स १७९७ ई स १७४१ मे योजनाबद्ध हमला बोल दिया । उस समय झुझनू मे

1 (i) राजपुताने का इतिहास बीकानेर का इतिहास, प्रथम भाग गौरीशकर हीराचन्द ओझा पृ० ३१७

(ii) शा० शे० इतिवृत, पृ० १४३

2 शा० शे० इतिवृत पृ० १४३

शार्दूलसिंह के छोटे भाई सल्हेदीसिंह थे । झुंझनूं की रक्षा का भार उन्ही पर था । उन्होने जब क्यामखानियो के हमले की बात सुनी तो बड़े भाई गोपालसिंहके(केड)पास दूत भेजकर उन्हे बुलाया । दूसरा दूत शार्दूलसिंह के पास भिजवा दिया । दोनो भाइयों ने गम्भीरता से विचार विमर्श किया । गोपालसिंह बीमार थे, फिर भी सामने आई हुई विपत्ति तथा शत्रु द्वारा राज्य पर आक्रमण के समय राजपूत शैया पर कैसे,सो सकता है ? गोपालसिंह की राय से सल्हेदीसिंह ने सेना एकत्रित की तथा गोपालसिंह के नेतृत्व मे फौज ने फतेहपुर की ओर कूच किया ।

फतेहपुर दुर्ग मे शिवसिंह के बहुत थोड़े व्यक्ति थे, वे क्यामखानियो के भीषण हमले का सामना न कर सके, क्यामखानियो ने फतेहपुर पर कब्जा कर लिया । फतेहपुर पर कब्जा करने के बाद वे पूरी ताकत से झुंझनू पर कब्जा करने के लिए बढे । इससे पूर्व ही शेखावतो की फौज गोपालसिंह के नेतृत्व मे फतेहपुर की ओर चल पड़ी थी । दोनो सेनाओ का मुकाबला झुंझनू से पश्चिम की ओर २० मील और फतेहपुर से पूर्व की ओर १५ मील की दूरी पर बसे लूमास ग्राम से आधा मील दक्षिण पश्चिम मे,लाडसर से १मील पश्चिम मे व जीतास से एक मील पूर्व मे तीन ओर से टीलो द्वारा घिरे हुए समतल मैदान में हुआ । क्यामखानियो की सेना पश्चिम मे थी और शेखावतो की पूर्व मे । क्यामखानियो ने जब सम्मुख आती हुई शेखावतो की फौज को देखा तो एक ऊंचे टीले पर उन्होने मोर्चा बन्दी करली और उन पर तोपे लगादी । एक मील की दूरी पर स्थित जीतास के कुए से सेना के लिए पानी की व्यवस्था कर ली । इस गाव के जाटों ने भी विधर्मियों का साथ दिया । कुए से पानी निकाल कर क्यामखानियों की फौज तक पहुँचाने का कार्य इन्होंने किया ।

इधर शेखावतो ने देखा कि क्यामखानियो ने अपने मोर्चे ऊंचे

टीलें पर कायम कर लिये हैं तो उन्होंने आस पास के अन्य ऊंचे टीलों पर मोर्चा बन्दी करनी शुरु करदी, मैदान में भी अनेक वीर डट गये। मैदान क्यामखानियों के मोर्चों से बहुत नीचे पड़ता था। अब सीधा हमला करना खतरे से खाली नहीं था। इसलिए उत्तर, पूर्व और दक्षिण तीनों ओर से मोर्चा बन्दी की। दोनों ओर से युद्ध छिड़ गया, दो दिन तक घमासान लड़ाई होती रही, दोनों ओर की शक्तियां जी जान से लड़ रही थीं। इस समय क्यामखानियों की स्थिति अच्छी थी, क्योंकि उनको मोर्चा बन्दी का अच्छा स्थान (ऊंचा टीला) मिल गया था और शेखावतों की फौज ढालू मैदान में थी। शिवसिंह व शार्दूलसिंह को जब क्यामखानियों के हमले का पता चला तो वे स्वयं तो नहीं आ सके, किन्तु उन्होंने वख्तसिंह, समर्थसिंह और चांदसिंह (शिवसिंह के पुत्र) को सेना देकर क्यामखानियों से लड़ने को भेजा। युद्ध के दूसरे दिन ये रात्रि को पहुंचे और उन्होंने अपने आने की सूचना गोपालसिंह व सल्हेदीसिंह को दे दी। गोपालसिंह ने आदेश दिया -"कल सुबह हम आगे से और पीछे से क्यामखानियों पर हमला करदें।" तीसरे दिन शेखावतों ने पूर्णरूपेण लड़ाई शुरु करदी। उन्होंने अर्द्ध चन्द्राकार सेना का व्यूह बनाकर आगे से हमला बोल दिया। पीछे से शार्दूलसिंह व शिवसिंह द्वारा भेजी गई सेना ने हमला बोल दिया। अचानक फौज का हमला देखकर क्यामखानियों के हौंसले पस्त हो गये। पीछे से हमला करने वाली फौज ने कुंए के कोठे को खोलकर क्यामखानियों के पास जाने वाला सारा पानी खराब कर दिया और बड़े वेग से क्यामखानियों पर आक्रमण कर दिया। क्यामखानी इस दुतरफी मार को सहन नहीं कर सके वे बुरी तरह से घिर गये, दोनों ओर से ही घमासान युद्ध हुआ। थोड़ी ही देर में जय-पराजय का निर्णय होने वाला था। इस युद्ध में जोरावरसिंह के पुत्र वख्तसिंह ने बड़ी जबरदस्त बहादुरी दिखाई थी।

युद्ध मे कितने सैनिक थे और कितने मारे गये? सही तथ्य प्राप्त नही हुये है, पर अनुमान है कि दोनो ओर से ही अधिक फौज इस युद्ध मे लडी थी तथा दोनो ओर से ही काफी हानि हुई। प्रसिद्ध क्यामखानी योद्धाओ का इस युद्ध मे अन्त हो गया। क्यामखानियो का जब शेखावतो की फौज का मुकाबला करने का साहस टूट गया तो बहुत से सैनिक रण भूमि छोडकर भाग गये, जिन्होने भागना उचित न समझा वे रण भूमि मे सो गये, विजय शेखावतो की हुई। शेखावतों के राज्य की नीव अधिक सुदृढ हो गई। इसके बाद शेखावतो की सेना फतेहपुर गई और उस पर कब्जा कर लिया।

इसी वर्ष चैत्र सुदि १२ वि स १७९८ ई सन १७४१ को चारण मोहाराम को कुतुबपुरा दान मे दिया।

गंगवाणा की लडाई

सवाई जयसिंह, जोधपुर से घेरा उठाकर जयपुर आ गये थे और तत्पश्चात् वे आगरा चले गये, उस समय वे आगरा व अजमेर के सूबेदार थे। अभयसिंह के छोटे भाई बख्तसिंह, जो सदैव अपने भाई को पछाड़ने के अवसर की खोज मे रहते थे, जयपुर के जयसिंह को बीकानेर सहायता के लिये प्रेरित किया था।[1] परन्तु जयसिंह की जोधपुर पर चढाई और मारवाड के अपमान ने उन दोनो को एक कर दिया। अब दोनो भाइयो ने मिलकर जयपुर पर हमला कर बदला लेने की सोची। बख्तसिंह उस समय के बडे बहादुर योद्धा थे, उनके साथ के पाच हजार वीर भी उतने ही लडाकू थे और वे भारत भर में वीर समझे जाते थे।[2] बख्तसिंह ने पहले अजमेर पर धावा किया और उस पर

1 Downfall of Mughal Empire J N Sarkar
हिन्दी अनुवाद डा० मथुरालाल शर्मा, पृ० १७७

2 महाराजा सवाई ईश्वरीसिंह का इतिहास ठाकुर नरेन्द्रसिंह मसनवदार जोबनेर, पृष्ठ ३१

कब्जा कर लिया, परन्तु अजमेर का किला उनके अधिकार मे नही आ सका। इधर वख्तसिंह के आक्रमण की सूचना जयसिंह को उस समय मिली, जब वे धोलपुर मे बालाजी बाजीराव के साथ महत्वपूर्ण राजनैतिक वार्ता कर रहे थे। उसी समय वे पचास हजार सैनिक लेकर अजमेर की ओर रवाना हुये। इनकी सेना वख्तसिंह की सेना के मुकाबले बहुत अधिक थी पर वह असंगठित और अस्तव्यस्त थी, जो यह बिना तय किए हुये कि दुश्मन से किस प्रकार लडना है, आगे बढी चली जा रही थी। यह विशाल सेना जब अजमेर से आठ मील पूर्व मे स्थित गगवाणा के पास पहुँची तो अचानक वख्तसिंह के पाच हजार बहादुरो ने जयसिंह की सेना पर हमला बोल दिया। वख्तसिंह के अचानक हमले से जयसिंह की सेना मे खलबली मचगई और कुछ ही घटो के बाद जयसिंह की विशाल वाहिनी पीछे हटने लगी।[1] वख्तसिंह व उनके पाच हजार वीर बडी बहादुरी से लडे। जयसिंह की सेना के अनेक वीर इस युद्ध मे मारे गये और बहुत से भागने की तैयारी करने लगे, परन्तु ज्योहि वख्तसिंह के लडाकू वीरो मे थोडी सुस्ती आई और समझने लगे कि जयसिंह की सेना भाग गई है, त्योहि जयसिंह ने अचानक बडा भीषण हमला किया और इस भीषण हमले मे राठोड वीर धराशायी हो गये। वख्तसिंह के पाच हजार वीरो में से ४७०० वीर रण भूमि मे सो गये, शेष वीरो के साथ वख्तसिंह रणभूमि छोडकर भाग पडे।[2]

---

1 Down fall of Mughal Empire J N Sarkar का हिन्दी अनुवाद डा० मथुरालाल शर्मा पृ० १७७

2 (i) जोधपुर राज्य का इतिहास ओझा, भाग २, पृ० ६५८ वंश भास्कर, सूर्यमल्ल मिश्रण

(ii) हाथी देग्यो दाइज, पातर करग्यो पस।
गगवाणे व गोर मू, भाग गयो वखतेस॥

रीया का मार्ग रोके शिवसिंह खड़े थे, जिनके भाई कासली के जैतसिंह की पुत्री का विवाह बख्तसिंह से हुआ था। इस कारण शिवसिंह ने बख्तसिंह को निकल जाने दिया पर उनके दो हाथी और दो तोपों को रख लिया। अभयसिंह, बख्तसिंह की शक्ति को जोधपुर के लिए घातक समझते थे। इस लिए इस युद्ध में उन्होंने बख्तसिंह की सहायता नहीं की। इस युद्ध मे शार्दूलसिंह जयसिंह के साथ थे, जिनके सैनिक और वे बडी बहादुरी से लड़े। यह युद्ध आषाढ शुक्ला ६ वि सं १७९८ तदनुसार ८ जून १७४१ को हुआ, जिसमे जयसिंह की विजय हुई।[1] गगवाणा की यह लड़ाई राजपूताने की प्रसिद्ध लड़ाइयों में से एक है। इस लड़ाई का आंखों देखा हाल हरचरणदास 'गुलजार ए सुजाई' पृष्ठ ३३७ और ३७९ पर लिखता है कि वह युद्ध के दूसरे दिन बहादुरों की लाशों पर घूमा था और उसने अनुमान लगाया कि करीब १२ हजार वीर मारे गये हैं और १२ हजार के लगभग घायल हुये हैं।

गगवाणा युद्ध मे विजय पाने के बाद जयसिंह अजमेर की ओर बढे। अजमेर से उत्तर पूर्व की ओर ६ मील पर स्थित लाडपुरा ग्राम के निकट अभयसिंह व बख्तसिंह फिर लड़ने के लिये जयसिंह के सम्मुख आ डटे। वहां जयपुर और जोधपुर मे संधि हो गई। जयसिंह ने जोधपुर के जिन सात परगनों पर अधिकार कर लिया था, सभी जोधपुर को वापिस लौटा दिये। शिवसिंह द्वारा छीनी गई तोपें व गिरधर गोपाल का हाथी बख्तसिंह को वापिस दे दिया और अजमेर के किले पर जयपुर का अधिकार रहा।

शार्दूलसिंह के अन्तिम दिन

गगवाणा की लड़ाई के बाद शार्दूलसिंह झुंझनू लौट आये।

1 टॉड ने इस युद्ध मे बख्तसिंह की विजय बतलाई है, परन्तु यह असत्य है, क्योंकि ऐतिहासिक तथ्य बतलाते हैं कि इस युद्ध मे जयसिंह की ही विजय हुई थी।

६ वर्ष की आयु से ही इनका संघर्षमय जीवन शुरु हो गया था और फिर झुंझनू पर अधिकार करने के बाद से लेकर अंत तक तो उन्हें अनेकों लड़ाइयां लड़नी पड़ी थी। इस प्रकार कठोर परिश्रम व संघर्षों के कारण उनका शरीर जर्जर हो गया था। इनको अपने अंतिम समय में परिवार सम्बन्धी संघर्ष भी सहन करने पड़े। इसलिए वे झुंझनू छोड़कर परशुरामपुरा रहने लगे और ईश भक्ति में रम गये। यहां इन्होंने अपने अंतिम समय वि स १७६८ ई सन् १७४२ में श्री गोपीनाथजी का सुन्दर मंदिर बनवाया। कुछ दिनों बाद ये बीमार हो गये। परशुरामपुरा में निवास करते करते वहीं चैत्र सुदि १३ वि सं १७६६ ई स १७४२ में इनका स्वर्गवास हो गया।[1]

इनकी स्मृति में परशुरामपुरा (पुराना) में इन पर १२ खम्भों वाली सुंदर छतरी उनके पुत्रों ने वि स १८०७ ई स १७५०[2] में बनवाई, जो शेखावाटी क्षेत्र की बहुत सुन्दर छतरी है। आज भी यह छतरी उस बहादुर की गौरव गाथा सुना रही है।

Boilean ने अपनी भ्रमण पुस्तक Tour Through the Western States of Raj wara in 1835' में इस भव्य छतरी का वर्णन इस प्रकार किया है।

"At Prusrampura is a handsome white domed building the chutree or mauseleum of Sardool Singh commonly said Sadaji, the founder of the Shekhawati power"[3]

---

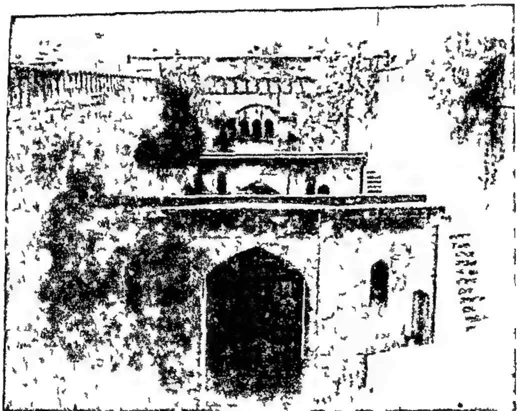
1 Shekhawats and their Lands Page 102

2 देखिये परिशिष्ट घ

3 खेतड़ी का इतिहास, प. झाबरमल शर्मा पृ ४०

विवाह तथा संतति

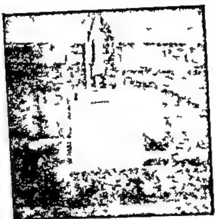
1 शादूलसिंह के तीन ठकुराणियां एवं ६ पुत्र थे - इनका प्रथम विवाह नाथासर के मनरूपसिंह बीका की पुत्री और किशनसिंह की पौत्री सहज कंवर से हुआ। दूसरा विवाह भी नाथासर में ही मोहकमसिंह बीका की पुत्री एवं किशनसिंह की पौत्री सिरहकंवर से हुआ और तीसरा विवाह पूंगलोता जिला नागौर के ठाकुर देवीसिंह मेड़तिया की पुत्री और अनोपसिंह की पौत्री वख्त कंवर से हुआ। तृतीय ठकुराणी मेड़तणीजी का जन्म अनुमानतः वि. सं. १७५४ में हुआ था। करीब १८-१९ वर्ष की आयु में शादूलसिंह के साथ इनका विवाह हुआ। छोटी ठकुराणी होने के कारण शादूलसिंह पर इनका बड़ा प्रभाव था। कहा जाता है कि झुंझनू विजयपरान्त सल्हेदीसिंह ने अपने भाई शादूलसिंह से आधा राज्य मांगा तो शादूलसिंह ने अपने भाई को हिसाब से गांवों का पट्टा कर दिया। मेड़तणीजी व सल्हेदीसिंह परस्पर एक दूसरे का बहुत सम्मान करते थे और जब सल्हेदीसिंह अपनी भाभी (मेड़तणी जी) से मिलने जाया करते थे तो मेड़तणी जी उनको ताजमी का सम्मान देती थी। शार्दूलसिंह से गांवों का पट्टा प्राप्त करने के बाद जब सल्हेदी सिंह मेड़तणी जी से मिलने गये तो उन्होंने सल्हेदीसिंह को ताजमी का सम्मान नहीं दिया। सल्हेदीसिंह ने इनका कारण पूछा तो मेड़तणी जी ने कहा ताजमी तो बराबर वालों को दी जाती है, अब आप हमारे पहरेदार हो गये हैं।" सल्हेदीसिंह ने यह सुनते ही उनके सम्मुख ही पट्टा फाड़ डाला और कहा "मुझे पट्टे की आवश्यकता नहीं है" तो मेड़तणी जी ने ताजमी का सम्मान दिया। यद्यपि सल्हेदीसिंह ने पट्टे को फाड़ कर अपने उज्ज्वल चरित्र का परिचय दिया परन्तु मेड़तणी जी ने स्वार्थ वश और चालाकी से गये हुए राजा को वापिस ले लिया।



माजी मेडतणीजी की बावडी, झुंझनू



वहादुरसिंह पर बनी छतरी (झुंझनू)



बादलगढ में स्थित शार्दुलसिंह
की प्रतिमा (झुंझनू)

जोरावरसिह ने वि स १७९७ मे जोरावरगढ बनवाना प्रारम्भ किया तो इनके मन मे यह भय पैदा हो गया कि जोरावरसिह गढ का निर्माण कर उनके पुत्रो को टिकने नही देगे। इस कारण शादूलसिह पर अपना प्रभाव डालकर गढ का काम बन्द कराने का प्रयत्न किया, परन्तु वख्तसिह के कारण मेडतणी जी की इच्छा पूर्ण नही हो सकी।

शादूलसिह की मृत्युपरान्त राज्य को टुकडे २ होने से बचाने के लिए जोधपुर के राजा ने मुन्दियाड के बारहठ जी को भेजा कि शादूलसिह के पुत्रो को समझाकर राज्य का स्वामी बडे पुत्र को बना दिया जाय और छोटे भाई छुट भाइयो की तरह रहे। इस कार्य को भी मेडतणी जी ने पूरा नही होने दिया और राज्य को पाच भागो मे बटवा दिया। अखयसिह की मृत्युपरान्त उनके हिस्से मे से जोरावरसिह को कुछ भी नही दिया गया और अपने ही तीनो पुत्रो मे बाट दिया। इन्होंने वि स १८४० मे झुझनू मे एक सुन्दर बावडी का निर्माण करवाया जो आज भी दर्शको को उनकी गाथा सुना रही है।

व्यक्तित्व

शादूलसिह का प्रादुर्भाव ऐसे समय मे हुआ जब दिल्ली के मुगलिया तख्त के दीमक लग गई थी और वह खोखला होकर गिरने ही वाला था। इधर यहा के स्थानीय शासको की भी यही स्थिति थी। इनमे परस्पर फूट, विद्रोह, द्वेष आदि का जहर इतना फैल चुका था कि उसका इलाज करना असाध्य हो गया था। ऐसी परिस्थितियो मे राजकुमार शादूलसिह ने अपने को पहचाना और क्षत्रियोचित धर्मानुसार अपने आप को कडे से कडे सघर्ष मे डाल दिया। अपने प्रारम्भिक जीवन मे न जाने इस राजकुमार ने कितने ही साहसिक कार्य किए और अपना मार्ग प्रशस्त किया। झुझनू मे आने के बाद उनके सामने सघर्षों की झडी सी लग गई, परन्तु उन सब

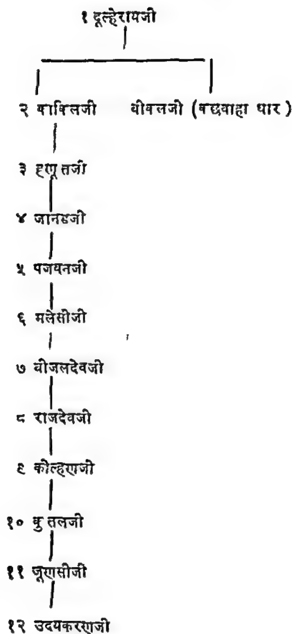
का इन्होंने साहस, बहादुरी और धैर्य से मुकाबला किया। इस संघर्षमय जीवन मे उनके क्षत्रियोचित गुण भी उभरते ही गये। फतेहपुर के हकदार मीर खा के शरण आने पर राजपूती धर्म को निभाते हुए अपनी जान जोखिम मे डालकर भी शरण मे आये हुए की रक्षा का भरसक प्रयत्न किया। डाकू टूटिया पाचोदा व अमानुला खा जैसे नवाब को मारकर एव अनेक युद्धो मे बहादुरी दिखाकर इस वीर ने राजपूती शौर्य का परिचय दिया। एक ओर ये जितने वीर थे दूसरी ओर ये उतने ही राजनीतिज्ञ थे, बिना शक्ति के प्रयोग के झुझनू बगड आदि पर अधिकार करने के काय इनकी राजनीतिक सूझ बूझ के उदाहरण हैं।

सक्षेप मे कहा जा सकता है कि शार्दूलसिह अदम्य साहसी, बहादुर योद्धा, व्यवहार कुशल, प्रतिभा सम्पन्न, समय के पारखी, कर्त्तव्य परायण, धैर्यवान, कुशल प्रशासक, राजनीतिक सूझबूझ के धनी एव विवेकशील शासक थे।

कछवाहो की वशावली

नल

ढोला
|
लक्ष्मण
|
वज्रदामा-वि १०३४ ई ६७७
|
मगलराज — सुमित्र (नरवर शाखा)
|
मधुव्रह्म
|
कान्हीक
|
देवानीक
|
ईशासिह
|
सोढदेव
|
१ दूल्हेरायजो (राजस्थान मे आये)
|


१ दूल्हेरायजी
२ काकिलजी
बीकलजी (कछवाहा धार)
३ हणूतजी
४ जानड़जी
५ पजवनजी
६ मलेसीजी
७ बीजलदेवजी
८ राजदेवजी
९ कील्हणजी
१० कुंतलजी
११ जूणसीजी
१२ उदयकरणजी

उदयकरणजी

बालाजी

मोकलजी

शेखाजी

दुर्गाजी (टकणेत)

रतनाजी (रतनावत)

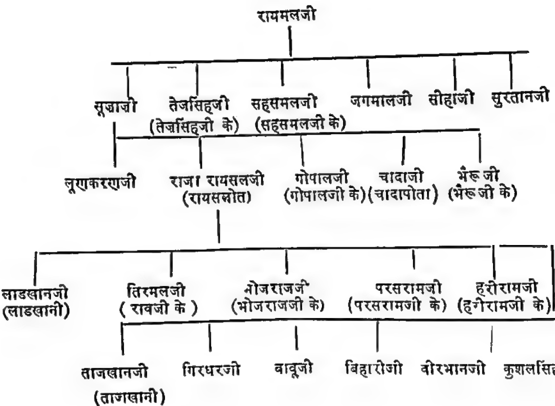
भरतजी, तिलोकजी, प्रतापजी (निरसल्लान)

आभाजी, अचलाजी, पूरणजी (मुलकपुरिया)

रिडमलजी, कुम्भाजी (खेजडोलिया)

मारमलजी

रायमलजी


रायमलजी
सूजाजी
तेजसिंहजी (तेजसिंहजी के)
सहसमलजी (सहसमलजी के)
जगमालजी
सीहाजी
सुरतानजी
लूणकरणजी
राजा रायसलजी (रायसलोत)
गोपालजी (गोपालजी के)
चादाजी (चादापोता)
भैरूजी (भैरूजी के)
लाडखानजी (लाडखानी)
तिरमलजी (रावजी के)
भोजराजजी (भोजराजजी के)
परसरामजी (परसरामजी के)
हरीरामजी (हरीरामजी के)
ताजखानजी (ताजखानी)
गिरधरजी
बावूजी
बिहारीजी
वीरभानजी
कुशलसिंहजी

भोजराजजी रायसलोत

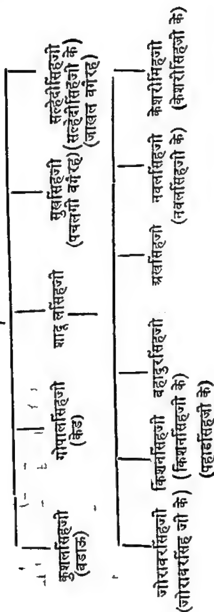
टोडरमलजी — केशरीसिहजी — रघुनाथसिहजी

पुरुषोत्तमसिहजी (झाझड) — भीमसिहजी (मण्डावरा) — श्यामसिह जी (मोई, मिढाई) — हिम्मतसिहजी (क्यारी, इस्तारपुरा) — हरनाथसिहजी — जूझारसिहजी (गुढा)

मोहनसिह जी (उदयपुर) — मुकन्दसिहजी (चिराणा, छापोली, लोहागल) — रूपसिहजी (छावसरी) — दीपसिहजी (रसूलपुर) — भगूतसिहजी (पोख) — जगरामसिहजी

किशोरसिहजी (नेवरी) — सरदारसिहजी (इन्द्रपुरा) — सूरतसिहजी (बडागाव) — अभयसिह — साहिबसिहजी — सुलतानसिहजी

मानसिहजी — प्रेमसिह जी (टोक वगैरह) — गुमानसिहजी — जयतसिहजी — शक्तिसिहजी — सावतसिह जी


जगरामसिंहजी
कुशलसिंहजी
(बडाऊ)
गोपालसिंहजी
(केड)
शार्दूलसिंहजी
सुखसिंहजी
(पचलगी वगैरह)
सल्हेदीसिंहजी
(सल्हेदीसिंहजी के)
(जावल वगैरह)
जोरावरसिंहजी
(जोरावरसिंह जी के)
किशनसिंहजी
(किशनसिंहजी के)
बहादुरसिंहजी
(पहाडसिंहजी के)
अखैसिंहजी
नवलसिंहजी
(नवलसिंहजी के)
केशरीसिंहजी
(केशरीसिंहजी के)

पचपानो की स्थापना—शार्दूलसिंह के जोरावरसिंह, किशनसिंह, बहादुरसिंह, अखयसिंह, नवलसिंह व केशरीसिंह छः पुत्र थे। बहादुरसिंह शार्दूलसिंह के जीवनकाल में ही वीरगति को प्राप्त हुए थे। शार्दूलसिंह की मृत्यु उपरान्त उनका राज्य पांच पुत्रों में बंट गया। पांचों पुत्रों का राज्य पचपाना के नाम से प्रसिद्ध हुआ। ज्येष्ठ बदि वि. स. १८०० को शार्दूलसिंह का राज्य उन के पांचो पुत्रों में निम्न प्रकार से विभाजित हुआ।

जोरावर सिंह	किशनसिंह	अखयसिंह	नवलसिंह	केशरीसिंह
परगना उदयपुर	परगना उदयपुर	परगना उदयपुर	परगना उदयपुर	परगना उदयपुर
१ परशुरामपुरा आधा	परशुरामपुरा ¼ हिस्सा	परशुरामपुरा ¼ हिस्सा	परशुरामपुरा ¼ हिस्सा	उदयपुर की लोक आधा हिस्सा
२ भोजनगर आधा	टोक	गुढा की लोक आधा	भोजनगर आधा	
३ खोजवास आधा	चारावास	बारवा आधा हिस्सा	खोजावास आधा	गुढा की लोक आधा
परगना झुंझनू	परगना झुंझनू	परगना झुंझनू	परगना झुंझनू	परगना झुंझनू
१ झुंझनू ⅓ हिस्सा	झुंझनू ⅓ हिस्सा	झुंझनू ⅓ हिस्सा	झुंझनू ⅓ हिस्सा	बारवा आधा
२ छऊ	कोलसिया	बुगाला	देरवाला	परगना झुंझनू
३ डूमरा	भगेरा	तेतरा	दैदावास	झुंझनू ⅓ हिस्सा
४ सीथल आधा	राजोती	तोलियासर	बीबासर	जेजूसर
५ घोडीवारा छोटा	वलरिया	दोरासर	बासडी	मालासर
६ सैसवास	फूसखाणी	उत्तरासर	ढीगायल	समसपुर
७ भोजासर	केरु	मेणवास बामणवाला	आबूसर	सोती
८ वीदासर	खीदरसर	कुलोद बडी	काट	रीजाणी
९ चन्दवा	नैयासर	मीठवास	पिलाणी	लादूसर
१० कुमास	नीराधणू	खालासी	टोडरवास	लादूसर

१७ सुलताणा	नीजामपुर	भूकाणा	कामसर	वगड ½ हिस्सा
१८ हंजमपुरा	वामणवास	मोरोत	गोठडी	नाटावास
१९ गोवला	रसूलपुर	बजावा	घरड	दोलावर पुर
२० तगलो	पीचाणवा	धीवा नूण	इसमायलपुर	खतेपुरा
२१ सुहासडो	नारी	पिलाणी रायन	सेही छोटू	जाखडा
२२ वगड ½ हिस्सा	मारो	खडोखडक	मालारो	ककडेऊ वडो
२३ डाबडो	पीथुमरो	घूमणसर	भोमीया	कलगाव
२४ मण्डेला	खोरी	काजडा	पीलाणी वीराको	ढाणी
२५ लालपुर	ईस्तारपुरा	भामरवासो	लथीक्पुरा	हमीदपुर
२६ अलीपुर	दूधवा	सूजडोला	गोठडी	भगोणा
२७ मालीया	अलसीसर	कोलोठ	खीदर पुर	मदघरो
२८ जमालसर	कानसूजो	ककडेऊ छोटो	दोवडो	पाथडिया
२९ पाण्डासो	पीपली	खरार	छापडो	मराजवास
			मोगा	बीजूसर

परगना सिराणा	परगना सिराणा	परगना सिघाणा	परगना सिराणा	परगना सिघाणा
१ सुलताणा	लोयल	होरवो	सिघाणा	सिघाणा
२२ ढढार	चोटासाई	भोया	गोठडो	बाजडाली
३ घडावो	माणोवो	घरडू	कोठाणो	ढोचोली

शार्दूलसिंह सम्बन्धी काव्य

(१)

तपै नप भोज उदैपुर थान । जणी जग गीह उद्योत बखान ।।
इला अनहद विरद उजाल । भयें जिन पाट सू टोडरमाल ।।
दखे नृप थान उदैपुर दोय । उमैं सुदसार उदार समोय ।।
रजै सुदता जगतेस सीसोद । भये जिन भोज सुमोज पयोद ।।
भिले जिन पाट सुरार झुझार । रखे खनवाट भुजाट उधार ।।
भये जिन धाम लियो जगराम । दवै बल विक्रम तैं खलताम ।।
उदै जगराम घरे मुरनद । तिका तप तेज मचे जदुंडिद ।।
वडे गऊपाल सलैदीय सिंग । धरा थव आगल सादूलसिंग ।।

(सवाईसिंह धमोरा के सग्रह से)

(२)

खल भाजण समग्र अकारो खारो, हाथ्या दे खागा हमल ।
साहजादा सादा सेखावत, इल सारी थारो अमल ।। १ ।।
त्रिजडा मडा मरोडैं तोडैं, नग रोपैं रोडैं नीसाण ।
अवलीमाण जगावत आगैं, इल खुरसाण न लोपैं आण ।।२।।
पमगा मडा खगा दल पिछटण, दिली धडक चहु चक्क डरैं ।
जोडैं पाण तुझ आगा लग, भौग रैण तुरकाण मरैं ।। ३ ।।
बल तप नमो भोजहर बीजा, महाप्रसण रण बहै मदा ।
राजा जिण सादा रजपूता, सबला ऊजड वाट सदा ।। ४ ।।

(३)

भाला भलकैं पलूरअणी दक्खल नीसाण भमै,
झूके सेस सीस भोम भार धुकैं धूल ।
लेखवा निहग जग तमासैं पतग लगा,
सार धारा वागा जानी सारखा सादूल ।।१।।
तोपा गोला धमका अलोपा सूरा वधै तेज,

नाह स जुझा उदगी सिंघा पै न दीठ ।
रीठ धारा चौधारा दुधारा फूल धारा रचै,
आथडै किलम्मा हु कुरमा आको दीठ ।।२।।
कु भाथला डोलै गजा धारालो आछटै करा,
पार सैन वीच हवै भवेल वार पार ।
तीन जाम नना तेम ताड तना सार तूठ,
जुटै जगा जवाना हुजगा रोजा धार ।।३।।
नरा, तुरा, गेमरा, सुसरी, गरा खेत नखै,
नेजा बाना खोसलीधा, बजाडे नाराज ।
नवाबा नमाडे ऊमा पगा श्राम चाढे नामी
राड जीतो धाड धाड बीजो भोजराज ।।४।।

आईदान जी खिडिया सादुलपुरा
(सवाईसिंह धमोरा के संग्रह से)

(४)

रण जोर अलखेण लहै जोरावर, भिडै श्याम खा छली भरै ।
सेस एक दस लिया सक्रडै, कूरम तो न सतोस करै ।। १ ।।
घणू लाभ कीधो वाघोरै, खाना घर न गुजरी खैर ।
सेस गुणो सादूल सिझायो, वाढी सेहद भ्रात रो वैर ।। २ ।।
श्यामल पोता करै कूक्वा, सो जग बाढी लेवै तिसार ।
जगड तणै सिंघव जाभरिया, ह्वेक्ण साटै सत्रु हजार ।। ३ ।।
घोडा भडा लिया धामांहर, अरिहर सेन बिधुसणहार ।
सादूला करडा वीरां सू पडपै कवण किया ओपार ।। ४ ।।

(५)

गुणियन चाढि गयद, दियो ग्राम सुलतानसर ।
रिजक देय नरियद, महडू जालमदान नू ।।

दुतिय ग्राम सादूलपुर, सव सुख रिद्ध सहेत ।
खिडिया ग्रादल कू अपै, निकट सू आप निकेत ।।
ग्राम सु तीजो कुतुवपुर, सरिता तीर सुचग ।
जागावत महराम कू, आपै भूम उमग ।।
कवियन कू इक बास दिय, दिये वहुरि दूलचास ।
ये खट सासरण कविन कू, आपै सहित हुलास ।।

(६)

वादलगढ वाको वरणयो, वाको भड सादूल ।
मार जिका नैं काढिया, कदै न आया भूल ।।
बाल बजावै ताल बिन, दोय गेन्द एक मूल ।
कयामखान्या जड वतन को, खोस लियो सादूल ।।
सीवाली सीधा किया, वरी किया वसीठ ।
बागा चकर विनोद मे, दोऊ पहर उदीठ ।।
किसनू जोरो केहरी, अखो नवल अणवीह ।
पाच सरीखा उपज्या, सादूला घरसीह ।।
सुत पाचो सादूल रा, प्रौद्धत करण प्रमाण ।
जुध जीतण छत्री जिका, सतवादी सव जाण ।।
पालण गो दुज दीन कू, अर्‍या उखालण मूल ।
नाम जिसो द्रग निरखियो, भड साचो सादूल ।।
सादूला जगराम रा, कीधी एक हमल्ल ।
अडपायत इन्देस र, उतर गया छै अमल्ल ।।
चौरल भगत चरूल, खडगदड मदफर खपै ।
सिह दूजो सादूल, जरद कथा जगरामवत ।।
काट रुहेलाखान नैं, वद वधु पचरग ।
अपणाई सादै इला, रायसलोता रग ।।

ग्राम इग्यारह तिगुणा, बारण ऊट विडग।
सादै बगस्या सेवगा, रायसलोता रग ॥

(शा शे इतिवृत व सवाईसिह धमोरा के सग्रह से)

(७)

छप्पय

सादा जिस्यो सपूत जको, इण घर मे जायो।
कर घण जुध केताक, भूभणू राज जमायो ॥
कायमखाया कनें, चाय कर रहियो जाकर ॥
कूट नबाबा काढ, ठाड सू बणग्यो ठाकर ॥
कबीलेदार केते किलम, भाल खाग रण भिलगिया।
मानूलखान सा जो मरद, मर मर माटी मिलगिया ॥

(८)

बुद्ध जुद्ध बल तें नीठ लीने नबावन ते
वो नहरें गिरिन्द के, नजीक दुग दोनो है।
दाहनी भुजा पें, इष्ट देव जाको देवालय
चौहटे चबूतरे को, राज चिन्ह जूनो है ॥
पूरब दिसा मे, पाच किल्ले पाच पुत्रन के,
उत्तर की ओर बावडी को मजबूनो है।
नामी नगर भूभणू को, जीरण इमारत जो,
सार्दूल जोर की सपूती को नमूनो है ॥

(मुकन्ददान बारहठ बिरमी)



शेखावत सरदारो पर बनी छतरिया (झुंझनू)

चतुर्थ खण्ड

अध्याय १

जोरावरसिंह तथा उनके वशधरो के ठिकाने

जोरावरसिंह (भोडकी)

(वि स १७६६-१८०२ ई स १७४२-१७४५)

विक्रमी अठारहवी शताब्दी के अन्तिम चरण मे शेखावाटी के नवावी शासन का अन्त करने वाले शादूलसिंह शेखावाटी के ऐसे नररत्न थे, जिनके नेतृत्व मे नवाबी शासन के अत्याचारो से पीडित हिन्दू जाति ने अमन श्रो' चन की श्वास ली। झुंझनू पर अधिकार जमाने के बाद इस प्रदेश मे सुख, शान्ति व सुव्यवस्था को कायम करनेवाले उनके एक वीर पुत्र जोरावरसिंह थे, जिन्होने उत्पाती व्यक्तियो का दमन कर प्रजा मे शाति स्थापित की।

शादूलसिंह की मृत्यु के बाद पचपानो की नीव पडी। इन पचपानो के सिरमोर जोरावरसिंह थे। इनकी ईमानदारी कर्त्तव्यनिष्ठा और भ्रातृत्व प्रेम के कारण राज्य के बटवारे मे किसी प्रकार का विघ्न नहीं हुआ। इनकी बहादुरी और रण चातुर्य ने पिता के राज्य की जडें मजबूत करने मे काफी सहयोग दिया। इनकी सद्वृत्ति और व्यवहार कुशलता ने घनिष्ट मित्र पैदा किये तथा प्रभावशाली व्यक्तित्व ने झुंझनू नवाब की बेगम पर जादुई असर किया।

झुंझनू से १४ मील की दूरी पर बसे काट ग्राम मे शादूलसिंह की ज्येष्ठ ठकुराणी बीकावतजी के गर्भ से जोरावरसिंह का जन्म वि स १७५७ ई सन् १७०० मे हुआ था। उस समय शादूलसिंह अपनी ठकुराणी सहित वही ठहरे हुये थे। इनकी बहिन गुमान क्वर का जन्म भी काट मे ही अनुमानत वि स १७७८ ई सन् १७21 मे हुआ था।

अनुमानत वि स १७७८ ई सन् १७२१ मे शादूलसिंह नवाब रौहिलाखा द्वारा बुलाने पर झुंझनू आये और वहा अपना काय जमाया। अचानक बीकावतजी के बीमार होने के कारण वे परशुराम-पुरा मे रुके। इसके फलस्वरुप उनके शत्रुओ ने नवाब को इनके विरुद्ध भडकाया और जब शादूलसिंह झुंझनू अ ये तब नवाब ने इनसे काट गाव का पट्टा लौटाने को कहा इन्होने उक्त पट्टा लौटा दिया और डेरे मे आ गये। कहा जाता है कि उस समय जोरावरसिंह ने बिगडती बात को सुधारने के लिए बेगम के पास गये और बेगम से अपने पिता के अप्रसन्न हो जाने की बात कही तो बेगम ने नवाब बुरा भला कहा और अन्त मे नवाब ने इनको मनाकर काट गाव का पट्टा वापिस शादूलसिंह को सौंप दिया। किंवदन्ती है कि बेगम जोरावरसिंह से खुश थी। वह इन्हे नवाब का उत्तराधिकारी बनाना चाहती थी।

शादूलसिंह के झुंझनू पर अधिकार जमाने के बाद इनके विरुद्ध क्यामखानी एक जुट होकर स्थान स्थान पर उत्पात मचाने लगे। सल्हेदीसिंह तथा जोरावरसिंह दोनो प्रदेश मे शांति स्थापना के लिये निकले। प्रदेश मे घूम घूम कर इन्होने उत्पाती क्यामखानियो का दमन किया, जो मुकाबले पर तुले उन्हे मौत के घाट उतार दिया गया तथा जिन्होंने अधीनता स्वीकार की, उन्हे किसी प्रकार की हानि नहीं हुई।

नवाब रोहिलाखां की बेगम की इच्छा तथा अडिग आत्म विश्वास के साथ शार्दूलसिंह ने झुंझनूं पर अधिकार कर लिया। इससे क्यामखानी बड़े असंतुष्ट हुये। नवाब अमानुलाखां एलमाण बड़वासी, शार्दूलसिंह का कट्टर शत्रु बन गया। वह अपने बल से शार्दूलसिंह को गद्दी से नहीं हटा सकता था। इसलिए दिल्ली से सहायता प्राप्त करने के लिए वह वि. स. १७८७ ई. स. १७३० में दिल्ली की ओर रवाना हुआ। वहां से फौज प्राप्त कर शार्दूलसिंह पर आक्रमण करने की तैयारी करने लगा किन्तु जयपुर नरेश की उस समय दिल्ली दरबार में बहुत पहुंच थी और वे शार्दूलसिंह के मददगार थे। इस कारण एक वर्ष से भी अधिक समय वहीं लग गया। अन्त में नारनौल के नायब सूबेदार मुज्जफर अली खां की फौज लेकर वह झुंझनूं की ओर रवाना हुआ। यह बादशाही फौज, जो मुज्जफरअली के जरिये अमानुलाखां की सहायता के लिए आई थी, सिंघाने में रुक गई। अमानुलाखां पहले बड़वासी पहुंचा और फिर झुंझनूं की ओर रवाना हो गया। शार्दूल सिंह को गुप्तचरों के जरीये सब बातों का पता चल गया था। वे झुंझनूं से बड़वासी की ओर चले। बड़वासी से ६ मील डूमरा से डेढ मील उत्तर में जेसूसर के मार्ग पर शार्दूलसिंह व अमानुलाखां की भिड़न्त हुई। इस समय जोरावरसिंह भी अपने पिता के साथ थे। अमानुलाखां का पहला वार जोरावरसिंह के माथे पर हुआ, जिससे उनके माथेपर घाव हो गया। जोरावरसिंह को घायल होते देखकर शार्दूलसिंह ने अमानुलाखां को ललकारा, वह उन पर झपट्टा। उचित समय देखकर जोरावरसिंह ने अपना भाला नवाब पर चला दिया, वह सदा के लिए जमीन पर सो गया। इस प्रकार जोरावरसिंह ने अपने पिता के कट्टर शत्रु को मौत के घाट उतारकर झुंझनूं पर पूर्ण अधिकार जमा लिया।

कार्तिक वदि २ वि स १७६२ मे जोरावरसिंह ने महंत गोवर्धनदासजी को श्रीजी के निमित दो कुए दान मे दिये।

नरहड एक प्राचीन ऐतिहासिक स्थल है। यह झुंझनू मे उत्तरी पूर्वी कोने मे २२ मील की दूरी पर बसा है। वि स १७८८ मे यहा का नवाब अब्दुल करीम खा था। नारनौल के हाकिम अलीकुली खा और अब्दुल करीम खा के पिता कुतुब खा की परस्पर अनबन चलती थी। इस कारण अलीकुली खा कुतुब खा का कट्टर शत्रु था। जोरावरसिंह अलीकुली खा के मित्र थे। अलीकुली खा जोरावर सिंहजी से मिला और नरहड के नवाब की शिकायत बादशाह से करके वि स १७८८ ई सन् १७३२ मे नरहड का पट्टा शादूलसिंह के नाम करवा दिया और फिर नरहड पर जोरावरसिंह ने अधिकार कर लिया।

सुलताना झुंझनू से १८ मील पूर्व मे काटली नदी के उस पार बसा है। सुलताना उस समय दो भागो मे विभक्त था- पूर्वी भाग सिंघाना परगने के अधीन था एव पश्चिमोत्तरी भाग नरहड प्रदेश के अधिकार मे था। सुलताना का नवाब उस समय खाजू खा था। एक दिन जोरावरसिंह अकेले ही खाजू खा से भिड गये और कुछ देर के युद्ध के बाद खाजू खा को मौत के घाट उतार दिया। इस प्रकार वि स १७८८ ई सन् १७३१ मे इन्होने सुलताना पर अधिकार कर लिया। इसी वर्ष खुडाना के नवाब सिकन्दर खा के वशधरो एव नारी-सारी के आदम खा के वशजो को पराजित कर दोनो गावो पर अधिकार कर लिया।[1]

1 Shekhawats and their Lands Page 100 एव शादूलसिंह शेखावत पृ १२४ पर सिकन्दर खा से खुडाना एव आदमखा से नारी-सारी लेना लिखा है, परन्तु यह सही नही है, क्योकि इस समय इन प्रदेशो पर ये नवाब

सिंघाना के गावो पर अधिकार

वि स १७९५ ई स १७३८ मे नादिरशाह ने दिल्ली मे कत्ले आम की। उस समय दिल्ली की राजनीतिक व्यवस्था गड़बड़ा गई। इस अव्यवस्था का शार्दूलसिंह और उनके पुत्र जोरावरसिंह ने पूरा पूरा लाभ उठाया। सिंघाना परगना उस समय खालसा था, जोरावरसिंह ने अपने बाहुबल से सिंघाना के अनुमानत १२ गावो पर अधिकार कर लिया और अपने राज्य मे मिला लिया।[1]

जोरावरगढ का निर्माण

वि स १७९७ ई सन् १७४१ मे जोरावरसिंह ने झुंझनू में एक गढ का निर्माण करना शुरु किया जिसको इनके पुत्र वख्तसिंह ने पूर्ण करवाया। गढ बनाने पर शार्दूलसिंह व वख्तसिंह मे परस्पर विरोध भी हुआ, किंतु गढ का निर्माण काय रुका नही और वह पूर्ण हो गया। आज यह झुंझनू शहर के बीचो बीच एक टीले पर खडा हुआ है, जिसमे तहसील का कार्यालय है।



जोरावरगढ का मुख्य द्वार

नही थे। खुड़ाना मे सिकन्दर खा के वशधर सम्भवत प्रपौत्र और नारी-सारी पर आदम खा के वशधर (सम्भवत प्रपौत्र) शासन करते थे।

1 Lieutenant Colonel Lockett s Journal and Report on Shekhawatee in April 1831

(W R Reply, Page 128)

गगवाणा के युद्ध मे

जोधपुर नरेश अभयसिंह बडे बहादुर थे । जयसिंह द्वारा बीकानेर की सहायता और फिर जोधपुर पर हमला करने के कारण वख्तसिंह असन्तुष्ट हो गये थे । इसका कारण वख्तसिंह ने अजमेर पर हमला किया और उसको अपने अधिकार मे कर लिया । जयसिंह अपनी ५०,००० सेना लेकर बख्तसिंह का मुकाबला करने के लिये चले । गगवाणा स्थान पर दोनो सेनाओ मे घमासान युद्ध हुआ । इस युद्ध मे शादूलसिंह के साथ जोरावरसिंह भी थे । जयसिंह की पचास हजार सेना के संमुख बख्तसिंह की पाच हजार सेना कुछ न कर सकी और भाग खडी हुई । यह युद्ध वि स १७९८ ई स १७४१ मे हुआ ।

शार्दूलसिंह का निधन जयपुर द्वारा ट्रिब्यूट की वसूली

शादूलसिंह वि स १७९९ ई स १७४२ मे मृत्यु को प्राप्त हुये । वि स १८०० ई स १७४३ म इनका सम्पूर्ण राज्य इनके पाचों पुत्रो म बट गया जो 'पचपाना' कहा जाने लगा। शादूलसिंह जयपुर को झुझनू राज्य की पूरी ट्रिब्यूट नही चुका सके थे । अत उनकी मृत्यु के बाद जयपुर ने जोरावरसिंह झुझनू के समुख यह शत रखी कि जब तक जयपुर की पूरी ट्रिब्यूट वसूल नहीं हो जाती तब तक जोरावरसिंह राज्य काय मे किसी प्रकार की दखल नही देगे । जोरावरसिंह ने यह शत मानली और वसूली लूणकरण बोहरे के आदमियो द्वारा करवाये जाने की शत रखी । सम्भवत जयपुर ने भी यह शत मानली । झुझनू राज्य के १०५६००) रुपये ट्रिब्यूट के रुप में तय किये गये जो पाचों पुत्रो के हिस्से में थे । जोरावरसिंह के २१९२०) रुपय हिस्से मे आये ।[1]

---

1 W R Reply, page 177

शादू लसिह ने परशुरामपुरा में श्रीगोपीनाथजी का मदिर बनवाना शुरु किया, किन्तु यह उनकी मृत्यु तक पूर्ण नही हो सका। जोरावरसिह व इनके भाइयो ने इस मदिर को सम्पूर्ण करवाया तथा मदिर के पुजारियो को ६०१ बीघा जमीन, एक कुआ और कोठी श्रीजी क भोग के लिए दिये।[1]

चला पर अधिकार

उदयपुरवाटी से जब हम नीमकाथाना की ओर जाते हैं तो पक्की सड़क पर १६ मील की दूरी पर पहाडो के बीच मैदानी भाग म चला बसा हुआ है। उस समय चला पर उग्रसेनजी के शेखावतो का अधिकार था। जयपुर का ट्रिब्यूट उन पर बकाया चल रहा था। दन्तकथा है कि ये जयपुर को ट्रिब्यूट चुकाने मे असफल रहे तो जोरावरसिह ने जयपुर को ट्रिब्यूट चुकाने का वचन दिया और उग्रसेनजीका को प्रसन्न कर लिया। इसके बाद इन्होने वि स १८०१-२ ई सन् १७४४-४५ में चला पर अपना पूर्ण प्रभुत्व जमा लिया। अनुमानत इसी वर्ष इन्होने पिता की इच्छानुसार वढेडा भी जीत लिया।

अन्तिम समय

जोरावरसिह ने अपने जीवन काल मे ही अपना राज्य अपने पुत्रो मे बाट दिया और स्वय चला तथा भोडकी लेकर चला मे रहने लगे। वही वि स १८०२ ई स १७४५ मे इनकी मृत्यु हो गई।[2] इनकी स्मृति

1 ६०१ बीघा जमीन के ताम्रपत्र की नकल परिशिष्ट मे देखें।

2 शेखावाटी प्रकाश के लेखक रामचन्द्र शास्त्री इनकी मृत्यु वि स १८०४ ई स १७४७ मे मानते हैं, परन्तु यह सही नही है। विल्स रिपोर्ट और उसका उत्तर (अंग्रेजी) पृष्ठ १७२ ७३ पर लिखा है कि–

When Bakhat Singh in 1745 A D misunderstood the order of the Maharja to mean that he was to vacate his "Taluq while in fact it was an order to give possission of Akhey Singh s Taluq

में एक सुन्दर छतरी बनवाने हेतु इनके पुत्रों ने कलात्मक पत्थर मंगवाये और छतरी का निर्माण शुरु कर दिया, किंतु किसी कारणवश यह छतरी सम्पूर्ण नहीं हो सकी और आज भी बुरी दशा में अस्तव्यस्त पड़ी हुई है।[1]

विवाह तथा संतति

जोरावरसिंह के चार पत्नियां थी।

१ हंसाकंवर–उमरावत बीका, मुकनसिंह की पुत्री और उदयसिंह की पौत्री।

२ केसरकंवर–जोधा सूरतसिंह की पुत्री।

३ जीवकंवर–जसरापुर के निरवाण हिम्मतसिंह की पुत्री

४ अखयकंवर–मेड़तिया श्यामसिंह की पुत्री।

इनके ग्यारह पुत्र थे। वृद्धसिंह, बख्तसिंह, जोधसिंह, हाथीसिंह, जालिमसिंह, उम्मेदसिंह, सांवलसिंह जयतसिंह महासिंह, कीर्तसिंह व दौलतसिंह। वृद्धसिंह अविवाहित ही मर गये थे। अतः शेष में बड़े पुत्र बख्तसिंह थे, जो पिता के उत्तराधिकारी बने।

बख्तसिंह (चौकड़ी)

१ बख्तसिंह (वि स १८०२-१८११ ई स १७४५-१७५४)

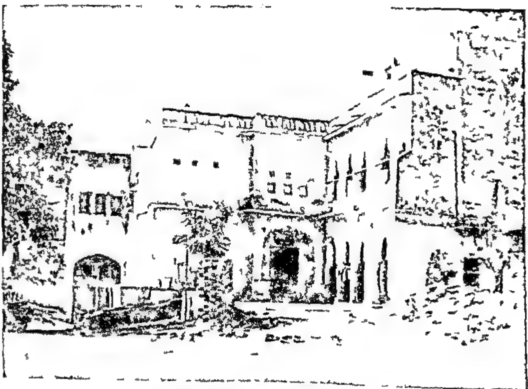
उदयपुरवाटी से नीमकाथाना जाने वाली सड़क पर बसे गुहाला गांव से ३ मील दक्षिण पश्चिम में तथा उदयपुरवाटी से खण्डेला जाने

क्यूं कि बख्तसिंह जोरावरसिंह के पुत्र थे। अतः सिद्ध है कि जोरावरसिंह की मृत्यु अक्षयसिंह की मृत्यु के कुछ समय बाद ही हो गई थी।

1 यह छतरी मैंने देखी है। केवल दो फुट ऊंचा चबूतरा है। अगर जोरावरसिंह के वंशज इस छतरी का सम्पूर्ण निर्माण करवादें तो उनके महान् पुरुष की यादगार रह सकती है।



वरनसिंह (चौकड़ी)



जोरावरगढ का भीतरी दृश्य (झुंझनू)


चौकनी दुग के महल

वाली पक्की सडक पर बसे कोटडी गाव के दक्षिण मे छ मील की दूरी पर चौकडी पहाडो के बीच मैदानी भाग मे स्थित है। जोरावरसिह के ज्येष्ठ पुत्र बख्तसिह ने इस पर अपना प्रभुत्व कायम किया और इसे ही अपनी राजधानी कायम की।

वख्तसिह का जन्म अनुमानत वि स १७७७ ई सन १७२० मे हुआ। वि स १७९७ ई सन् १७४० में इन्होंने अपनी पिता की इच्छा स जोरावरगढ का निर्माण करवाना आरम्भ किया। इससे इनकी दादीसा मेडतणीजी वहुत नाराज हुई और उन्हे सन्देह हुआ कि कही गढ के निर्माण हो जाने पर वह उनके पुत्रो से राज्य न छीन ले। जनश्रुति है कि मेडतणीजी ने शार्दूलसिह से गढ को रोकने के लिए कहा। वख्तसिह अपने पिताजी की भाति वीर थे। इस कारण शार्दूलसिह उनको निराश नही करना चाहते थे, किन्तु मेडतणीजी के दबाव के कारण शादूलसिह ने बख्तसिह को गढ के निर्माण को रोकने के लिए कहा। बख्तसिह ने दादीसा को गढ का काय न रुकवाने की अर्ज की।[1] इसे शादूलसिह ने तो मान लिया किन्तु मेडतणीजी वहुत नाराज हुई।

1 दन्त कथा है कि जब बख्तसिह ने गढ का निर्माण नहीं रुकवाया तो शादूलसिह ने कहा– क्यो, मेरे धोला म धूल डलवाते हो ?' प्रत्युत्तर म बख्तसिह ने कहा– "आपके तो दादाजी धोला म धूल पडती है पर गढ का निर्माण न होने स मेरे भी तो कालो म धूल पड जायगी। इस उत्तर से शादूलसिह बडे

वि स १७६८ ई सन् १७४१ मे सवाई जयसिंह (जयपुर) और बख्तसिंह (नागौर) के बीच होने वाले युद्ध मे बख्तसिंह ने भी भाग लिया था । वे इस युद्ध में जयपुर के पक्ष मे लडे थे ।

ये अपने पिता जोरावरसिंह की मृत्यु के बाद गद्दी पर आसीन हुये और उग्रसेनजी शेखावतों से चोकडी ली, वहा गढ का निर्माण किया तथा उसी को अपनी राजधानी कायम की । जयसिंह की मृत्यु के बाद जयपुर की गद्दी के लिए उनके दोनों पुत्रों-ईश्वरसिंह व माधोसिंह में संघर्ष होने लगा । इस संघर्ष मे बख्तसिंह ने माधोसिंह का पक्ष लिया और १ जनवरी १७५१ को माधोसिंह के राजतिलक के समय भी बख्तसिंह गये थे । इस समय इन्हे १४४४) झाडसाही राज सिक्के का मनसब मिला । जयपुर को चुकाये जाने वाले कर में ये १४४४) रुपये झाडसाही सिक्के की छूट इनके वंशजों को भी थी ।

वि स १८०७ मे सिंघाना परगने का आधा भाग इन्होंने अपने बल बुद्धि से लिया ।[1] जब तक यह जीवित रहे, सिंघाना परगना इनके नियन्त्रण मे ही रहा ।

वि स १८०२ ई सन् १७४५ मे शार्दूलसिंह के तृतीय पुत्र अखयसिंह की मृत्यु हो गई, ये निस्सन्तान थे । इस कारण किशनसिंह अपने पुत्र पहाडसिंह को अखयसिंह का दत्तक पुत्र बनाना चाहते थे । बख्तसिंह ने कोई एतराज नही किया, किन्तु नवलसिंह एव केशरीसिंह

प्रसन्न हुये और मेडतणीजी से कहा– "तीन पीढी तक तो राज्य कही नहीं जायेगा ।"

1 परिशिष्ट देखिये ।

ने पहाडसिह को दत्तक पुत्र नही माना। अत अखयसिह के राज्य के तीन भाग हो गये, जो किशनसिह, नवलसिह और केशरीसिह को प्राप्त हुए। वख्तसिह को कुछ भी नही मिला। वि स. १८११ ई सन् १७५४ मे सिघाने मे वख्तसिह की मृत्यु हो गई। इनकी अ`तेष्टि कुशलसिह के बाग मे की गई। उस समय ब्राह्मणो को काफी दान दिया गया।

संतति इनके चार पुत्र थे-अर्जु नसिह उद्योतसिह, दुल्लेसिह और भीमसिह।

२ अर्जु नसिह से मंगलसिह तक
(वि स १८११-१८५० ई स. १७५४-१८९३)

वख्तसिह के मरने के बाद अर्जुनसिह वि. स १८११ ई. सन् १७५४ मे गद्दी पर आसीन हुये। इनके तीन भाई थे-उद्योतसिह, दुल्हेसिह और भीमसिह। उद्योतसिह और दुल्हेसिह तो स`तान रहित मर गये। छोटे भाई भीमसिह को कुमावास जागीर मे मिला। वि स १८११ ई सन् १७५६ मे सिघाना परगना वख्तसिह की इच्छानुसार दो भागो मे विभक्त हुआ। आधा भाग अर्जु नसिह को प्राप्त हुआ और आधा भाग किशनसिह के पुत्र भोपालसिह को। सिघाना परगना अर्जु नसिह व भूपालसिह के इजारे पर था।

वि स १८१६ ई सन् १७६२ [1] मे सिघाना परगने का आधा हिस्सा जो अर्जु नसिह के अधिकार मे था, नवलसिह को दे दिया गया और इसके बदले मे काटली खेडी के ग्राम दिये गये।[2] वि स १८२७ ई सन् १७७० मे काटी परगना भी इनके हाथ से निकल गया। इस प्रकार

1 Shekhawats and their Lands page 123

2 शेखावाटी प्रकाश अध्याय १२, पष्ट ३

वि. स. १९३५-३६ ई सन् १८७८-७९ मे मगलसिंह का शिवदानसिंह व रूडसिंह से झगडा हो गया। जिसमे मगलसिंह के आदमियो ने जूझारसिंह के चार आदमियो को मार दिया था। इस कारण जयपुर की ओर से चौकड़ी पर घोडो की तलब बैठ गई थी। खेतड़ी नरेश अजीतसिंह ने मध्यस्थता कर मामला सुलझाया।[1]

इनकी मृत्यु कार्तिक बदि १२ वि स. १९५० रविवार को हुई।[2] इनके तीन पुत्रिया थीं - बडी पुत्री जडावकवर का विवाह बडली के कुमार मोतीसिंह के साथ हुआ। इनसे छोटी गुलाबकवर का गुठालिया के शम्भूसिंह तथा सबसे छोटी चादकवर का विवाह मार्गशीर्ष सुदि १४ वि स १९४२ को दोतराय के ओकारसिंह के साथ हुआ। इनके पाच पुत्र गोपालसिंह, गणपतसिंह, भूरसिंह शिवनाथसिंह तथा रामलालसिंह थे।

गोपालसिंह (वि स १९५०-१९९७ ई स १८९३-१९४०)

ठा मगलसिंह चोकडी के ज्यष्ठ पुत्र गोपालसिंह का जन्म वि स १९१४ ई स १८५७ ई मे हुआ। वि स १९३५ ई सन् १८७८ मे बैगीशालसिंह कुमावास ने इनको तलवार से घायल कर दिया था।

ये वि स १९५० मे पिता की मृत्यु होने पर कार्तिक सुदि ८ वि स १९५० में चौकडी की गद्दी पर आसीन हुए। पिता की मत्यु के छ साल बाद वैशाख सुदि १ वि स १९५६ तदनुसार १० मई, १८९९ मे चौकडी राज्य के बटवारे सम्बन्धी सारो भाइयो मे गोपालसिंह, भूरसिंह, शिवनाथसिंह और गणपतसिंह के बीच एक शर्तनामा (Agreement) हुआ,[3] जिसमे निम्न लिखित विशेष निर्णय थे

1 आदर्श नरेश प० झाबरमल शर्मा, पृष्ठ 31

2 चौकडी ठिकाने की खच की बही के अनुसार।

3 Memorial [Gopal Singh Chokari] Page 11

१ गोपालसिंह को ६००० रु हिस्से के तथा २१०० रु टीकाई के - कुल ८१०० रु तथा भूरसिंह, शिवनाथसिंह तथा गणपतसिंह को छः छः हजार रुपये की जायदाद प्राप्त हुई।[1] १८०० रु सम्मिलित धन राशि रही तथा रामलालसिंह की विधवा ठकुराणी का ४०० रु. से प्रबन्ध किया गया।

२ जयपुर राज्य की ट्रिब्यूट चारो भाई, चौकडी, चला और झुंझनूं वाटी की बराबर अदा करेंगे।[2]

३ पिता के ऋण को चारों भाई समान रूप से चुकायेंगे।[3]

४ चारो भाइयों में से कोई भाई किसी दूसरी जगह से लडका गोद नहीं लेगा। यदि किसी भाई की मृत्यु हो जाये तो इन्हीं चारों भाइयों के पुत्रों में से ही गोद ले सकता है। अगर चारो भाइयो में से किसी के मर जाने पर किसी भी भाई के पुत्र न हो तो उसकी ठकुराणी कोई अन्य पुत्र गोद नहीं लेगी। उसको खर्चा देकर हिस्सा जीवित भाइयों को ही प्राप्त होगा। अगर तीनो भाइयो के ही सन्तान नहीं हैं और वे तीनो मर जायें और जो भाई जीवित रहे,यदि उसके भी सन्तान न होतो वह अपने अन्तिम समय में अपनी इच्छानुसार दत्तक पुत्र बना सकता है।

५ प्रत्येक भाई अपने हिस्से में से अपने नौकर, चारण या ब्राह्मण को ईनाम दे सकता है, अन्य भाई कभी इसका विरोध नहीं करेंगे।[5]

इसके अतिरिक्त प्रति कुए से २ रुपये, प्रति सौ बीघा जमीन पर एक रुपया तथा झुंझनू वाटी के प्रत्येक कुए से एक रुपया वसूल किया जायेगा, जिसका अलग फण्ड होगा और ये रुपये बूजी साहिब (चारों भाइयो की माता) के पास रहेंगे, जो लडकियो की शादी में

---

1 Memorial (GopalSingh Chokari) Page 12
2 3 4 " " 13
5 " " " 14

लगेंगे ।[1] — —... इत्यादि निर्णय थे। यह शर्तनामा सूरजगढ़ के कामदार शाह गंगाधर ने लिखा।

यह (Agreement) शर्तनामा जयपुर दरबार की स्वीकृति हेतु भेजा गया। फुल बेंच कोर्ट ऑफ दी कौंसिल ने १४ मई १९०१ को कुछ परिवर्तन के साथ निर्णय दे दिया और ११ अक्टूबर १९०१ को इस पर महाराजा जयपुर के हस्ताक्षर हो गये। इस प्रकार इस शर्तनामा को महाराजा जयपुर ने अपनी स्वीकृति दे दी।

मंगलसिंह की मृत्यु के बाद जयपुर दरबार को २८००० रुपये सालाना देने पर चौकड़ी ठिकाना वापिस मंगलसिंह के वंशजों को प्राप्त हुआ।[2]

गणपतसिंह वि स १९६४ ई सन् १९०७ में सन्तानहीन मृत्यु को प्राप्त हो गये। तीनों ठिकानों के वकीलों ने उसके राज्य को तीनों में बांटने की अपील की। इसके बाद भूरसिंह भी सन्तान रहित वि स १९६८ ई स १९११[3] में मर गये तब शिवनाथसिंह ने दोनों के राज्य को दोनों भाइयों में बांटने की अपील की। उसी समय गोपालसिंह ने दोनों हिस्सों को टीकाई होने के नाते अपने में मिलाने का प्रार्थना पत्र पेश किया। रेवन्यू विभाग ने अपना आदेश २४ फरवरी १९११[4] को दिया जिसके अनुसार भूरसिंह का हिस्सा शिवनाथसिंह को प्राप्त हुआ।

वि स १९७२ ई सन् १९१५[5] में शिवनाथसिंह भी निस्सन्तान मर गये, तब जयपुर ने बटवारे सम्बन्धी मामले को ५ सितम्बर १९१५ को वापिस ले लिया। मृत्यु के दो माह पूर्व शिवनाथसिंह ने एक पत्र लिखा था, जिसमें लिखा था कि उसके हिस्से को गोपालसिंह को देने

1 Memorial GopalSingh Chokari Page 15
2 3 „ , , 2
4 Memorial (GopalSingh Chokari)page 21
5 „ „ , „ 2

से उसके नौकरों आदि को दु ग सहना पड़ेगा। अत उसका हिस्सा जोरावरसिंह के सात ठिकाने मलसीसर, टाई, चोकड़ी, डाबड़ी, गागियासर, सुलताना और मड्ढेला में से किसी को गोद लेकर प्रदान कर दिया जाये।

भूरसिंह, शिवनाथसिंह और गणपतसिंह की तीनों बड़ी ठकुराणियों ने गोपालसिंह को ही शतनामा १८९९ के अनुसार सौंपने की इच्छा व्यक्त की, किन्तु शिवनाथसिंह व गणपतसिंह की छोटी ठकुराणियों ने दूसरे लड़के गोद लेने चाहे। करनीसिंह मलसीसर को भूरसिंह की ठकुराणी ने तथा भूरसिंह कुमावास को शिवनाथसिंह की ठकुराणी ने गोद लेना चाहा। गोपालसिंह ने तीनों ठिकानों को सन् १८९९ के शतनामा के अनुसार अपने ठिकाने में शामिल करना चाहा। तीनों मामले वि स १९७३ ई सन् १९१६ में जयपुर हाईकोर्ट में चले। २९ जौलाई, १९१० श्रावण वदि १५ वि स १९७३ को जयपुर कोंसिल ने निर्णय दे दिया।[1] निर्णय के अनुसार भूरसिंह का हिस्सा गोपालसिंह को प्राप्त हुआ। शिवनाथसिंह के दत्तक पुत्र भूरसिंह कुमावास एवं गणपतसिंह के दत्तक पुत्र करनीसिंह मलसीसर हुये।

यह फैसला गोपालसिंह को मान्य नहीं हुआ और उन्होंने जौलाई १९१७में अपना Petition रखा, परन्तु इस Petition को २२दिसम्बर, १९१७ को जयपुर रेजिडेन्ट ने अस्वीकृत कर दिया।[2] गोपालसिंह इस निर्णय से बहुत नाराज हुए और इसे मानने से इन्कार कर दिया तथा अपना हक कायम रखने के लिए एक तरफ मामले को फिर से न्याया-

1 Memorial (Gopal Singh Chokari) Page 24
Shekhawats and Their Lands Page 106

2 Memorial (GoPal Singh Chokari) Page 32

लय में लाने हेतु एक मेमोरियल तैयार कराया गया और दूसरी और प्रतिद्विद्विया को अपने क्षेत्र पर अधिकार न करने दिया। इसपर जयपुर की सेना गोपालसिंह चौकडी पर चढ़ आई । चौकडी के पास इतना सेना न थी कि वह जयपुर की सेना का मुकाबला कर सके। अतः गोपालसिंह ने सभी जोरावरसिंह के वशजो को रण निमन्त्रण भेजा। कहा जाता है कि इस रण निमन्त्रण को पाकर जोरावरसिंह के हजारों वशधर अपने टिकाई ठिकाने की प्रतिष्ठा रखने हेतु अपना अपना खान पान लेकर जयपुर की सेना के समक्ष आ डटे। जोरावरसिंह के वशधरों की इस रण उमग को देखकर जयपुर ने लडने का विचार त्याग दिया और गोपालसिंह को अपना हक मिल गया जो कानूनो के माध्यम से पूरा हो गया।

गोपालसिंह सन् १८९९ के शतनामा के अनुसार निर्णय चाहते थे। अत उन्होने तीनो ठिकानो को अपने मे शामिल करने के लिए फिर एक मेमोरियल तैयार किया और मुकदमा चलाया गया। इस मुकदमे के निर्णय के अनुसार गोपालसिंह को तीनो ठिकाने तथा जयपुर स्टेट मे भूरसिंह कुमावास एव करनसिंह मलसीसर को भत्ता मिला।

पचपानो ने सन् १९२८ मे कुछ समय पूर्व जकात सम्बन्धी नियम बनाये थे, जिसमे गोपालसिंह भी शामिल थे, किन्तु बाद मे इन्होने उक्त नियमो का उलघन किया और इसे नामजूर कर दिया।[1]

महाराजा मानसिंह II जयपुर की वर्षगांठ भादवा सुदि १२ वि स १९९७ ई सन् १९४० मे मनाई गई।[2] उस समय गोपालसिंह

1 जी ए करील प्रेजिडेण्ट पचपाना कमेटी के दिनांक १९ ३ २८ के नियमानुसार।

2. चौकड़ी ठिकाने की बही के अनुसार

अपने कुमार ईश्वरसिंह सहित जयपुर गये थे और नजराने के रूप में एक मोहर भाडशाही भेंट की।

गोपालसिंह ने अपना शासन व्यवस्थित और शान्तिपूर्ण ढंग से चलाया। उनके जीवन की कतिपय घटनाओं से ज्ञात होता है कि वे निडर व्यक्ति थे। इनकी मृत्यु चैत्र वदि ७ वि स १९९७ मे हुई।[1]

विवाह तथा संतति–

गोपालसिंह का विवाह जावला[2] (मारवाड) के लक्ष्मणसिंह की बहिन से हुआ था। इनके एक पुत्र ईश्वरसिंह हुए तथा दो पुत्रियां हुईं। बड़ी पुत्री भंवरकंवर का विवाह बडली[3] (मारवाड) के शम्भूसिंह के साथ हुआ तथा छोटी पुत्री मगनकंवर का विवाह चैत्र वदि ३ वि स १९७९ को करनसिंह जोधपुर के साथ हुआ।[4]

८ ईश्वरसिंह (वि स १९९७ ई स १८४०)

गोपालसिंह के एक मात्र पुत्र ईश्वरसिंह का जन्म चोकडी मे आश्विन सुदि ८ वि स १९६१ मे हुआ।[5] इनका बाल्यकाल आनन्द से बीता। इनका पहला विवाह १५ वर्ष की अवस्था मे आगेवा (मारवाड) के ठाकुर की पुत्री के साथ फाल्गुन वदि ४ वि स १९७६ रविवार को हुआ।[6] प्रथम पत्नी के कोई सन्तान नहीं हुई तथा उनकी मृत्यु होने

1 चौकडी ठिकाने की छूंच की बही के अनुसार
2 डेगाने से २० मील की दूरी पर
3 जोधपुर (मारवाड) के राठौडों का एक ठिकाना है।
4 चौकड़ी ठिकाने की विवाह की बही के अनुसार
5 ईश्वरसिंह की जन्मपत्री के अनुसार
6 चौकड़ी ठिकाने की विवाह की बही के अनुसार

के कारण इनका दूसरा विवाह जोधपुर के शेरसिंह की पुत्री से कार्तिक सुदि १४ वि स १६८५ को सम्पन्न हुआ ।[1]

भादवा सुदि १२ वि स १६६७ म महाराजा मानसिंह द्वितीय की वर्ष गाठ पर ये अपने पिता गोपालसिंह के साथ गये । १६४७ मे भारत आजाद होने के बाद जागीर उन्मूलन ई स १६५४ वि स २०११ मे हुआ । ठिकानो की जमीन पर सरकार का अधिकार हो गया । ईश्वरसिंह को भी अपने ठिकाने का मुआवजा प्राप्त हो गया । ये ही 'चोवडी के वर्तमान सरदार हैं । इनके अभी तक कोई पुत्र नही है । एक पुत्री हुई जिसका विवाह नीमा के राजकुमार रघुवीरसिंह के साथ सम्पन्न हुआ ।

भूरसिंह

भूरसिंह ठा मगलसिंह चोवडी के पुत्र थे । पिता की मृत्यु के उपरान्त इन्हे चोवडी का चौथा हिस्सा प्राप्त हुआ । ६ वर्ष बाद मगलसिंह के चारो पुत्रो मे शतनामा हुआ,[2] जिस पर इन्होने अपने हस्ताक्षर खुशी के साथ कर दिये । इनके दो विवाह हुये। ये डकती करते थे । अत इन्हे बदी भी होना पडा ।[3] वि स १६६८ ई सन् १६११ मे इनकी निस्सन्तान मृत्यु हो गई । बडी ठकुराणी वि स १६५६ ई सन् १८६६ के शतनामा के अनुसार गोपालसिंह को अपना हिस्सा प्रदान करना चाहती थी, परन्तु छोटी ठकुराणी की इच्छा गोद लेने की थी । करनीसिंह मलसीसर ने इनके दत्तक पुत्र बनने की कोशिश की । अंत मे गोपालसिंह को जयपुर की ओर से अपना हिस्सा प्रदान किया गया ।

---

1 चोवडी ठिकाने की विवाह की बही के अनुसार

2 शतनामा गोपालसिंह के जीवन परिचय म देखिए

3 शेखावाटी प्रकाश अध्याय १२, पृष्ठ ३

शिवनाथसिंह

शिवनाथसिंह, मंगलसिंह चौकडी के तीसरे पुत्र थे। पिता की मृत्यु के बाद चौकडी ठिकाने का चौथा हिस्सा इन्हे मिला। मंगलसिंह की मृत्यु के छः वर्ष बाद चारो भाइयो मे (Agreement) शर्तनामा हुआ। अपनी मृत्यु के दो माह पूर्व इन्होंने एक पत्र लिखा, जो (Agre ment) शर्तनामा के विरुद्ध था। इसमे लिखा था, "मेरा हिस्सा गोपालसिंह के पास जाने पर मेरे नौकरो को तकलीफ होगी। अतः जोरावरसिंह के सात ठिकानो मे से किसी को गोद बैठा दिया जाये।" उनकी मृत्यु वि. स. १९७२ ई. सन् १९१५ मे निस्सन्तान हो गई। इनकी बडी ठकुराणी शर्तनामानुसार इनका हिस्सा गोपालसिंह का ही सौंपना चाहती थी, पर छोटी ठकुराणी गोद का पुत्र चाहती थी। भूरसिंह कुमावास को छोटी ठकुराणी ने अपना दत्तक पुत्र बनाया। मुकदमा जयपुर हाईकोर्ट मे चला। शिवनाथसिंह का हिस्सा भूरसिंह कुमावास को मिला और ये शिवनाथसिंह के दत्तक पुत्र माने गये। एक वर्ष बाद गोपालसिंह ने फिर मुकदमा दायर किया तथा शर्तनामानुसार इनके हिस्से को अपने हिस्से मे मिलाने की अपील की। फैसला गोपालसिंह के पक्ष में हुआ। भूरसिंह को दत्तक के रूप मे नही माना गया और गोपालसिंह को इनका हिस्सा प्राप्त हो गया।

गणपतसिंह

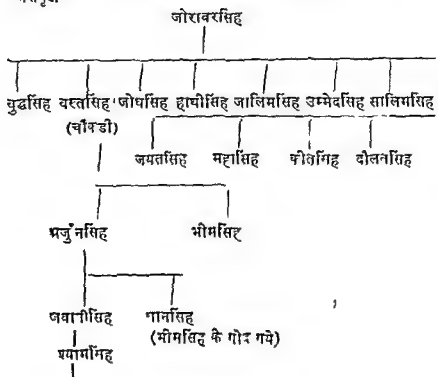
मंगलसिंह चौकडी के चौथे पुत्र गणपतसिंह थे। चारो भाइयो के शर्तनामा मे ये भी शामिल थे। इनकी मृत्यु वि. स. १९६४ ई. सन् १९०७ मे हुई। इनकी बडी ठकुराणी गोपालसिंह को ही अपना हिस्सा देना चाहती थी, किन्तु छोटी ठकुराणी की इच्छा इसके विपरीत थी। मुकदमा जयपुर हाईकोर्ट मे चला और करणीसिंह मलसीसर को

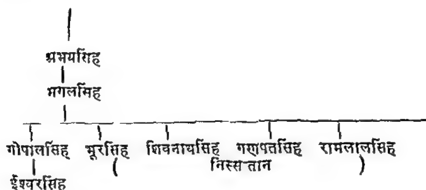
इनका दत्तक पुत्र स्वीकार किया। एक वर्ष बाद गोपालसिंह ने इनके विरुद्ध मुकदमा दायर किया और करनीसिंह को दत्तक के रूप में अस्वीकृत कर दिया गया तथा इनका हिस्सा भी गोपालसिंह को दे दिया।

रामलालसिंह

रामलालसिंह अपने पिता के सबसे छोटे और पांचवें पुत्र थे। ये भी डकैती किया करते थे। इस कारण इन्हें कैद भी जाना पड़ा। बीकानेर की जेल में ही इनकी मृत्यु होगई। इनकी ठकुराणी को भत्ता दिया और इनका हिस्सा चारों भाइयों में शामिल रहा।

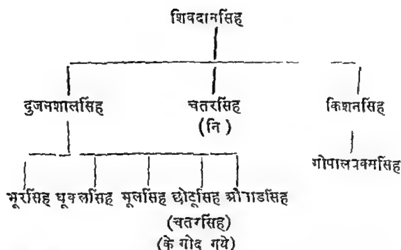
वंशवृक्ष





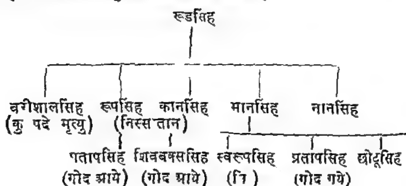
भीमसिंह (कुमावास)

यह गांव झुंझनू से दक्षिण की ओर १६ मील पर स्थित है। भीमसिंह, वख्तसिंह चौकड़ी के दो पुत्रों में छोटे पुत्र थे। इनके बड़े भाई वख्तसिंह चौकड़ी की गद्दी पर बैठे तथा इनको राज्य रूप में कुमावास डूमरा, ढंढार आदि गांव मिले। इनके कोई पुत्र नहीं था। इस कारण अर्जुनसिंह चौकड़ा के पुत्र ज्ञानसिंह गोद लिए गये। ज्ञानसिंह के विजयसिंह हुए। विजयसिंह के दो पुत्र रूड़सिंह व शिवदानसिंह हुए। दोनों भाई ढंढार में रहने लगे। बाद में शिवदानसिंह ढंढार से आकर यहीं रहने लगे। इनके तीन पुत्र दुजनशालसिंह, चतरसिंह एवं किशनसिंह हुए। दुजनशालसिंह के पांच पुत्रों में भूरसिंह भी एक थे। इनको शिवनाथसिंह चौकड़ी के गोद किया गया, परन्तु गोपालसिंह ने इनके विरुद्ध मुकदमा किया। उसमें गोपालसिंह की जीत हुई और शिवनाथसिंह का राज्य गोपालसिंह चौकड़ी को मिल गया। कुमावास की जागीर शिवदान सिंह के वंशधरों के पास वि. सं. २०११ ई. सं. १९५४ तक रही। यहां के सरदारों की कुछ वंशावली इस प्रकार है।



रूडसिंह (ढढार)

यह गाव झुन्झनू से उत्तर पूर्व मे करीब २४ मील की दूरी पर स्थित है। रूडसिंह को यह राज्य रूप मे मिला उस समय से वि स २०११ ई स १९५४ तक यह इनके वशधरो के अधिकार मे ही रहा। यहाँ के सरदारो की कुछ वशावली इस प्रकार है।



हाथीसिंह (सुलताना)

सुलताना झु झनू से पूव की ओर १६ मील की दूरी पर वसा हुआ एक छोटा सा कस्बा है। शादू लसिंह के पुत्र जोरावरसिंह ने वि स १७८६ मे सुलताना पर अधिकार किया। जोरावरसिंह की मृत्युपरात इनके पुत्र हाथीसिंह को यह जागीर के रूप मे मिला।

वि स १८०४ मे इन्होंने सुलताना मे एक छोटा सा गढ वनवाया। बीकानेर रियासत के पूनियाण के दो गाव हाथीसिंह ने दवा लिए थे तव नवलसिंह व भूपालसिंह खेतडी दोनो मे सिंघाना सीमा सम्बन्धी झगडा हुआ था।[1] बीकानेर नरेश गजसिंह ने साखू से वख्तावरसिंह को निवटारा करने के लिए भेजा। वख्तावरसिंह नवलसिंह से मिल गये। झगडे की खवर जयपुर पहुँचने पर वहा से कछवाह रघुनाथसिंह ने आकर सरदारो को दवाया और वे गाव बीकानेर के आधीन करवा दिये।[2] इन्होने माढण के युद्ध में भाग लिया था। युद्ध मे मित्रसेन अहीर के डेरो को लूट लिया था।[3] इनके चार विवाह हुए थे। प्रथम विवाह करोली के सुखसिंह यादव की पुत्री से हुआ, दूसरा विवाह शम्भूसिंह मेडतिया की पुत्री से, तीसरा सग्रामसिंह काधल की पुत्री के साथ तथा चौथा विवाह ददरेवा[4] के ठाकुर मुकुन्दसिंह पृथ्वीराजोत बीका की पुत्री से हुआ। सुलताना के पाचो सरदार यादवजी के पुत्र थे। इनके कुल ६ पुत्र हुये।

१ बुढसिंह २ शम्भूसिंह ३ रत्नसिंह ४ सुजानसिंह ५ चांदसिंह ६ इन्द्रसिंह ७ अभयसिंह ८ मानसिंह और ९ भीमसिंह

---

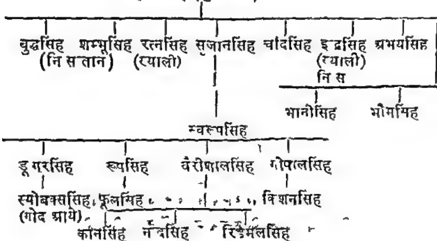
1 2 ओझाकृत बीकानेर का इतिहास भाग १ पृष्ठ ३४२

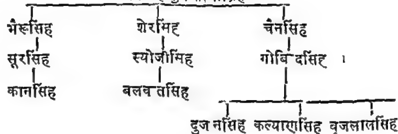
3 माढण युद्ध (हस्तलिखित) मीठूलाल

"हाथीराम जी धावा बोल दिया, लिया डेरा हीर का लूट जी" छन्द ६८

4 बीकानेर रियासत का पृथ्वीराजोत बीका राठौडो का ठिकाना

बुद्धसिंह व शम्भूसिंह के कोई सन्तान नहीं थी और ये दोनों भाई अल्पायु में ही परलोक वासी हो गये। रत्नसिंह व इन्द्रसिंह को जागीर के रूप में स्याली मिला तथा अन्य भाई सुलताना में ही रहे। सुजानसिंह व उनके पुत्र स्वरूपसिंह ने माण्डण की लड़ाई में भाग लिया। यहां के सरदारों की कुछ वंशावली इस प्रकार है।





अभयसिंह पुत्र हाथीसिंह

भगवंतसिंह हुकमसिंह दानसिंह (इण्डाली) सरदारसिंह

स्योनाथसिंह गजुनसिंह (छळ)

फूलसिंह अगरसिंह

भगवंतसिंह पुत्र अभयसिंह

हम्मीरसिंह मंगलसिंह (बचपन मे मृत्यु)

मालिमसिंह ओनाडसिंह

सरदारसिंह पुत्र अभयसिंह

डूंगरसिंह रामनाथसिंह बाजसिंह पूर्णसिंह मोहनसिंह (छळ) जैतसिंह (नि'स)

गुलाबसिंह कानसिंह वृजलालसिंह तेजसिंह रुडसिंह जवानीसिंह चिमनसिंह

भानीसिंह पुत्र हाथीसिंह

हरिसिंह मगनीसिंह भारमलसिंह श्यामसिंह देवीसिंह (आगे देखो) जीवणसिंह (उदास) जुभारसिंह (नि स)

सुल्तानसिंह गोपालसिंह (भोडकी) रामनाथसिंह (भोडकी) मोतीसिंह (भोडकी) चिमनसिंह (भोडकी) कुशलसिंह

रामबक्ससिंह फूलसिंह जीतसिंह

बनेसिंह

बनेसिह पुत्र हरिसिह

- बख्तसिह
- अगरसिह
- भीमसिह
- अनेसिह

भारमलसिह पुत्र भानीसिह

- रुगसिह
  - मालिमसिह
  - बाघसिह
- समाणसिह
  - कानसिह
  - अनेसिह

श्यामसिह पुत्र भानीसिह

- कुशलसिह
  - केशरीसिह
  - सुखसिह
  - भीमसिह
  - गाडसिह
  - बलुन्तसिह
- सलेहसिह (घोडीवारा)
- स्योजीसिह (अविवाहित)

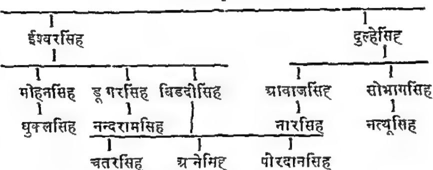
भगनीसिह पुत्र भानीसिह

- पेमसिह
  - गुलसिह
  - बखसिह
  - रिडमलसिह
  - अनेसिह
- बीजसिह
  - किशनसिह
  - ज्ञानसिह
- रुगसिह
  - नन्दरामसिह

देवीसिह पुत्र भानीसिह

- माधोसिह
  - रिद्धसिह (घोडीवारा)
  - सुखसिह
- बिलाससिह
  - गाडसिह
  - शैतानसिह
  - भूरसिह
  - अगरसिह
  - कानसिह
- पनेसिह
  - मल्लेसिह
  - फूलसिह
  - बृजलालसिह

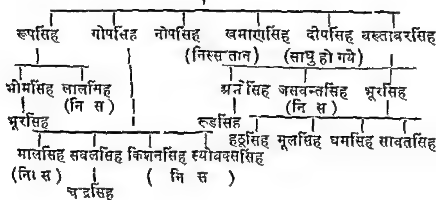
भीमसिंह पुत्र हाथीसिंह



दानसिंह (इण्डाली)

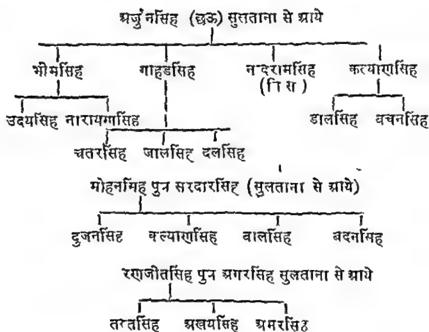
यह गाव झुंझनू से पूर्व दक्षिण की ओर आठ मील की दूरी पर बसा हुआ है। हाथीसिंह के पुत्र अभयसिंह के पुत्र दानसिंह ने यहा आकर अपना मुकाम बनाया। वि स २०११ ई सन् १९५४ तक यह दानसिंह के वंशधरो के अधिकार मे रहा। यहा के सरदारो की कुछ वंशावली इस प्रकार है।

दानसिंह (इण्डाली)



अर्जुनसिंह (छऊ)

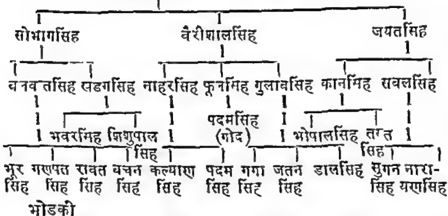
यह ग्राम झुझनू से पूव दक्षिण की ओर १८ मील की दूरी पर स्थित है। हाथीसिंह के तीसरे वशधर हुकुमसिंह के पुत्र अर्जुनसिंह वि स १६३३ मे व सरदारसिंह के पुत्र मोहनसिंह, दोनो सरदारो ने इसे अपना मुकाम बनाया। वि स २०११ ई स १६५४ तक इनके वशधरो के अधिकार में रहा। यहां के सरदारो को कुछ वशावाली इस प्रकार है।



जीवणसिंह (उदावास)

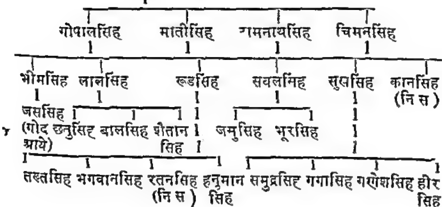
यह ग्राम झुझनू से ४ मील को दूरी पर बसा हुआ है। हाथी सिंह के पुत्र भानीसिंह के पुत्र जीवणसिंह को यह जागीर रूप मे प्राप्त

हुआ। इन्होने इसे अपना मुकाम बनाया। वि सं २०११ ई सन् १९५४ तक इस पर इनके वशधरो का अधिकार रहा। यहा के सरदारो की कुछ वशावली इस प्रकार है।



भोडकी

हाथीसिंह के पौत्र हरिसिंह के पुत्र गोपालसिंह, मोतीसिंह, रामनाथ सिंह व चिमनसिंह ने भोडकी को अपना निवास स्थान बनाया। इनके वशधरो का वशावली इस प्रकार है।



मोतीसिंह पुत्र हरिसिंह (भोडकी)

- थानसिंह
  - जतनसिंह
- गणपतसिंह
  - बालसिंह

रामनाथसिंह पुत्र हरिसिंह

- दौलतसिंह
  - मानसिंह
- गाडसिंह
  - भवरसिंह
- नगसिंह (नि स)

चिमनसिंह पुत्र हरिसिंह

- बख्तसिंह
  - नारायणसिंह
- पूनसिंह (प्रवि)

सलेसिंह (घोडीवारा खुर्द-छोटा)

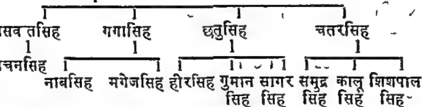
यह ग्राम झुंझनूं से १६ मील दक्षिण पश्चिम में स्थित है। हाथीसिंह के पौत्र श्यामसिंह के पुत्र सलेसिंह ने वि स १६२७ ई स १८७० में आकर अपना निवास स्थान बनाया। इनके बाद रिद्धसिंह पुत्र माधोसिंह भी यहा आकर बस गये। यह वि स २०११ ई स १६५४ तक इनके वंशजों के अधिकार में रहा। यहा के सरदारों की कुछ वंशावली इस प्रकार है।

घोडीवारा (छोटा)

सलेसिंह पुत्र श्यामसिंह (सुल्ताना से आये)

- रामसिंह
  - भूरसिंह
  - लालसिंह
  - पदमसिंह
- कानसिंह
- किशनसिंह
  - चन्द्रसिंह
  - नादसिंह
  - जससिंह
- लक्ष्मणसिंह
  - घनसिंह
  - भोपालसिंह
  - अमरसिंह

राजूसिंह भूरसिंह रावतसिंह गणपतसिंह



स्य ली

यह गाव झुझनू से ३४ मी की दूरी पर वसा हुआ है। हाथीसिह के दो पुत्र रतनसिह एव इन्द्रसिह एक ही माता मेडतणी जी से थे। इनको माता के देहान्त के बाद विमाता राज्य के लालच मे इन्हे समाप्त करा देना चाहती थीं। इस कारण ये दोनो भाई सुलताना से झुझनू आ गये। दत कथानुसार झुझनू मे किसी धाभाई के पास सुलताना से रतनसिह एव इन्द्रसिह को मारने सम्बन्धी पत्र आया, परन्तु वह पत्र किसी तरह इन दोनो भाइयो के हाथ लग गया। इस कारण वे झुझनू छोड कर स्याली आ गये। स्याली बीकानेर रियासत की सीमा पर था। इस कारण यहा की प्रजा बीकानेर रियासत के कुछ उपद्रवी तत्वो से परेशान थी। दोनो भाइयों का यहा की जनता ने बडा मान किया एव पूर्ण सहयोग दिया। दोनों भाई यही रहने लगे। इन्होंने यहा प्रजा के सहयोग से एक अच्छे गढ का निर्माण करवाया तथा उसमे गोविन्द जी का सुन्दर मन्दिर बनवाया। करीब वि स १८९१ ई स १७३४ में बीकानेर नरेश की शिकायत पर इस गढ को अंग्रेजी सरकार के आदेश से फारिस्टर ने तुडवा दिया था। गोविन्ददेवजी का मन्दिर अब भी स्थित है।

याडेट गाव स्याली से २ मील दक्षिण पूव मे स्थित है। यह गाव नवलगढ ठिकाने के अधीन था। यहा भैरूजी के शेखावत निवास करते

थे। यहा के निवासी किसी बात पर भैरूजी का की शिकायत लेकर रतनसिंह के पास पहुँचे,क्योंकि नवलगढ दूर था। इस कारण वे छुट पुट शिकायतें यही कर दिया करते थे। रतनसिंह मामले की जाच हेतु घोडे पर चढ़कर वाडेट पहुचे। उसी समय भैरूजी रा के कोई अतिथि आया हुआ था। रतनसिंह जब यहा पहुचे, अतिथि ने बन्दूक से उन्हे समाप्त कर दिया।

इन्द्रसिंह ने अपने राज्य का काफी भाग चारणों, ब्राह्मणों, स्वामियो आदि लोगों को प्रदान कर दिया था।[1] इन्होंने छऊ के पास एक कुँआ बनवाया तथा वहाँ भाभडियां जाटो को बसाकर 'इन्द्रपुरा' गांव आबाद किया। उनके द्वारा बनवाया कुँआ 'दरबार वाला कुँआ' के नाम से पुकारा जाता था। 'इन्द्रपुरा' अब 'भाभडिया की ढाणी' के नाम से पुकारा जाता है। उनकी मृत्यु निस्सतान ही हुई। इनकी ठकुराणी साहिबा ने इनकी यादगार मे एक भव्य छतरी का निर्माण करवाया जो स्याली से दक्षिण दिशा में खडी आज भी उनकी याद दिला रही है।

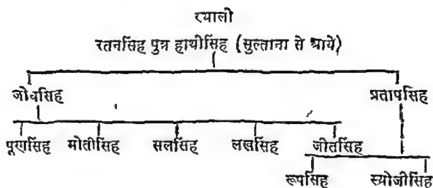
रतनसिंह के पौत्रों के समय लोसणा के बनीरोतो से स्याली व लोसणा के सीमा सम्बन्धी झगडा हुआ। इस झगडे में मोतीसिंह मेघराजोत जो लोसणा की ओर से था मोतीसिंह स्याली के पुत्र थे, ने मोतीसिंह मेघराजोत पर वार,किया जिससे मोतीसिंह मेघराजोत मारे

---

1 दंत कथा है। कि इन्द्रसिंह जी ने एक ब्राह्मण की घोडी छीन ली थी। फलस्वरूप उस ब्राह्मण के दो पुत्र क्रोध मे आकर अग्नि मे जल गये। कुछ समय बाद उनके दो पुत्र पैदा हुए। वे दोनो पुत्र कुछ वर्षों बाद मर गये। इन्द्रसिंह ने यह समझकर कि ये दोनो पुत्र वे ही दो ब्राह्मण थे जो अग्नि में जल कर मर थे इस कारण उनका ससार से मोह हट गया।

गये। इसी झगडे मे रयाली के रतनसिंह के पौत्र सुलेसिंह भी मारे गये। इसके बाद लोसणा वालो ने पर्नेसिंह गागियासर व धीरसिंह डावडी को पंच बनाया और सीमा सम्बन्धी झगड़े का निर्णय हुआ।

वि स २०११ ई स १९५४ तक रयाली, रतनसिंह के वंशधरो के अधिकार मे रहा यहा के सरदारों की कुछ वंशावली इस प्रकार है।



३ उम्मेदसिंह (गांगियासर)

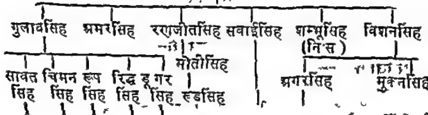
झुंझनू से २४ मील की दूरी पर उत्तर पश्चिम में बसा एक प्राचीन कस्बा है। यहा कई प्राचीन छतरिया और एक प्राचीन मठ है। शार्दूलसिंह ने जब झुंझनू विजय किया, उस समय इस इलाके को भी अपने अधिकार मे किया था। वि स १८१२ ई सन् १७५५ मे शार्दूलसिंह के पौत्र उम्मेदसिंह ने गांगियासर को अपनी राजधानी बनाया।

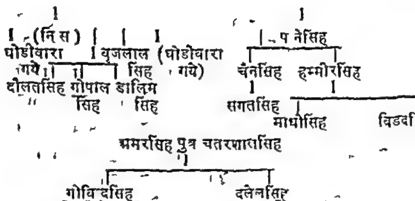
उम्मेदसिंह जोरावरसिंह के पुत्र थे। वि स १८१२ ई सन् १७५५ मे इन्होने गांगियासर मे एक गढ बनवाया इनके दो पत्निया थी पहली जगतसिंह यादव की बेटी यादव जी तथा दूसरी मेडतणीजी जो शम्भूसिंह मेडतिया की पुत्री थी। इनके एक पुत्र चतरशालसिंह थे। चतरशालसिंह[1] एक बार सोनासर की जमीन जो गांगियासर के अधिकार मे थी, श्यामसिंह बिसाऊ के व्यक्तियो ने उस जमीन मे से कीकर काटली। इसका गांगियासर की जमीन जातने वाले सोनासर के जाटो ने विरोध किया। श्यामसिंह के व्यक्ति उन्हे पकडकर बिसाऊ ले गये। जब चतरशालसिंह को यह बात ज्ञात हुई तो इन्होने अपने आदमियो द्वारा बिसाऊ के दो प्रसिद्ध सेठो को पकडवाकर मंगवाया और उन्हे गांगियासर के गढ मे कैद कर दिया। श्यामसिंह इसे न सह सके और गांगियासर पर हमला कर दिया। चतरशालसिंह के पास श्यामसिंह का मुकाबला करने की ताकत नही थी, फिर भी आई विपत्ति

1 कहा जाता है कि उम्मेदसिंह की मृत्यु के समय चतरशालसिंह छोटे थे और हाथीसिंह जो उम्मेदसिंह के सगे भाई थे, के नौ पुत्र थे। अत हाथीसिंह की ठकुराणी ने चतरशालसिंह को मरवा कर उनका हिस्सा प्राप्त करने की सोची, किन्तु एक विश्वास पात्र स्वामी भक्त धाय ने चतरशालसिंह को बहुत जतन से खेतड़ी पहुचा दिया और बाद मे इनको राज्य के रूप मे गांगियासर प्राप्त हुआ।

का सामना करने का निश्चय किया, अलसोसर के कुशलसिंह इस समाचार को सुनकर श्यामसिंह को समझाने के लिये गागियासर आये, किंतु श्यामसिंह ने कहा, "चढाई करने के बाद वापस मुडना मेरा धर्म नहीं है।" श्यामसिंह के न मानने पर कुशलसिंह ने गागियासर का साथ दिया। श्यामसिंह की फौज के बहुत से आदमी भी गागियासर के पक्ष मे आ गये, क्योंकि सभी छोटे सरदार जो श्यामसिंह की फौज मे थे, गागियासर के अधिक नजदीक थे। इस कारण उनमे अपनत्व की भावना आ गई। यह सब देखकर श्यामसिंह ने सुलह करना ही अच्छा समझा और दोनो मे राजीनामा हो गया, परन्तु फौज बिना लडे बिसाऊ नही लौटी। बिसाऊ और गागियासर दोनो फौजो ने साखू के भीमसिंह पर हमला किया और उसे पराजित किया।

चतरशालसिंह का विवाह राजगढ के निकट स्थित जीतपुरा के ठाकुर अर्जुनसिंहोत बीका दीपसिंह की लडकी से हुआ। इनके छः पुत्र थे- गुलाबसिंह, अमरसिंह रणजीतसिंह, सवाईसिंह, शम्भूसिंह और किशनसिंह। गुलाबसिंह के पुत्र सावतसिंह और डूगरसिंह घोडीवारा (बडा) जाकर बस गये और चतरशालसिंह के सातवें वंशधर उर्जनसिंह व मूलसिंह ओजटू जाकर बस गये। यहां की वंशावली इस प्रकार है।

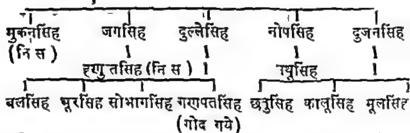




घोड़ीवारा (वडा)

यह भुभनू से १४ मील पश्चिम दक्षिण मे वसा हुआ है। चतरशालसिह के पौत्र सावतसिह व डूगरसिह ने इस ग्राम को अनुमानत विक्रम की बीसवी सदी के प्रथम चरण मे अपना मुकाम बनाया। यहा की कुछ वशावली इस प्रकार है।

घोडीवारा वडा



ओजटू

भुभनू से पूर्व मे लुहारू से जयपुर जाने वाली रोड पर १५ मील की दूरी पर बसा हुआ है। चतरसिह के सातवें वशधर मूलसिह व वचनसिह ने आकर इस ग्राम को अपना मुकाम बनाया वि स २०११ ई स १९५४ तक यहा की जागीर इन्ही के अधिकार मे रही।

४ सालिमसिंह (टाई)

(वि स १८०२-१८४० ई स १७४५-१७८३)

टाई झुंझनू से उत्तर पश्चिम मे २५ मील की दूरी पर स्थित है। यह गांव सालिमसिंह को राज्य रूप मे प्राप्त हुआ।[1] इनका जन्म अनुमानत विक्रम सवत् १७८१-८२ मे जोरावरसिंह की बीकी ठकुराणी के गर्भ से हुआ।[2] इन्होने माह वदि ६, वि स १८०६ ई स १७५२ मे यहा एक

1 कहा जाता है कि सालिमसिंह को पहले टाई के स्थान पर छऊ गाव मिला था, पर वे महत्वाकांक्षी पुरुष थे। अपने राज्य को और बढाना चाहते थे। छऊ के चारो ओर उनके ही भाइयो की जागीरें थी। इसलिए उन्होंने छऊ छोड़कर सीकर सीमा पर स्थित टाई को केन्द्र बनाया, जिससे वे अपनी सीमा को और बढा सके। सीकर की सीमा का पिपास गाव इन्होंने अपने राज्य म मिला लिया जिसके नीचे छ हजार बीघा जमीन थी। यह देखकर सीकर राव ने टाई सीमा पर स्थित गाव ठिमोली लाडखानियों को, गरडुवो, ढाकास सेवसर, खिजडोलियो का तथा गुदड़वास बरास, नीमा की ढाणी, खरींटो की ढाणी चारणो को दे दिये जिससे सालिमसिंह आगे न बढ सकें।

2 जोरावरसिंह के चार ठकुराणियां थीं—मेडतणी जी, बीकी जी, जोधी जी व निरबाण जी। सालिमसिंह की दो शादिया थीं—एक मेडतियों के व एक जोधो के। वख्तसिंह चौकडी के दो ठकुराणिया थीं—मेड़तणी जी व निरबाण जी। वख्तसिंह व सालिमसिंह की एक ही माता थी और वह माता बीकी जी थी, क्योकि बीकी जी के अलावा यदि जोरावरसिंह की अन्य ठकुराणियों यथा मेडतणी जी, जोधी जी तथा निरबाण जी मे से किसी के गर्भ से सालिमसिंह का जन्म होता तो इनका विवाह मेडतियों व जोधो के नहीं हो सकता था। अत यह निश्चित है कि वख्तसिंह व सालिमसिंह का जन्म जोरावरसिंह की बीकावत राणी से ही हुआ था। इसी तरह जोरावरसिंह के अन्य पुत्रो का वैवाहिक सम्बन्ध देखने पर मालूम होता है कि बुद्धसिंह व कीत सिंह जोरावरसिंह की मेडतणी ठकुराणी के पुत्र, हाथीसिंह, उम्मेदसिंह जोधी ठकुराणी के पुत्र एव जयतसिंह, मदासिंह व दौलतसिंह निरबाण ठकुराणी के पुत्र थे।

थे। एक बार उनके आदमियों ने बिना घोड़ों को दाना दिये ही इनको खाना खिला दिया। जब वे खाना खा रहे थे तो घोड़े हिनहिना उठे। वे अपने आदमियों से बड़े नाराज हुए और कहा "बिना घोड़ों को दाना दिये मुझे खाना क्यों खिलाया ?" उनके आदमी निरुत्तर हो गये। इनकी मृत्यु वि स १८४० ई स १७८३ मे हो गई।

विवाह तथा संतति–

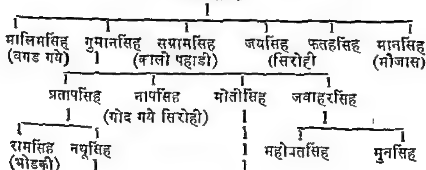
इनके दो ठकुराणियां थी––

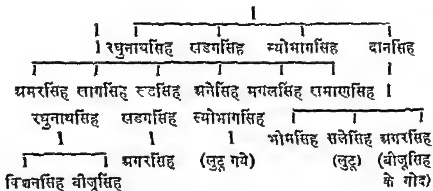
१ बख्त कंवर (मेड़तणीजी) पांचवा के ठाकुर भवानीसिंह की पुत्री
२ चन्दन कंवर (जोधीजी) नीमी के ठाकुर धीरसिंह की पुत्री

इनके आठ पुत्र थे जिनमे सरदारसिंह व उदयसिंह की मृत्यु बचपन मे ही हो गई थी। अन्य छ पुत्र सालिमसिंह, गुमानसिंह, सग्रामसिंह, जयसिंह, फतेहसिंह और मानसिंह थे। सग्रामसिंह व मानसिंह जोधीजी ठकुराणी के पुत्र थे एवं शेष मेड़तणीजी के पुत्र थे।

सालिमसिंह के देहावसान के बाद उनका ठिकाना उनके छ पुत्रों मे बट गया। बड़े पुत्र सालिमसिंह बगड चले गये और उनसे छोटे पुत्र गुमानसिंह टाई मे ही रहने लगे। गुमानसिंह अपने समय के जाने माने सरदार थे। वि स १८७१ मे चूरू के ठाकुर शिवसिंह पर बीकानेर के महाराजा सूरतसिंह ने हमला किया। चूरू और बीकानेर के बीच सुलह करवाने के लिए शेखावाटी के चार ठिकानेदारों ने प्रयत्न किया था, उनमे एक ठाकुर गुमानसिंह भी थे, शेष सीकर के रावराजा लक्ष्मणसिंह, बिसाऊ के श्यामसिंह व खेतड़ी के कुंवर बख्तावरसिंह थे। वि स १८९० ९१ ई स १८३३-३४ के लगभग मेजर फारेस्टर ने टाई का गढ तोड़ने के लिए तोपें लगा दी थी। गढ का दक्षिणी भाग तोड भी दिया

गया। उस समय गुमानसिंह बीकानेर थे। उनको जब इस बात का पता चला तो इन्होंने यहा से आकर फारिस्टर को गढ़ तोडने से रोक दिया। इनके दो विवाह हुए। पहला विवाह घाघु के बनीरोत राठौडो के एव दूसरा वाघासर के बीदावत राठौडो के यहा हुआ। इनके चार पुत्र थे। १ प्रतापसिंह २ नोपसिंह ३ मोतीसिंह ४ जवाहरसिंह। इनमे नोपसिंह सिरोही के फतेहसिंह के गोद चले गये। ठाकुर दुल्हेसिंह मलसीसर के कोई सतान नही थी। उनकी मत्यु होने पर उनकी दोनो ठकुराणिया ने अपने को गभवती बताया और समय पाकर दो पुत्रो के ज म होने की घोषणा की। उदयसिंह मण्ड्रेला ने जयपुर अपील की कि दोनो पुत्र नकली है। जयपुर के सवाई रामसिंह II ने इस बात की जाच करने के लिए जोरावरसिंह के वशधरों मे पाच सरदारो को चुना जिनमे एक नोपसिंह टाई थे। गुमानसिंह के छठे वशधर उदयसिंह के पिता की मिया (मुसलमान) लोगो ने वि स १९८९ ई स १९३२ मे हत्या कर दी थी। १२ वष बाद जब उदयसिंह बडे हो गये तो वि स २००१ ई स १९४४ मे उसी फतेहखा का वध कर पिता की हत्या का बदला लिया। वि स २०११ ई स १९५४ तक गुमानसिंह के वशधरो का अधिकार रहा। यहा के सरदारो की कुछ वशावली इस प्रकार है।





रामसिह (भोडकी)

रामसिह, प्रतापसिह के बडे पुत्र थे। ये टाई से वि स १८६० मे भोडकी जाकर रहने लगे। इसी समय के लगभग फारिस्टर ने भोडकी का गढ तोडने के लिए तोपें चढाई। इससे पूव ही रामसिह तथा अन्य भाई बेटे सरकार के हुक्म से पकड लिये गये थे। भोडकी गढ मे रामसिह की ठकुराणी फारिस्टर की फौज से लोहा लेने के लिए तैयार हो गई अन्य स्त्रियो को भी मरने मारने के लिए तैयार कर दिया। फारिस्टर को जब इस बात की सूचना मिली कि गढ मे ठकुराणी मुकाबले के लिए तैयार हो गई है तो उसने स्त्रियो के साथ युद्ध करना उचित नही समझा गोरे फौज को लेकर वापिस चला गया।

रामसिह का विवाह मैणसर के बीदावत राठौडो के हुआ। उनके पाच पुत्र डूगरसिह, अगरसिह, वाघसिह, सूरसिह और अनसिह हुए। अगरसिह के पौत्र नारायणसिह के पुत्र लादूसिह तथा उनके भाई भोडकी मे बगड मे आकर बस गये। वि स २०११ ई स १९५४ तक यह ग्राम रामसिह के वशजो के अधिकार मे रहा। यहा के सरदारो की कुछ वशावली इस प्रकार है।



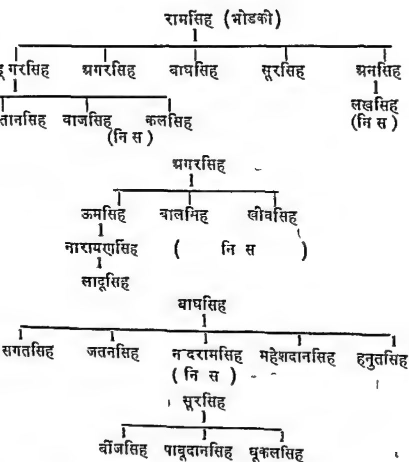
टाई गढ के महलो का पिछला दृश्य



पहाडो पर बना गढ सिरोही

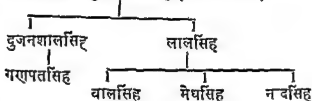


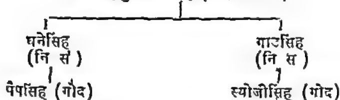
गागियासर के गढ का पिछला दृश्य



सौभागसिह पुत्र मोतीसिह (लुट्टू)

गुमानसिह के पौत्र सौभागसिह लुट्टू मे आकर बस गये। यह गाव झुझनू से १२ मील उत्तर पश्चिम मे स्थित है। वि स २०११ ई स १९५४ तक यह ग्राम इनके वशजो के अधिकार मे रहा। यहा के सरदारो की कुछ वशावली इस प्रकार है।



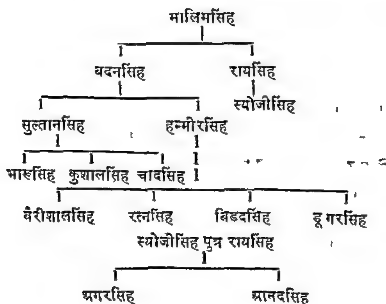


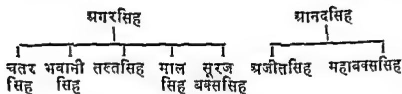
मालिमसिंह (बगड)

बगड भुभनू से ८ मील पूर्व में स्थित है। विक्रम की १६वी शताब्दी के शुरुआत तक यह नरहड के जोड चोहानो के अधिकार मे था। वि स १५११ ई स १४५४ मे पठानो ने नरहड विजय किया तब यह पठानो के अधिकार मे आ गया। नरहड के चौथे नवाब अला-उद्दीनखा नरहड छोडकर अपनी राजधानी बगड बदल ली। पठानो ने वि स १७८८ ई स १७३१ तक यहा राज्य किया। वि स १७८७ ई स १७३१ में शार्दूलसिंह भुभनू विजय किया। उस समय १७८८ मे बगड को भी अपने अधिकार मे कर लिया। १८वी शताब्दी (विक्रम) के द्वितीय चरण में शार्दूलसिंह के प्रपौत्र मालिमसिंह बगड आये और यहीं रहने लगे।

मालिमसिंह टाई ठाकुर सालिमसिंह के सबसे बडे पुत्र थे। पिता के जीवन काल मे ही ये बगड आ गये थे। इनका विवाह भदावरा (भदौरिया चोहानो का दिल्ली के पास का ठिकाना) के राजा की

पुत्री से हुआ था। इनके दो पुत्र वदनसिंह व रायसिंह थे। जब ये दोनो भाई छोटे थे तब ही इनके पिता मालिमसिंह का देहान्त वि स. १८४३ ई स १७८६ मे हो गया। लुट्टू की कुछ जमीन जो इनके हिस्से की थी, मोतीसिंह टाई के नियन्त्रण मे थी। मालिमसिंह के पौत्र भारूसिंह ने अपना हिस्सा लेना चाहा। बगड के तत्कालीन सभी सरदारो ने उनका सहयोग दिया। भारूसिंह की हरकतो को जानकर मोतीसिंह टाई, बगड पर चढ आये। रास्ते मे वे कासिमपुरा ठहरे। इधर से बगड के सरदार भी तयार हो गये। अचानक मोतीसिंह टाई की कासिमपुरा मे मृत्यु हो गई और कोई लडाई नही हुई। बगड के सरदारो को अपना हिस्सा प्राप्त हो गया। वि स २०११ ई स १९-५४ तक इस पर मालिमसिंह के वशधरों का अधिकार रहा। यहा के सरदारो की कुछ वशावली इस प्रकार है।





सग्रामसिंह (कालीपहाडी)

समुद्रतल से लगभग १३५० फीट की ऊचाई पर, रेतीले टीलो के बीच पहाडी की तलहटी मे बसा गाव कालीपहाडी झुझनू से ८ मील पूर्व मे स्थित है। विक्रम की १५ वी शताब्दी मे यह गाव नरहड के नियन्त्रण मे था तथा पठान बसते थे। पठानो से पूर्व यह गाव पहाडी के पश्चिमी दक्षिणी भाग मे बसा हुआ था। प्रमाण स्वरूप आज भी बसा सत के चिह्न यहा देखे जा सकते हैं तथा कुछ वर्षों पूर्व यहा सिक्के भी मिले थे। पहाडी की तलहटी में स्थित कुए के दक्षिणी पूर्वी भाग मे कुछ वर्ष पूर्व कब्रें भी देखी गई थी। कालूखा नामक पठान ने यह कुआ बनवाया था। जनश्रुति अनुसार यह गाव पहले कालूखा की पहाडी और बाद मे काली पहाडी कहा जाने लगा। गाव के पास स्थित पहाडी का रग भी काला है और इस कारण सम्भवत यह गाव काली पहाडी कहा जाने लगा हो।

शार्दूलसिंह ने झुझनू पर अधिकार करने के बाद नरहड पर भी अधिकार कर लिया और इसके साथ यह गाव भी उनके अधिकार मे आ गया। तब पठान विवश होकर अन्यत्र चले गये। गोगल छावडा मे आज भी इनके वशधर बसते है। जोरावरसिंह का राज्य जब उनके पुत्रो मे बटा, तब गाव सालिमसिंह के अधिकार मे आया। सालिमसिंह का राज्य जब पुन पुत्रो मे वितरित हुआ तब यह गाव उनके पुत्र सग्रामसिंह को प्राप्त हुआ। संग्रामसिंह सम्भवत टाई मे ही रहे। व

माण्डण युद्ध मे लडे थे। (सग्रामसिंघ बाही तेग। मा यु-मोठूलाल) वि स १८३५–१८४२ के बीच उनके पुत्र पदमसिंह, कर्णसिंह एव पेमसिंह काली पहाडी आये। पदमसिंह के दो विवाह हुए थे। प्रथम विवाह बीदावत वुद्धसिंह, ठिकाना खारिया (चूरू) की पुत्री सज्जन-कवर से व दूसरा देवसर के सरदारसिंह की पुत्री एव कानसिंह की पात्री कल्याणकु वर से हुआ था। इनके तीन पुत्र दीपसिंह, पन्नेसिंह व चैनसिंह हुए। दीपसिंह का विवाह सात्यू (चूरू) के ठाकुर अजीतसिंह की पुत्री केशरक वर के साथ हुआ। इनके तीन पुत्र कुशलसिंह, डालसिंह, तथा शेरसिंह हुए। कुशलसिंह का विवाह मानपुरा के पृथ्वीराजोतबीका राठौडो के हुआ। डालसिंह का विवाह भैसली के मेडतिया डूगरसिंह की पुत्री अजबक वर से हुआ तथा शेरसिंह का विवाह राजासर भार्यसिहोत बीदा राठौडो के यहा हुआ था। कुशलसिंह के पुत्र धूकलसिंह हुए। इनके पुत्र ईश्वरसिंह के पुत्र जगमालसिंह, जागीर समाप्ति के समय टिकाई सरदार थे।

पन्नेसिंह का विवाह ऊटवालिया मेघराजोत बीकाओ के यहा हुआ था। इनके तीन पुत्र भौमसिंह, आवाजसिंह व रावतसिंह हुए। भौमसिंह का विवाह मलाणा भीमराजोत बीकाओ के, आवाजसिंह का दस्तारपुरा के गौडो के तथा रावतसिंह का विवाह सेवा हुआ। पदमसिंह के तृतीय पुत्र चैनसिंह थे। इनका विवाह लालसिंह के वास किशनसिंहोत बीका राठौडो के यहाँ हुआ था। इनके दो पुत्र अगरसिंह व सर्लसिंह हुए। इन दोनो भाइयो का विवाह राजासर भार्यसिहोत बीका राठौडो के यहा हुआ। अगरसिंह नि स होने से सर्लसिंह के वडे पुत्र छोगसिंह गोद आये दूसरे पुत्र हरिवक्सिंह पिता के स्थान पर रहे। सर्लसिंह अपने समय के धाडी थे। वि म १९५४-५५ मे यहा की पहाडी मे एक शेर आ गया था। शेर की शिकार करने के लिए सर्लसिंह व अन्य सरदार गाडूसिंह

पुत्र डालसिंह (लिखक के दादा), नाहरसिंह पुत्र मंगलसिंह, जनसिंह पुत्र भौमसिंह गये। सोये हुए शेर को गाहडसिंह ने जगाया। कहा जाता है कि शेर ने तलवार चलाने से पूर्व ही इनको ढालू जमीन में ढकेल दिया, शेर तुरन्त ही दूसरे सरदारों की ओर बढ़ा। सनसिंह की बन्दूक का वार खाली गया। इतने में ही गाहडसिंह शेर के पास आ झपट। चारों भाइयों ने तलवारों से शेर पर वार करने शुरु किये और उसे काट डाला शेर मारा गया, परन्तु अपने इन प्रतिद्वन्द्वियों को सख्त घायल कर दिया। करणीसिंह के दो विवाह हुए थे पहला खेडी लम्भौर पृथ्वीराजोत बीकाओं के व दूसरा चाडसर बीदावतों के हुआ था। पहली ठकुराणी पृथ्वीराजोत जी से महतावसिंह और देवीसिंह का जन्म हुआ एवं दूसरी ठकुराणी बीदावतजी से गोपालसिंह का जन्म हुआ। महतावसिंह का विवाह राजासर (ठि महाजन) के भायसिहोत बीका के यहां हुआ था। इनके दो पुत्र मगलसिंह एवं रूडसिंह हुए। मगलसिंह का विवाह रेडा के बीदावतों के तथा रूडसिंह का सोनियासर के बीदावतों के यहां हुआ एवं रूडसिंह की मृत्यु होने पर इनके वंशधरों ने उनकी यादगार में चबूतरा बनवाया।

देवीसिंह की दो शादियां थीं—पहली शादी घण्टेल व दूसरी हरियासर हुई थी।

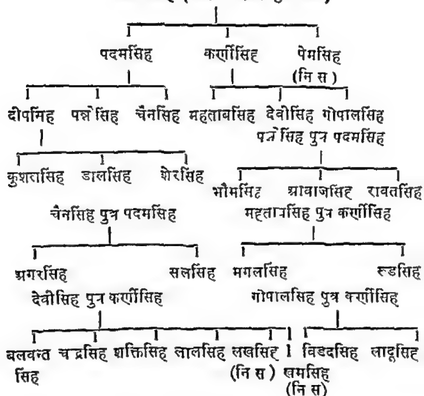
इनके बलवन्तसिंह, चन्द्रसिंह, शक्तिसिंह, लालसिंह, लखसिंह व खमसिंह हुए। चन्द्रसिंह के पुत्र जालसिंह की इच्छानुसार इनके पुत्र मेजर उदयसिंह व पूर्णसिंह ने गोपीनाथजी का सुन्दर मन्दिर बनवाया। गोपालसिंह का विवाह बुकलसर के राठौड़ों के यहां हुआ। इनके दो पुत्र बिडदीसिंह एवं शार्दूलसिंह हुए। बिडदीसिंह का विवाह हलवास जाटू तवरों के एवं शार्दूलसिंह का बुकलसर के राठौड़ों के यहां हुआ।

संग्रामसिंह के तृतीय पुत्र पेमसिंह थे। इनका विवाह खेडी के

पृथ्वीराजोत बीकाम्रो के यहाँ हुआ। इनकी ठकुराणी का नाम कुन्दन-कवर था। इनके कोई सन्तान नही थी। इनकी मृत्युपरान्त इनकी ठकुराणी ने गोपालसिंह पुत्र करनीसिंह को गोद लेने की इच्छा की, परन्तु इस पर गोपालसिंह के अन्य भाई राजी नही हुए। इस कारण इनकी जागीर इनके भाई पदमसिंह व करनीसिंह के पुत्रो मे बट गई।

वि स १९८५ मे ईश्वरसिंह पुत्र मेघसिंह ने बाघ के साथ कुश्ती की और उसे मारा तथा वि स २०११ में गाव मे बाघ आ गया। गाव के तथा आस पडोस के अनेको पशुओं को उसने मार डाला। प्रश्न खडा हो गया कि इसे कौन मारे? रूपसिंह पुत्र बख्तावरसिंह पौत्र शेरसिंह ने यह बीडा उठाया और उसे मारा। इसी प्रकार वि स २०१३ मे भी एक बाघ और आ गया। उससे भी प्रजा आतंकित थी। इस बार भी रूपसिंह ने ही बाघ को मार कर शान्ति स्थापित की। यह बाघ मरोत की पहाडी मे मारा गया। लेखक भी दर्शक के रूप में शिकारियो के साथ था।

बख्तसिंह के पुत्र श्यामसिंह बिसाऊ किसी कारणवश कालीपहाडी सरदारो के ग्राम कासिमपुरा पर अधिकार कर लिया। बिसाऊ के बिशनसिंह ने इसके बाद गाव की ५०० बाघा भूमि पर भी कब्जा करना चाहा जो मरोत गाव के पास थी। बिसाऊ की सेना लडने के लिए भी आ पहुची। इधर से कालीपहाडी के सरदार तैयार हो गये। बाद में दोनों मे २२ वर्ष तक मुकद्दमा चला। अन्त मे कालीपहाडी के सरदारो की जीत हुई। जमीन इनकी थी, इनको मिल गई। वि स २०११ ई स १९५४ तक यह गाव संग्रामसिंह के वशजो के अधिकार मे रहा। यहा के सरदारो की वशावली इस प्रकार है।



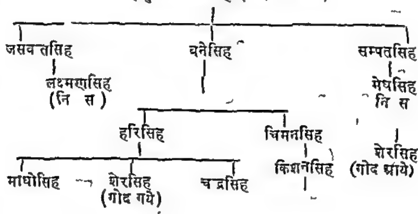
जयसिंह व फतेहसिंह (सिरोही)–

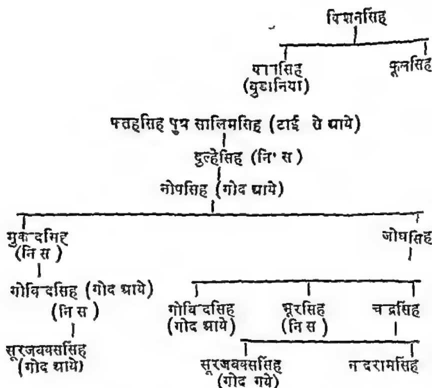
झुंझनू से दक्षिण-पूर्व की ओर ४८ मील की दूरी पर अरावली की पर्वतमालाओं के बीच स्थित है। इस पर पहले तवर राजपूतों का अधिकार था और यह तोरावाटी मे सम्मिलित था। वि स १८१८ में जोरावरसिंह के पुत्र सालिमसिंह ने तवरो से विजय किया तथा वि. स १८२४ ई स १७६७ मे पहाडी की चोटी पर एक गढ का निर्माण करवाया। सालिमसिंह की मृत्युपरान्त यह उनके पुत्र जयसिंह व फतेहसिंह के अधिकार मे आया।

वि स १८४४ ई स १७८७ मे जयपुर के राजा प्रतापसिंह व सिंधिया के बीच तुगा नामक स्थान पर युद्ध हुआ। इस युद्ध मे जयपुर के पक्ष मे लड़ते हुए जयसिंह सख्त घायल हो गये थे तथा युद्ध स्थान में ही मूर्छित हो गये थे। उस समय एक चारण ने उनको युद्ध क्षेत्रसे अलग किया तथा टाई पहुँचाया। ठीक होने पर जयसिंह ने उस चारण को ५०० बीघा भूमि इनाम में दी। फतेहसिंह

पहाड़ी पर स्थित गढ़ सिरोही

के पुत्र दुल्हेसिंह के निस्सतान होने पर गोपसिंह टाई इनके गोद आये। उस समय वि स २०११ ई स १९५४ तक यह गाव इन दोनो भाइयो के वशधरो के अधिकार मे रहा। यहा के सरदारों की कुछ वशावली इस प्रकार है।





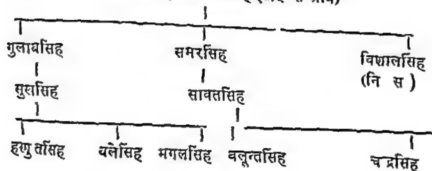
बुडानिया

यह ग्राम झुंझनू से १२मील की दूरी पर पूर्व उत्तर में स्थित है। सिरोही के जयसिंह के पांचवें वशधर फानसिंह यहा आकर बस गये। वि स २०११ ई स १९५४ तक इनके वशजो के अधिकार में रहा।

मानसिंह (मौजास)

झुंझनू से पश्चिम की ओर २५ मील की दूरी पर मौजास गांव स्थित है। वि स १७८७ ई स १७३० से पूर्व यह गांव कुहाड़

नवाब के अधीन था। इसके बाद शार्दूलसिह ने इसे अपने अधिकार में कर लिया। सालिमसिह के पुत्रो में जब जागीर वितरित हुई, यह गाव उनके पुत्र मानसिह के अधिकार में आया। मानसिह के तीन पुत्र थे – समरसिह, गुलाबसिह और विशालसिह। अनुमानत वि स १८८४–८५ मे ये तीनों भाई यहा आकर रहने लग गये। श्रावण वदि ६ वि स १८८५ में जयपुर की सेना का मण्डावा-पर हमला हुआ। विशालसिह मण्डावा फौज के साथ थे। ये लडते हुए मारे गये। समरसिह ने सीकर की १००० बीघा भूमि छोडकर पशुओ के लिए चारागाह छोडा। वि स २०११ ई स १९५४ तक इस पर मानसिह के वशधरों का अधिकार रहा। यहा के सरदारो की कुछ वशावली इस प्रकार है।



५ जयतसिंह
(वि स १८०२-१८०८ ई स १७४५-१७५१)

जयतसिंह का जन्म जोरावरसिंह की निरवाण ठकुराणी से हुआ था। इनको राज्य स्वरूप मंड्रेला प्राप्त हुआ। वि स १८०६ ई स १७४६ में बीकानेर राज्य के ग्राम तिगयाम को बारह हजार बीघा भूमि पर अधिकार कर लिया। इनके एक ठकुराणी बीकीजी थी। इनकी मृत्यु वि स १८०८ ई स १७५१ मे झुंझनू में हुई। इन पर झुंझनू मे एक छतरी बनाई गई जो झुंझनू मे स्थित शेखावत सरदारों पर बनी छतरियो मे पूर्व दक्षिण कोने पर स्थित है। जयतसिंह की मृत्यु के समय इनकी ठकुराणी की आयु केवल १३ वर्ष की थी। इनके कोई संतान नहीं थी। इस कारण इनका राज्य इनके सहोदर भ्राता महासिंह व दौलतसिंह मे बट गया।

६ महासिंह मलसीसर

१ महासिंह (वि स १८०२-१८२७ ई स १७४५-१७७०)

मलसीसर झुंझनू से उत्तर की ओर २४ मील की दूरी पर बसा हुआ छोटा सा कस्बा है। वि स १८०६ मे जोरावरसिंह के पुत्र महासिंह ने यहा एक गढ बनवाकर अपना मुकाम बनाया।



मलसीसर गढ के महल

महासिंह का जन्म जोरावरसिंह की चतुर्थ राणी निरवाण जी (जसरापुर) के गभ से अनुमानतः वि स १७८९ मे हुआ था। आरम्भ मे यह अपने भाइयो के साथ भोडकी मे रहते थे। जोरावरसिंह की मृत्यु के बाद अपने सगे भाई जयतसिंह एव दौलतसिंह के साथ मण्ड्रेला रहने लगे थे। वि स १८०८ मे जयतसिंह की निस्सतान मृत्यु हो गई। इस कारण इनके हिस्से को महासिंह और दौलतसिंह ने वि स १८१८ ई स १७६१ मे परस्पर बाट लिया।

वि स १८१९ ई स १७६२ मे इन्होने मलसीसर मे एक गढ बनवाया। खेतडी से गोठडी[1] गाव लेकर खेतडी को भारू और सहसवास दिया। इनकी मृत्यु वि स १८२७ ई स १७७० मे हुई। इनके दो पत्निया थीं—

१ बीकावतजी—जयसिंह बीका की पुत्री
२ काधलोतजी—सुखसिंह काधल की पुत्री

---

१ गोठरी झुंझनू से २८ मील उत्तर मे है।

पहली पत्नी के सात पुत्रियां थी तथा दूसरी के दो पुत्र पृथ्वीसिंह और जालिमसिंह हुए।

२ पृथ्वीसिंह (वि स १८२७-१८७६ ई स १७७०-१८२२)

पृथ्वीसिंह अपने पिता महासिंह की मृत्यु के बाद गद्दी पर बैठे। मण्ड्रेला का आधा हिस्सा महासिंह का था। अत पृथ्वीसिंह ने अपना हिस्सा मागा पर दौलतसिंह ने देने से इन्कार कर दिया। इस पर जोरावरसिंह के दूसरे पुत्र पाण्डासी मे एकत्रित हुए और पृथ्वीसिंह को चुडेला, पाण्डासी[1] आदि गाव दिलवा दिये।

इनके समय में ठिकाने की आर्थिक स्थिति अच्छी नही थी। इस कारण इन्होने अपना जीवन सादे ढग से बिताया। अपनी बुद्धि एव प्रयत्नो से ठिकाने को समृद्ध बनाने के प्रयत्नो मे लगे। इसी समय जती सुन्दरदासजी तथा गोस्वामी प्रेमगिरीजी मलसीसर मे रहने लगे। यहा एक मठ का निर्माण करवाया गया। गोस्वामीजी के आशीर्वाद से पृथ्वीसिंह के एक पुत्र देवीसिंह हुए, किन्तु वे सात वर्ष की अवस्था मे ही कालकवलित हो गये। गोस्वामीजी की सलाह से पृथ्वीसिंह ने दूसरा विवाह कर लिया। इस ठकुराणी के दो पुत्र डूगरसिंह और अमरसिंह हुए।

वि स १८५२ ई स १७९५ मे वे राजगढ (अलवर) और जयपुर के बीच हुए युद्ध मे जयपुर की ओर से बडी बहादुरी से लडे। जयपुर राज्य ने इससे प्रसन्न होकर ६०००) प्रति वर्ष ट्रिब्यूट के इनाम स्वरूप देने शुरु कर दिये।

---

1 झुंझनू से चुडेला एव पाण्डासी १४ मील उत्तर पश्चिम में है।

ये धार्मिक प्रकृति के सरदार थे और अपना सारा समय ईश्वर भजन में लगाया करते थे। वि स १८७९ ई स १८२२ मे इनका देहात हो गया

३ डूगरसिंह (वि स १८७९-१८८२ ई स १८२२-१८२५)

पिता की मृत्यु के समय डूगरसिंह छोटे ही थे। ये भी अपने पिता की भाति धार्मिक विचारो के सरदार थे, हमेशा गोस्वामीजी महाराज के पास जाया करते थे। एक बार ठाकुर कुशलसिंह अलसीसर से कुछ लडाई झगडा हो गया, इस पर चूरू के ठाकुर करणीसिंह ने मध्यस्थता कर शान्ति स्थापित की। इनका निधन वि स १८८२ ई स १८२५ मे हुआ। इनके एक पुत्र दुल्हेसिंह थे।

४ दुल्हेसिंह (वि स १८८२-१९१५ ई स १८२५-१८५८)

बचपन में ही दुल्हेसिंह के पिता की मृत्यु हो गई। मा तो इनके जन्म के बाद ही मर गई थी सौतेली मा मेडतणीजी ने इनका पालन-पोषण किया। ददरेवा (बीकानेर) का सूरजमल शेखावाटी मे लूटपाट मचाने आया और वह मलसीसर में गोस्वामीजी के मठ पर रुका। मेडतणीजी ने भोजन की व्यवस्था की और उनसे मलसीसर छोडने की अपील की। इसी समय शेखावाटी की फौज ने आकर मठ को घेर लिया, पर वह अपनी बुद्धिमता से घोडे पर चढ कर निकल गया। दुल्हेसिंह के चाचा अमरसिंह स्वय मलसीसर की गद्दी लेना चाहते थे। उन्होने बख्तावरसिंह (खिनडी) से मिल कर भूदरमल कामदार को मलसीसर से निकलवा दिया। अमरसिंह डकैती का काम करने लगे थे। मण्ड्रेला मे डकैती के सम्बन्ध में इन्हे पीटा भी गया था, किन्तु इन पर कोई असर नही हुआ। कुछ दिनो के बाद एक झगडे मे धीरसिंह

पहली पत्नी के सात पुत्रियां थी तथा दूसरी के दो पुत्र पृथ्वीसिंह और जालिमसिंह हुए।

२ पृथ्वीसिंह (वि स १८२७-१८७६ ई स १७७०-१८२२)

पृथ्वीसिंह अपने पिता महासिंह की मृत्यु के बाद गद्दी पर बैठे। मण्ड्रेला का आधा हिस्सा महासिंह का था। अत पृथ्वीसिंह ने अपना हिस्सा मांगा पर दौलतसिंह ने देने से इन्कार कर दिया। इस पर जोरावरसिंह के दूसरे पुत्र पाण्डासी मे एकत्रित हुए और पृथ्वीसिंह को चुडेला, पाण्डासी[1] आदि गांव दिलवा दिये।

इनके समय में ठिकाने की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी। इस कारण इन्होंने अपना जीवन सादे ढंग से बिताया। अपनी बुद्धि एवं प्रयत्नों से ठिकाने को समृद्ध बनाने के प्रयत्नों मे लगे। इसी समय जती सुन्दरदासजी तथा गोस्वामी प्रेमगिरीजी मलसीसर मे रहने लगे। यहां एक मठ का निर्माण करवाया गया। गोस्वामीजी के आशीर्वाद से पृथ्वीसिंह के एक पुत्र देवीसिंह हुए, किन्तु वे सात वर्ष की अवस्था मे ही कालकवलित हो गये। गोस्वामीजी की सलाह से पृथ्वीसिंह ने दूसरा विवाह कर लिया। इस ठकुराणी के दो पुत्र डूंगरसिंह और अमरसिंह हुए।

वि स १८५२ ई स १७९५ मे ये राजगढ (अलवर) और जयपुर के बीच हुए युद्ध मे जयपुर की ओर से बड़ी बहादुरी से लडे। जयपुर राज्य ने इससे प्रसन्न होकर ६०००) प्रति वर्ष ट्रिब्यूट के इनाम स्वरूप देने शुरु कर दिये।

---

1 झुंझनू से चुडेला एव पाण्डासी १४ मील उत्तर पश्चिम में हैं।

ये धार्मिक प्रकृति के सरदार थे और अपना सारा समय ईश्वर भजन में लगाया करते थे। वि स १८७६ ई स १८२२ मे इनका देहात हो गया

३ डूगरसिंह (वि म १८७६-१८८२ ई स १८२२-१८२५)

पिता की मृत्यु के समय डूगरसिंह छोटे ही थे। ये भी अपने पिता की भाति धार्मिक विचारो के सरदार थे, हमेशा गोस्वामीजी महाराज के पास जाया करते थे। एक बार ठाकुर कुशलसिंह मलसीसर से कुछ लडाई झगडा हो गया, इस पर चूरू के ठाकुर करणीसिंह ने मध्यस्थता कर शाति स्थापित की। इनका निधन वि स १८८२ ई स १८२५ मे हुआ। इनके एक पुत्र दुल्हेसिह थे।

४ दुल्हेसिह (वि स १८८२-१६१५ ई स १८२५-१८५८)

बचपन में ही दुल्हेसिह के पिता की मृत्यु हो गई। मा तो इनके जन्म के बाद ही मर गई थी सौतेली मा मेडतणीजी ने इनका पालन-पोषण किया। ददरेवा (बीकानेर) का सूरजमल शेखावाटी मे लूटपाट मचाने आया और वह मलसीसर में गोस्वामीजी के मठ पर रुका। मेडतणीजी ने भोजन की व्यवस्था की और उनसे मलसीसर छोडने की अपील की। इसी समय शेखावाटी की फौज ने आकर मठ को घेर लिया, पर वह अपनी बुद्धिमता से घोडे पर चढ कर निकल गया। दुल्हेसिह के चाचा अमरसिंह स्वय मलसीसर की गद्दी लेना चाहते थे। उन्होने बख्तावरसिंह (खेतडी) से मिल कर भूदरमल कामदार को मलसीसर से निकलवा दिया। अमरसिंह डकैतो का काम करने लगे थे। मण्ड्रेला मे डकती के सम्बन्ध मे इन्हे पीटा भी गया था, किन्तु इन पर कोई असर नही हुआ। कुछ दिनों के बाद एक झगडे में धीरसिंह जाखल को इन्होंने मार डाला।

अमरसिंह के इन कार्यों से ठिकाने को हानि पहुंचने की आशंका और दुल्हेसिंह की सुरक्षा की चिंता हो गई। अत: मेडतणीजी ने मण्ड्रेला के सरदारो को ठिकाने की बिगडती हुई स्थिति और दुल्हेसिंह की सुरक्षा की बात कही।[1] मण्ड्रेला के सरदारो ने अमरसिंह को समझाया परन्तु वे नही माने। एक बार अमरसिंह मण्ड्रेला की गायें घेर कर ले गये। पन्नेसिंह लडने को तैयार हुए, पर पिता के कहने पर शांत हो गये,[2] परन्तु मेडतणीजी द्वारा शिकायत करने पर इनमे वाद विवाद हुआ और भाद्रपद सुदि १२ वि स १८८८[3] ई स १८३१ मे भगवतसिंह और पन्नेसिंह के हाथो अमरसिंह मारे गये। अमरसिंह के मारे जाने तथा दुल्हेसिंह को मारने के इरादे की खबर मिलने पर मण्डावा से माधोसिंह तथा डूण्डलोद से शिवसिंह मलसीसर आदि ने आकर मण्ड्रेले वालो को वहा से निकाल कर, मलसीसर का प्रबन्ध किया।

रावत हरनाथसिंह डूण्डलोद Shekhawats and their Lands' मे लिखते हैं कि अमरसिंह को मारने के बाद दुल्हेसिंह को मारने के लिए जनाना मे घुस गये, किन्तु शार्दूलसिंह मेडतिया जो उस समय उनके पास थे दुल्हेसिंह के जीवन को बचाया। इस समाचार को सुन कर शहर के लोग इकट्ठे हो गये। मेदा नायक जो मण्ड्रेला वालो के साथ था, ने अपनी बन्दूक से भैरुसिंह, नवल महाजन, सवाईराम और रणजीतमल को घायल किया तथा सवाईराम का तो जीवन ही चला गया। मेदा नायक को पकड लिया गया और खत्म कर दिया गया।

1 शेखावाटी प्रकाश, अध्याय—११, पृष्ठ १७
2 शेखावाटी प्रकाश, अध्याय ११, पृष्ठ १७
3 Shekhawats and their Lands Page-110

वि स १८६१ ई स १८३४ मे कनल लाकेट ने मलसीसर के गढ को तुडवाना चाहा, लेकिन सीहराम ने अपनी चतुराई से इमारतो व गढ के दरवाजो को बचा लिया।

वि स १८६६ ई स १८४२ मे महाराजा रत्नसिंह अपनी राणी शेखावतजी व महाराज कुमार सरदारसिंह के साथ दुल्हेसिंह के निमन्त्रण पर मलसीसर आये थे।

दुल्हेसिंह वि स १६०२ ई स १८४५ मे पुष्कर गये तथा तीन हजार बीघा गोचर भूमि छोडी। वि स १६०६ ई स १८४६ में प्रथम बार व वि स १६११ ई स १८५४ मे दूसरी बार हरिद्वार गये और वि स १६०७ ई स १८५० में सीकर की गद्दी के झगडे को सुलझाने के लिए सीकर गये।

वि स १६१४ ई स १८५७[1] मे इन्होने जयपुर की अच्छी सेवा की। रेवाडी का अहीर तुलाराम इनका अच्छा मित्र था। एक बार किसी की शिकायत पर कि मलसीसर के गढ में डाकू छिप जाते हैं भारत सरकार ने सौ आदमी गढ का तलाशी के लिए भेजे, पर वह शिकायत असत्य साबित हुई, वहा कुछ नहीं था।

मण्ड्रेला के रूपसिंह से इनके अच्छे सम्बन्ध थे। इनके कोई पुत्र नहीं था। अत जेठ सुदि ३ वि स १६१० को इन्होंने रूपसिंह को उनके पुत्र उदयसिंह का दत्तक पुत्र बनाने की लिखावट दे दी। रूपसिंह के छोटे भाई रत्नसिंह को मृत्यु पर उनकी ठकुराणी सती हो गई और रूपसिंह का पाना खालसा कर लिया। रूपसिंह जयपुर गये और वही खत्म हो गये। जेठ सुदि ३ वि स १६१५ ई स १८५८ को इनका

1 Shekhawats and their Lands Page 112

देहान्त हो गया। इनकी मृत्यु होने के बाद मण्ड्रेला के उदयसिंह इनके दत्तक बन कर राज्य के अधिकारी हुए।

५ उदयसिंह (वि स १९१५-१९३५ ई स १८५८-१८७८)

रूपसिंह मण्ड्रेला की बीकावत ठकुराणी के गर्भ से वि स १८९८ ई स १८४१[1] मे उदयसिंह का जन्म हुआ। दुल्हेसिंह की मृत्यु के पूर्व ही उदयसिंह को गोद लेने की वार्ता चली, परन्तु जब दुल्हेसिंह मर गये तो उनकी दोनो ठकुराणियो ने अपने आप को गर्भवती घोषित किया। उदयसिंह मण्ड्रेला आ गये। दोनो ठकुराणियो के दो पुत्र होने के बाद और यह जान कर कि ये पुत्र असली नहीं हैं उदयसिंह ने जयपुर कोर्ट में अपील कर दी। मण्ड्रेला के दूसरे ठाकुर पन्नेसिंह ने मलसीसर की गद्दी पर अपना अधिकार बताया, परन्तु उनके अधिकार को ४ अगस्त, १८६३ को खारिज कर दिया।

वि स १९३१ ई स १८७४ मे मलसीसर एव रावतसर-बो जाला (बीकानेर), दोनो मे सीमा सम्बन्धी विवाद हो गया, परन्तु अन्त मे इसका निर्णय मलसीसर के पक्ष में हुआ।

वि स १९३१ ई स १८७४ मे उदयसिंह मातमपुरसी रस्म पर जयपुर गये और वहां बीमार हो गये, धीरे धीरे इनका स्वास्थ्य बिगड़ता गया और फाल्गुन सुदि १५ वि स १९३५ ई स १८७८ मे इनकी मृत्यु हो गई। इनके दो पुत्र भूरसिंह व चतरसिंह हुए और एक पुत्री हुई, जिसका नाम फतहकंवर था। वि स १९३५ ई स १८७९ में इनकी बीकावत ठकुराणी का देहान्त हो गया।

---

1 Shekhawats and their Lands Page 113

६ भूरसिंह (वि स १९३५-१९८९ ई स १८७८-१९३२)

भूरसिंह का जन्म वि स १९१९ ई स १८६२ में उदयसिंह की ठकुराणी बीकावत जी के गर्भ से मलसीसर में हुआ। इन्होंने गुरु इनायची गिरी से संस्कृत की अच्छी शिक्षा प्राप्त की थी। इन्होंने अपने ठिकाने का अच्छा प्रबन्ध किया। ठिने में नये मकान बनवाये एवं जयपुर में मलसीसर हाऊस का निर्माण कराया। स्वामी विशुद्धानन्द कालीकमली वाला बाबा मलसीसर आये वे इनसे बडे प्रभावित हुए। इन्होंने उस समय मलसीसर में एक स्कूल का निर्माण कराया, जो वर्तमान में उच्च विद्यालय है।

वि स १९५२, १६ मार्च, १८९५[1] में वे जयपुर स्टेट कौंसिल के मेम्बर बनाये गये। लार्ड रावट इनके अच्छे दोस्त थे। इन्होने जयपुर स्टेट कौंसिल में १४ वर्ष सेवा की वि स १९६६ ई स १९०९ को ५ फरवरी को ये सेवा मुक्त हुए उस समय कर्नल सी हर्बट ने इनकी काफी प्रशंसा की, जब ये जयपुर रहते थे, ठिकाने का प्रबन्ध इनके छोटे भाई चतरसिंह करते थे।

भूरसिंह अपने समय के राजस्थान इतिहास के जाने माने विद्वान थे। इन्होंने राजस्थान इतिहास का मुलझे हुए इतिहासकार की दृष्टि से अध्ययन किया, इन्हे इस क्षेत्र की अच्छी जानकारी थी। इन्होंने शेखावाटी इतिहास के तथ्यों का अच्छा संग्रह किया था। इसी संग्रह के आधार पर हरनाथसिंह (उनके छोटे भाई के पुत्र) ने 'Shekhawats and their Lands, नामक पुस्तक प्रकाशित करवाई है, जो

1 Shekhawats and their Lands Page 115
2 *Shekhawats and their Lands Page 116*

शेखावाटी इतिहास की जानकारी के लिए उपयोगी है। भूरसिंह द्वारा लिखित पुस्तकें 'महाराणा यश प्रकाश' 'विविध संग्रह' 'श्लोक संग्रह' आदि हैं, जो इतिहास के दृष्टिकोण से बहुत ही उपयोगी हैं।

इन्होंने वि स १६४८-४६ में अपनी बहिन फतहकंवर की शादी देवलिया (अजमेर मेरवाडा) के ठाकुर मोदसिंह के साथ की। इनका विवाह बाघोद (मारवाड के ठाकुर) श्यामसिंह मेडतिया की पुत्री के साथ हुआ। इनकी मृत्यु वि स १९८९, पौष सुदि १४ ई स १९३२ शनिवार को हुई।[1] इनके तीन पुत्र थे—१ शिवनाथसिंह, २ बाघसिंह, ३ तख्तसिंह। इनकी मृत्यु से कोटा के प्रसिद्ध बारहठ केशरीसिंह को बहुत दुख हुआ और उन्होंने इनकी मृत्यु पर लिखा—

काव्य इतिहास धर्म धैर्य का खजाना वह
नीति दक्ष पक्ष असहायम को खूटिगो।
भूर के सिधाते यह प्रगट प्रभायो जाल
राजपूत जाति पे विधाता सत्य रुठिगो॥[2]

७ शिवनाथसिंह

शिवनाथसिंह भूरसिंह के प्रथम पुत्र थे। इनका जन्म मलसीसर में वि स १९३९ ई स १८८२ को हुआ। इन्होंने महाराजा कॉलेज से शिक्षा प्राप्त की। इनका विवाह जसाना (बीकानेर) मे वि स १९५७ ई स १९०० में हुआ। वि स १९६० ई स १९०३ में इनकी ठकुराणी ने एक लडकी को जन्म दिया, परन्तु उसी समय इनकी पत्नी व लडकी दोनों की मृत्यु हो गई। वि स १९६३ ई स १९०६ मे

1 Shekhawats and their Lands Page 116
2 , ,

इनका द्वितीय विवाह राजा जीवराजसिंह की द्वितीय पुत्री के साथ बीकानेर में हुआ। शिवनाथसिंह की मृत्यु २१ नवम्बर, १९४७ को जयपुर में हो गई। इनके कोई पुत्र नही हुआ। इनके भाई बाघसिंह मण्ड्रेला के ठाकुर जवाहरसिंह के वि स १९६५ ई स १९०९ में गोद चले गये और छोटे भाई तख्तसिंह इनके उत्तराधिकारी हुये।

८ तख्तसिंह (१९८९-२०११ ई १९३२-१९५४)

भूरसिंह के सबसे छोटे पुत्र तख्तसिंह का जन्म वि स १९४६ ई स १८८९ में हुआ इन्होंने मेयो कॉलेज अजमेर में शिक्षा प्राप्त की Chief's College in India की डिप्लोमा परीक्षा में प्रथम स्थान प्राप्त किया। ये हिन्दी, अंग्रेजी और संस्कृत के विद्वान थे। वि स २०१० ई स १९५३ में ये शिवनाथसिंह के उत्तराधिकारी हुये। वि स १९६३ में ददरेवा ठाकुर की लडकी से इनका विवाह हुआ। इनकी ठकुराणी का वि स १९६८ ई स १९०९ में देवलोक हो गया। इनके कोई सन्तान नही है। ई स १९५४ में जागीरदारी उन्मूलन के अनुसार ठिकाने की जागीरदारी खत्म हो गई और उसके बदले मुवावजा प्राप्त हुआ। तख्तसिंह का देहान्त जयपुर में हुआ। इनके कोई पुत्र नही था।

चतरसिंह

भूरसिंह के छोटे भाई चतरसिंह का जन्म कार्तिक वदि ३ वि स १९२१ ई स १८६४ में मलसीसर में हुआ। इन्होंने हिन्दी और संस्कृत की शिक्षा गोसाई इलायची गिरी से प्राप्त की, इन्हे वैदिक, आध्यात्मिक और धार्मिक ग्रन्थ पढने का बडा शौक था।

शेखावतो के इतिहास मे उनकी अमूल्य देन थी, ठिकानो को टुकडे टुकडे होने से बचाया। इन्होने स्वेच्छा से अपने अग्रज भूरसिंह को ही सम्पूर्ण ठिकाने का ठाकुर मजूर किया। अपने लिए कवल एक 'गोवरी' गाव रखा, वास्तव मे शेखावतो के इतिहास मे इनके त्याग का आदर्श उदाहरण है। इस त्याग के लिये इनको ईडर के महाराजा प्रतापसिंह और खेतडी के राजा अजीतसिंह ने बधाई दी। इनका विवाह गम्भीर सिंह उदावत लाम्या (मारवाड) की पुत्री से वि स १९४७ ४८ मे हुआ।

पन्नेसिंह डूण्डलोद, भूरसिंह के पुत्र तख्तसिंह को गोद लेना चाहते थे, फिर भी भूरसिंह ने डूण्डलोद की गोद चतरसिंह के पुत्र हरनाथसिंह को दिया और अपने पुत्र तख्तसिंह को चन्द्रसिंह पन्नेसिंह के भाई के हिस्से का अधिकारी बनाया। भाई भाई का परस्पर त्याग राजपूत इतिहास मे अभूतपूर्व है। इनके पहले पुत्र हरनाथसिंह डूण्डलोद की गद्दी के अधिकारी बने। दूसरे पुत्र ईश्वरीसिंह की बम्बई मे ई स १९३८ मे मृत्यु हो गई। तीसरे पुत्र करणीसिंह चौकडी के गणपतसिंह के गोद गये, परन्तु फिर गोपालसिंह ने गणपतसिंह का हिस्सा ले लिया तब इन्हे केवल भत्ता मिलता था। करणीसिंह की मृत्यु ई स १९४४ मे हुई। चौथे पुत्र देवीसिंह की मृत्यु दिसम्बर, १९६८ में हुई। इनके एक पुत्र भवानीसिंह हैं। पाचवें पुत्र बहादुरसिंह हैं। इनके एक पुत्र राजसिंह हैं। चतरसिंह के एक लडकी सज्जन कवर थी, जिनका विवाह कुवर सालिमसिंह वाह (मारवाड) के साथ हुआ। ये जयपुर मे वशाख वदि २ वि स १९८० तदनुसार ४ अप्रेल, १९२३ को देवलोक हुये।

- महासिंह (मलसीसर)
  - पृथ्वीसिंह
    - डूंगरसिंह
      - दुल्हेसिंह (नि स)
        - उदयसिंह (मण्ड्रेला से गोद आये)
          - भूरसिंह
            - शिवनाथ सिंह (नि स)
            - बाघसिंह (मण्ड्रेला गोद आये)
            - तख्तसिंह (नि स)
          - चतरसिंह
            - हरनाथसिंह (डूण्डलोद गोद गये)
            - ईश्वरसिंह (नि स)
            - करणीसिंह
              - जीवणसिंह
            - देवीसिंह
              - भवानीसिंह
            - बहादुरसिंह
              - राजसिंह
    - अमरसिंह (नि स)
  - जालिमसिंह (नि स)

७ कीर्तसिंह (डाबडी)

झुंझनू से पूर्व उत्तर में १४ मील की दूरी पर यह गांव बसा हुआ है। पिता की मृत्युपरान्त कीर्तसिंह को यह गांव मिला, परन्तु वे भोड़की में ही निवास करते रहे। इनके दो ठकुराणियां थीं—भीमसिंह की पुत्री जादवजी तथा खड़गसिंह की पुत्री। इनके एक पुत्र धीरसिंह थे, धीरसिंह ने यहां वैशाख वदि १५ वि सं १८३५ में एक गढ का निर्माण करवाया और इसे अपनी राजधानी बनायी। उस समय से यह गांव 'डाबडी धीरसिंह' कहलाता है।



डाबडी का गढ़। पीछे का दृश्य

वि सं १८३६ में चूरू ठाकुर और ये अजलीसर में थे। किसी बात पर चूरू ठाकुर से इनका झगड़ा हो गया। इस समय इनके साथ पौत्र सुलतानसिंह मारे गये, किन्तु चूरू ठाकुर को पराजित होना पड़ा। लोसणा व स्यालो में सीमा सम्बन्धी झगड़े को सलटाकर दोनों के मध्य इन्होंने ही संधि करवाई थी। वि सं १८६५ ई स १८०८ में बगड में शिवसिंह डूण्डलोद, के प्रसंग को लेकर श्यामसिंह बिसाऊ एवं अभयसिंह खेतड़ी के मध्य युद्ध होने की तैयारी हुई। कानसिंह पौत्र सल्हेदीसिंह को यहीं मारने की योजना बनी। कानसिंह को जब अपनी मृत्यु के जाल का पता चला तो उन्होंने धीरसिंह को पकड़ लिया और कहा "यहां से हटने नहीं दूंगा। मरेंगे तो दोनों एक साथ मरेंगे।" धीर

सिंह अभयसिंह खेतड़ी के मित्र थे। इस कारण इस कानसिंह की मृत्यु धीरसिंह के कारण बच गई। धीरसिंह की मृत्यु के समय का कोई वृतान्त मालूम नहीं हुआ।[1] धीरसिंह का विवाह लोसण के राठौड़ो के यहां हुआ था। इनके गुलाबसिंह, भारमलसिंह, रघुनाथसिंह, गोविन्द सिंह, मोतीसिंह और देवीसिंह छ पुत्र थे। गुलाबसिंह अपने ठिकाने के मुखिया थे। दुल्हेसिंह की मृत्यु के बाद उनकी ठकुराणियां ने अपने आपको गर्भवती बताया और समय पर दो पुत्र होने की चर्चा फैली। सवाई रामसिंह द्वितीय ने यह निर्वाचन करने के लिए कि पुत्र असली हैं या कृत्रिम। जोरावरसिंह के पांच सरदारों को नियुक्त किया, उनमें एक गुलाबसिंह भी थे। पांचो सरदारो ने दुल्हेसिंह के पुत्रो को कृत्रिम बताया धीरसिंह ने डावडी मे ठाकुर जी का मन्दिर व इनके पुत्र देवीसिंह ने सूर्यनारायण का मन्दिर बनवाया। वि स २०११ ई स १९५४ तक यहा की जागीर धीरसिंह के वंशधरों के अधिकार में रही। यहां के सरदारो की कुछ वंशावली इस प्रकार है।

कीर्तसिंह (डावडी)

धीरसिंह

गुलाबसिंह, भारमलसिंह, रघुनाथसिंह, गोविन्दसिंह, मोतीसिंह, देवीसिंह

(गुलाबसिंह के पुत्र) जवाहरसिंह (पाटोदा) (कुंवर पदे मृत्यु)

(देवीसिंह के पुत्र) अगरसिंह, समाणसिंह, रामनाथसिंह, शिवनाथसिंह, मोधोसिंह

भारमलसिंह पुत्र धीरसिंह

जीवणसिंह, रूपसिंह, सुल्तानसिंह

1 धीरसिंह के कोई प्रिय चारण था, जो इनके पास आता जाता था। धीर-

जवाहरसिंह (पाटोदा)

यह ग्राम झुंझनू से पश्चिमोत्तर मे २६ मील की दूरी पर स्थित है यह ग्राम धीरसिंह के पुत्र रघुनाथसिंह को राज्य रूप में मिला।

जवाहरसिंह, धीरसिंह के पुत्र रघुनाथसिंह के इकलौते पुत्र थे। रघुनाथसिंह बहुत रोबीले सरदार थे। धीरसिंह को डर था कि मेरी मृत्यु के बाद ये अपने भाइयो को ठिकाने का हिस्सा देगा या नही। इस लिये धीरसिंह ने अपने जीवनकाल मे ही ठिकाने के हिस्से करने चाहे सम्भवत इसी बात पर रघुनाथसिंह व धीरसिंह मे कहा सुनी होगई। उस समय रघुनाथसिंह ... बिसाऊ मे रहा करते थे। एक पुरोहित उनको जहर देकर मार डालने के लिए कहा। एक दिन जब रात्रि को सोने लगे उस समय पुरोहित ने दूध मे जहर दिया, परिणाम स्वरूप रघुनाथसिंह की मृत्यु हो गई। यह सुनकर धीरसिंह को अपनी भूल पर पछताना पडा। रघुनाथसिंह का विवाह भादरा (का घस राठोडा के) हुआ था। इनकी मृत्यु पर इनके इकलौते पुत्र जवाहरसिंह को इनकी मा पाटोदा लेकर आयी, जवाहरसिंह उस समय बच्चे ही थे। धीरसिंह ने जब यह सुना तो वे पाटोदा आये।

सिंह की मृत्यु के बाद जब वह चारण डाबडी आया और धीरसिंह की मृत्यु का समाचार सुना तो चारण ने एक सोरठा इस प्रकार कहा–

अब तो ऐ धरमराज, बेसुध होग्या बुड्ला।
लेता न आई लाज, धीर सरीसा धरपति॥

(फूलसिंह डाबडी के सौजन्य से प्राप्त)

जवाहरसिंह की मा को डर था, कि कहीं यह धीरसिंह उसके पुत्र को भी न मार डाले परन्तु यह विश्वास हो जाने पर कि धीरसिंह का इरादा गलत नहीं है, खमाणसिंह नामक खेजड़ोलिया सरदार ने जवाहरसिंह को दिलाया। आसपास के राजपूतों ने जवाहरसिंह का पूरा पक्ष लिया। इसके उपरान्त धीरसिंह वापस डावडी आगये।[1]

शेखावाटी के प्रसिद्ध धाडी डूगजी एक बार पाटोदा आये, जब अंग्रेज सेना उनकी गिरफ्तारी के लिए पीछा कर रही थी। इन्होंने जवाहरसिंह की सहायता चाही। जवाहरसिंह ने सहायता का आश्वासन दिया, किन्तु इससे पाटोदा की हानि होने की आशंका थी। अतः डूगरसिंह ने जवाहरसिंह के आश्वासन को स्वीकार नहीं किया। इसी स्थान पर डूगरसिंह गिरफ्तार कर लिए गये तथा इन्हें आगरे की जेल में भिजवा दिया गया। यह घटना अनुमानतः वि. सं. १९०२ की है।

जवाहरसिंह की मृत्यु के बाद इनका ठिकाना इनके पांचों पुत्रों में बट गया। जो वि. सं. २०११ ई. सं. १९५४ तक इनके वंशधरों के अधिकार में रहा। यहां के सरदारों की कुछ वंशावली इस प्रकार है।

---

1 सीकर के शिवसिंह के चार पुत्र समर्थसिंह चांदसिंह कीर्तिसिंह और मेदसिंह थे। कीर्तसिंह तथा मेदसिंह की समर्थसिंह ने हत्या करदी थी। कीर्तसिंह एवं मेदसिंह के क्रमशः पदमसिंह एव भावसिंह थे। आगे चलकर पदमसिंह को बठोठ की तथा भावसिंह को सरवडी की जागीर मिली। डूगरसिंह (डूगजी) पदमसिंह के वंशधर थे। इनके भाइयों में जवाहरसिंह भी थे। इन दोनों भाइयों ने अंग्रेजी सरकार का कड़ा विरोध किया। धनपतियों से इन्होंने धन लूटा और गरीबों में बांटा। समय समय पर अंग्रेजी छावनियों

जवाहरसिंह (पाटोदा)

- हम्मीरसिंह
  - भूरसिंह
  - रामलालसिंह
- रतनसिंह
  - चन्द्रसिंह
  - वृजलाल सिंह
- बख्तावरसिंह
  - पन्नेसिंह
  - विशालसिंह
  - गाडसिंह
- मंगलसिंह
  - भूरसिंह (गोद आ)
    - असमानसिंह
    - हुकमसिंह
- चिमनसिंह (नि स)

को इन्होंने लूटा। नसीराबाद की छावनी को लूटने की प्रसिद्ध घटना है। इनको पकड़ने के लिये अंग्रेजी सेना इनका निरन्तर पीछा करती रहती थी। अपने ही सजातियों ने अपने स्वार्थवश इन स्वातन्त्र्य सेनानियों का विरोध किया और अंग्रेजी सरकार की सहायता की। इन्हीं स्वार्थी व्यक्तियों ने इनको पकड़वाकर आगरा की जेल में डलवा दिया। परन्तु इनके साथियों ने १८ दिसम्बर, १८४६ वि स १९०३ में आगरा की जेल तोड़कर इनको निकलवा दिया और वे फिर यहां की जनता को अंग्रेजो के विरुद्ध भड़काना शुरू कर दिया। ये दोनों भाई जब तक जीवित रहे अंग्रेजी सरकार के विरुद्ध लड़ते रहे वि सं १९०५ सन १८४८ में इन्होंने नसीराबाद छावनी से अंग्रेजी सरकार के खजाने से २५८७८ रुपये १० आने लूटे। आज भी शेखावाटी भर में जन जन की वाणी से इनकी बहादुरी के गीत सुने जाते हैं।

८ दौलतसिंह (मण्ड्रेला)

झुंझनू से पूर्व उत्तर मे १८ मील की दूरी पर स्थित मण्ड्रेला एक कस्बा है। जोरावरसिंह का मृत्युपरांत उनके सबसे छोटे पुत्र जयतसिंह को यह कस्बा अन्य गांवों के साथ राज्य रूप में मिला।

दौलतसिंह का जन्म जोरावरसिंह की निरबाण ठकुराणी के गर्भ से वि स १७९१ ई स १७३४ में हुआ था। इनको राज्यरूप मे सुहासडा ग्राम प्राप्त हुआ था। वे कई वर्षो सुहासडा मे रहे। बडे भाई जयतसिंह की मृत्युपरान्त इनको गोद की रस्म की गई। दौलतसिंह इस समय सुहासडा से आकर मण्ड्रेला मे रहने लगे। महासिंह मलसीसर ने इनको गोद नहीं माना और वि स



मण्ड्रेला गढ़ का मुख्य द्वार

१८१८ ई स १७६१ में महासिंह ने स्योनाथपुरा और महरमपुर को सम्मिलित रखकर जयतसिंह का सारा राज्य अर्जुनसिंह चौकडी के मतानुसार दो भागो में बाट लिया। एक भाग महासिंह को व दूसरा भाग दौलतसिंह को प्राप्त हुआ। इसके बाद वि स १८१८ ई स १७६१ में महासिंह मलसीसर में रहने लगे। इसी वर्ष वि स १८१८-१९ सन् १७६१-६२ में इन्होंने यहा गढ़ बनवाया और अपनी राजधानी कायम की।

दौलतसिंह ने वि स १८२४ ई स १७६७ में सांखण ग्राम की पांच हजार बीघा जमीन गिरवी रखकर मण्ड्रेला में मिला ली।

वि. स १८२१ ई स १७६४ मे माधोसिंह जयपुर ने ठिकानेदारो को आमन्त्रित किया था। अन्य सरदारो के साथ दौलतसिंह भी जयपुर गये थे। शार्दूलसिंह की अन्य वंशधर हाथीसिंह सुलताना, सालिमसिंह टाई, चतरशालसिंह गोगियासर, महासिंह मलसीसर, पहाडसिंह के पुत्र समथसिंह अलसीसर, नवलसिंह के पुत्र नरसिंहदास नवलगढ व केशरीसिंह के पुत्र सूरजमल बिसाऊ भी इस अवसर पर जयपुर गये थे।

एक बार दौलतसिंह सुलखणिया ग्राम गये थे। साथ मे नागनोर का कामदार खां क्यामखानी साथ था। वहा कुछ झगडा हो जाने के कारण कामदार खां फलसा तोडता हुआ मारा गया। दौलतसिंह ने उसके वशजो को बाढ की जमीन दी।

दौलतसिंह के तीन ठकुराणिया थी– १ चाहडवास के ठाकुर विजयसिंह बीदावत की पुत्री अमर कवर २ चाहडवास के ठाकुर विजयसिंह बीदावत री पुत्री ज्ञान कवर ३ चूरू के सवाईसिंह बनीरोत की पुत्री अमृत कवर। इनके पाच पुत्र थे– १ लक्ष्मणसिंह २ सेत्रसिंह ३ कानसिंह ४ लालसिंह और ५ रणजीतसिंह।

दौलतसिंह का देहान्त वि स १८४४ ई स १७८७ मे हुआ था।

१ लक्ष्मणसिंह (१८४४ १८५६ ई स १७८७ १८०२)

इनका जन्म वि स १८११ ई स १७५४ मे हुआ दौलतसिंह की मृत्यु के बाद इनका ठिकाना इनके पुत्रों में बंट गया। लक्ष्मणसिंह की शादी देपालसर के बनीरोतो के हुई। इनके दो पुत्र बिशनसिंह और स्वरूपसिंह थे। बिशनसिंह पिता के उत्तराधिकारी हुये और स्वरूपसिंह, सेवसिंह के दत्तक पुत्र स्वीकार किये गये। इनके अन्य वशधरो की वशावली आगे दी हुई है।

सेवसिंह वि स (१८८४-१८५५ ई म १७८७-१७९६)

इनका जन्म वि स १८१३ ई स १७५६ में हुआ। सेवसिंह दौलतसिंह के दूसरे पुत्र थे। इनका विवाह चूरू के बनीरोतो के यहा हुआ था। पठानो के साथ युद्ध में यह लडे थे। वि. स १८५५ मे इनकी निस्सतान मृत्यु होने पर लक्ष्मणसिंह के पुत्र स्वरूपसिंह दत्तक पुत्र बने। स्वरूपसिंह के चार पुत्र थे— १ नत्थूसिंह २ रतनसिंह ३ गोपालसिंह ४ रूपसिंह। नत्थूसिंह और गोपालसिंह को वि. स १९०० ई स १८४४ मे पोपसिंह (कुशलसिंह के पुत्र) ने परस्पर झगडे मे मार दिये। रतनसिंह का विवाह ओरिट के ठाकुर हणूतसिंह चापावत की पुत्री से हुआ। चैत्र सुदि वि स १९१० ई स १८५३ को रतनसिंह की मृत्यु हो गई और उनकी पत्नी चापावत सती हो गई। इनके कोई पुत्र नही था, अंग्रेजी सरकार के नियमानुसार सती होना असंवैधानिक था। इस कारण जयपुर राजा ने सेवसिंह का ठिकाना खालसे कर लिया। रूपसिंह, जो स्वरूपसिंह के एक मात्र पुत्र बचे थे, अपने ठिकाने को बहाल कराने के लिये जयपुर गये। अचानक वे भी जयपुर मे वि स १९१० ई म १८५३ मे मृत्यु को प्राप्त हुये। इनके तीन पुत्र थे– १ मगनीसिंह २ उदयसिंह ३ बिडदीसिंह। एक पुत्री असमान कवर थी। बिडदीसिंह अविवाहित ही मृत्यु को प्राप्त हो गये और उदयसिंह मलसीसर गोद चले गये। रूपसिंह की मृत्यु के बाद सेवसिंह का ठिकाना बहाल कर दिया गया। मगनीसिंह ठिकाने के मालिक बने। इनके एक पुत्र जवाहरसिंह थे। इन्होंने भूरसिंह मलसीसर के पुत्र बाघसिंह को अपना दत्तक पुत्र बनाया मण्ड्रेला के दूसर हकदारो ने विरोध किया, परन्तु इसका कोई फल नही निकला। ई. स १९०९ मे जवाहरसिंह की मृत्यु होने पर १९११ मे बाघसिंह ही दत्तक पुत्र स्वीकार किये गये। इनकी २९ जनवरी,

१९३४ को निस्सतान मृत्यु होने पर मण्ड्रेला के हकदारो ने अपने हिस्से के लिये जयपुर से अपील की, किन्तु इनका हिस्सा तख्तसिंह मलसीसर को प्राप्त हुआ।

३ कानसिंह (वि स १८४४-१८५३ ई स १७८३-१७९७)

कानसिंह का जन्म वि स १८१६ ई स १७५९ में हुआ। यह दौलतसिंह के तीसरे पुत्र थे। इनका विवाह भादरा के स्वरूपसिंह की पुत्री फतह कवर से हुआ था। इनके दो पुत्र— नन्दरामसिंह तथा मदनसिंह हुये। ददरेवा के ठाकुर के साथ हुये झगडे मे मदनसिंह मारे गये। नन्दरामसिंह ने ददरेवा ठाकुर के दो लडको को चादगोठी के पास मारकर अपने भाई की मौत का बदला लिया। नन्दरामसिंह की मृत्यु के बाद इनके दो पुत्रो में राज्य दो भागों मे बट गया।

४ लालसिंह (वि स १८४४-१८५३ ई स १७८७-१७९७)

लालसिंह का जन्म वि स १८१८ ई स १७६१ में हुआ। यह दौलतसिंह के चौथे पुत्र थे। ये पचादा के साथ हुये झगडे में अपने भाई कानसिंह सहित मारे गये। इनके एक पुत्र रामसिंह हुए। रामसिंह निस्सतान मरे। अत इनका ठिकाना रणजीतसिंह के पुत्र भगवतसिंह के अधिकार में आ गया।

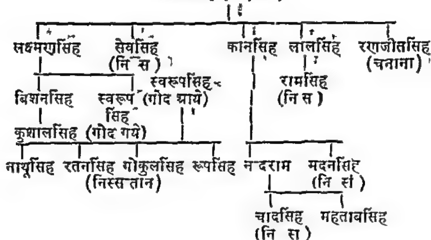
विशनसिंह (मारगसर)

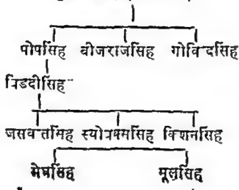
मारगसर झुझनू से ५ मील पश्चिम मे स्थित है। विशनसिंह पुत्र लक्ष्मणसिंह मण्ड्रेला ने यहा वि स १८७६ ई स १८१९ मे पहाडी पर गढ बनवाया। विशनसिंह का जन्म वि स १८३० ई स १७७३ में हुआ था। इनका विवाह पीहु ठाकुर की पुत्री चैनकवर के साथ हुआ।

मारगसर की सरहद मे डिडवाना भिवानी रास्ते की जकात के लिए नन्दरामसिंह मण्ड्रेला व विशनसिंह मे झगडा हुआ, जिसमे नन्दराम सिंह की ओर के दो भिश्ती व विशनसिंह की ओर से एक क्यामखानी मारा गया। यह क्यामखानी रास्ते जा रहा था, घटना से कुछ समय पूर्व इसने विशनसिंह के घर खाना खाया था। इस कारण अचानक झगडा होने, पर इसने नमकहराम बनना पसन्द नही किया और झगडे मे मरकर नमक की इज्जत रखी। इनकी मृत्यु वि स १८७७ ई स १८२० में हुई। इनके एक पुत्र कुशलसिंह हुए। कुशलसिंह के प्रपौत्र जसवन्तसिंह मण्ड्रेला से यहा आये। इनके वशधर मारगसर के गढ मे निवास करते है। यहा के सरदारो की वशावली इस प्रकार है।

---

1 मारगसर के कुए पर मोतीसिंह जोड़ अपने रेवड का पानी पिला रहा था। इसी बीच सल्हेदीसिंह के वशज कहीं से धाडा कर आये थे। उन्होने अपने घोडा को रेवड के बीच मे डाल दिया। इस पर मोतीसिंह व उनमे झगडा हो गया। इस झगडे में मोतीसिंह अकेले ने ही एसी वीरता दिखाई कि धाडी भाग पडे। इसके बाद मोतीसिंह को मारने के लिए रात्रि को वही धाडी कई आदमियो के साथ आये। उन्होने सोते हुए मोतीसिंह को मार दिया। मोतीसिंह को गाव मे रहने वाले जोड शोरगुल सुनकर आते त्योंही धाडी उन्हे मार दने। इस प्रकार जोडो की ओर के ३५ आदमी मारे गये। इस झगडे मे जोडो के केवल एक व्यक्ति हम्मीरसिंह बचे। वे वि स १९८१ ई स १९२४ मे मर गये और इसके साथ ही क्यामखानियो से पूर्व शासन करने वाला जोड वश समाप्त हो गया।


दौलतसिंह (मण्डेला)
लक्ष्मणसिंह
सेवसिंह (नि स)
कानसिंह
लालसिंह
रणजीतसिंह (चनाना)
स्वरूपसिंह (गोद आये)
रामसिंह (नि स)
बिशनसिंह
स्वरूप सिंह
कुशालसिंह (गोद गये)
नाथूसिंह
रतनसिंह
गोकुलसिंह
रूपसिंह
(निस्सन्तान)
नन्दराम
मदनसिंह (नि स)
चांदसिंह (नि स)
महताबसिंह


कुशालसिंह (मारगसर)
पोपसिंह
बीजराजसिंह
गोविन्दसिंह
निडदीसिंह
जसवन्तसिंह
स्योब्रमसिंह
विशनसिंह
मेघसिंह
मूलसिंह

५ रणजीतसिंह (चनाना) (वि स १८४४-१८६६ ई स १७८७-१८३६)

चनाना ग्राम झुंझनू से २० मील की दूरी पर पूर्व दक्षिण कोने मे बसा हुआ है। दौलतसिंह की मृत्यु के बाद वि स १८४४ ई स १७८७ में इनके सबसे छोटे पुत्र रणजीतसिंह को राज्य रूप में प्राप्त हुआ।

रणजीतसिंह का जन्म वि स १८३१ ई.स. १७७४ मे हुआ। इनके समय में वि स १८५३ ई स १७९६ में पचादो की कटक ने लाल सिंह की बलियो की जोडी व नारनोद तथा अलीपुर का धन (गायें आदि) घेर कर ले गये। लालसिंह व कानसिंह दोनो भाईयो ने १६ आदमियो के साथ पचादो का पीछा किया। खिमाऊ की ढाब (जोहड) पर पचादों को पकड लिया। पचादो ने लालसिंह के बैलियो को तो छोडना स्वीकार कर लिया, परन्तु गायो आदि को छोडने से इन्कार कर दिया। वे प्रजा के धन को छुडाना अपना कर्तव्य समझते थे। इस कारण परस्पर लडाई हो गई। पचादो की कटक बहुत अधिक थी। अत लालसिंह व कानसिंह मुकाबला न कर सके और लडते हुए वही मारे गये। माजी बीदावतजी इस समय रणजीतसिंह के साथ रहती थी। लालसिंह का हिस्सा व स्वय ही संभालने लग गई थी। इसी समय रणजीतसिंह के बडे लडके भगवतसिंह का जन्म हुआ।

वि स १८६२ ई स १८०७ मे सुहासडा के रतनावत शेखावतो द्वारा जमीन का लगान नही चुकाये जाने के कारण उनके दो व्यक्तियों को पकड कर मण्ड्रेला ले आये तथा उनको काफी तग किया तब लगान तो रतनावतो ने चुका दिया परन्तु इसका ठिकाने पर बुरा प्रभाव पडा। अगले वर्ष सुहासड़ा के रतनावतों ने निश्चय कर लुहारू नवाब को मामला देना तय कर लिया और मण्ड्रेला ठाकुरों को मामला

चुकाने की बजाय सुहारु नवाब को चुकाने लगे। मण्ड्रेला ठाकुरों ने जयपुर से भी शिकायत की, परन्तु कोई नतीजा नहीं निकला और सुहासड़ा हमेशा के लिए इनसे जाता रहा। सुहासड़ा के एवज में जयपुर दरबार ने इनके मामले के ३०० रुपये कम कर दिये।

रणजीतसिंह ने चनाणा में गढ बनवाने का विचार किया। दुर्जनदास महाजन झुंझनू ने गढ बनवाने के लिए रणजीतसिंह को धन दिया। रणजीतसिंह ने उस धन से वि सं १८६६ ई स १८१२ में पहाड़ी पर गढ बनवाया एवं नया चनाणा बसाया। चनाणा का विस्तार करने में दुर्जनदास महाजन ने बहुत सहयोग दिया। उसने केड छावसरी आदि गावों से महाजन बुला बुलाकर बसाये तथा स्वयं भी झुंझनू से उठकर चनाणा बस गया।

वि स १८७१ ई स १८१४ मे अमीर खां[1] लुटेरा शेखावाटी में जबरदस्ती धन वसूल करता हुआ नरहड के पास से गुजरा। उसने रण-

---

1 मलिक तालतूको नामक मुसलमान के दो पुत्र हुए। एक का नाम बुरहिया व दूसरे का अरमिया था। अरमिया के एक पुत्र अफगानिया हुआ। इसी अफगानिया के वंशज 'अफगान' कहलाते हैं। अफगानिया के वंशज अब्दुल रसीद ने 'पठान' की उपाधि धारण की। इन्ही पठानों मे तालिब खां उर्फ तालेखां दिल्ली बादशाह मुहम्मदशाह के समय हिन्दुस्तान मे आया। इसी तालेखां के वि स १८२१ ई स १७६४ हि० ११८२ में अमीर खां का जन्म हुआ। १५ वर्ष की अवस्था में घर छोड़कर लखनऊ चला गया। इसके बाद वह घूमता हुआ मालवा पहुंचा और वहां की सेना म भर्ती हो गया। इसके बाद वह युसुफखां रिसालदार विजयसिंह जोधपुर, ईडर, बड़ौदा, गायकवाड आदि स्थानों म नौकर के रूप मे रहा। इसके बाद भोपाल व बाद मे रघुगढ के

जीतसिंह के पास समाचार भेजा कि वह अमीर खां को चार हजार रुपये दे। परन्तु रणजीतसिंह ने रुपये नहीं दिये। इस पर अमीर खां के कई सैनिक रणजीतसिंह के पास आये। रणजीत सिंह अमीर खां से मिलने गये। अमीर खां के सैनिकों का कुछ झगडा हो गया, जिसमें वीरबलसिंह निरवाण मारे गये। रणजीतसिंह जब अमीर खां के पास गये तो अमीर खां ने इनको कैद कर लिया। रणजीतसिंह पहरेदार मिरजा रेवाडी से मिलकर निकल भागे तथा चिडावा पहुंचे। चिडावा में खेतडी के सवारों ने इन्हें गढ में भेज दिया। अमीर खां के सैनिक तुरन्त ही आ गये, परन्तु खेतडी के सवारों ने कह दिया कि इधर तो कोई नहीं आया। इस प्रकार रणजीतसिंह बच गये। बाद में खेतडी सवारों ने इन्हें सुरक्षित रूप से चनाना पहुंचा दिया।

राजा जयसिंह के पास रहा। जयसिंह के पास सेवा करते २ उसकी ख्याति बढने लगी। खीचियों से खींचातानी होने के कारण वह जयसिंह की नौकरी छोडकर भोपाल व बाद में होल्कर जसवन्तराव के पास आ गया और उसके यहां नौकर हो गया। यहां नौकरी करते २ अमीर खां की ख्याति बहुत बढ़ गई। जसवन्तराव ने इसको कई गांव जागीर में दिये। ई. स. १८०५ में होल्कर व अंग्रेजों का युद्ध हुआ। इसमें होल्कर को पराजित होना पडा और अंग्रेजों से संधि करनी पडी। इस संधि पर अंग्रेजों ने अमीर खां के हस्ताक्षर भी कराने चाहे। जसवन्तराव ने गवर्नर जनरल से टोंक, अलीगढ़, मालवे से सिरोंज और पडावा मेवाड से नीमाहेडा, खीचीवाडे से छबडा अमीर खां को संधि पर हस्ताक्षर करने के लिए दिलवाये। जोधपुर के मानसिंह व जयपुर के जगतसिंह के मध्य हुए संघर्ष में उसने जगतसिंह का साथ दिया, परन्तु बाद में यह इनके विरुद्ध हो गया। अमीर खां ने लार्ड मेटकाफ के साथ वि. स. १८७४ ई. स. १८१७ में संधि की, जिसके अनुसार वह टोंक का स्वतंत्र नवाब बना।

एक बार चनाणा में किसी जोशी के घर चोरी हो जाने पर गोवले के घोर मीणों को सोलाणा के पास जाल वाले जोहड़े मे मार दिया और जोशी को उसका धन दिलवा दिया।

वि स-१८८७ ई-स-१८३० मे मलसीसर के ठाकुर अमरसिंह राजपुरा (बीकानेर रियासत) का धन घेर कर ले आये। राजपुरा वाले मण्ड्रेला आये, क्योंकि लालसिंह राजपुरा व्याहे थे। पनेसिंह मलसीसर गये, परन्तु अमरसिंह ने धन नही दिया। पनेसिंह मण्डेला आ गये। दूसरे दिन अमरसिंह मण्ड्रेला का धन भी घेरने आ गये। मालूम होने पर मण्ड्रेला की ओर से धीरसिंह जाखल, दो चार आदमियो को लेकर गये। वहा झगडा हो गया। जवानीसिंह नरूका व पूर्णसिंह वहीं मारे गये। यह समाचार सुनकर भगवतसिंह, पनेसिंह, नन्दरामसिंह, रव रूपसिंह व खुशालसिंह अमरसिंह पर आक्रमण करने तयार हुए, परन्तु रणजीतसिंह ने अपने ही कुल को नष्ट होने से बचाने के लिए इजाजत नही दी।

रणजीतसिंह का विवाह मीठडी के प्रेमसिंह मेडतिया की पुत्री चिमन कवर से हुआ। इनके चार पुत्र थे- १ भगवतसिंह २ पनेसिंह ३ नोपसिंह ४ मारसिंह। रणजीतसिंह की मृत्यु आपाढ़ सुदि १ वि स १८९६ ई स. १८३९ को हुई।

भगवन्तसिंह

इनका जन्म वि स १८५३ ई स १७९६ में हुआ। यह लालसिंह के गोद हुए। भगवन्तसिंह अपने समय के मजे हुए जवान थे। कहा जाता है कि उनकी ऊचाई ७ फुट थी। शेखावाटी के प्रसिद्ध जवानो मे उनकी गिनती होती थी। इनका विवाह तिलाणेस के मेडतिया ज्ञानसिंह की बेटी सदाकवर से हुआ था। इनकी मृत्यु वि स १८९३ ई स १८३६ हुई थी। इनके दो पुत्र मंगलसिंह व बलवन्तसिंह हुए। मगलसिंह आ

मलसीसर से विरोध होने के कारण उस ठिकाने के कई गांवों को लूटा, था। वि स १९२४ ई स १८६७ में मलसीसर ठाकुर उदयसिह ने, जयपुर से मगलसिह की शिकायत की। जयपुर की फौज गढ तोड़ने आई, परन्तु मगलसिह के सजग हो जाने के कारण वापिस चली गई। बाद में दुबारा ४००–५०० सिपाही आये और गढ तोड दिया। वि स १९२२ ३० तक जयपुर ने किसी बात पर नाराज़ होकर चनाना खालसे कर लिया। बाद में वि स १९३१ ई स १८७४ मे खण्डेला छोटा पाना के राजा जगवतसिह ने जयपुर दरबार से सिफारिश कर चनाना वहा के सरदारो को वापिस दिलाया।

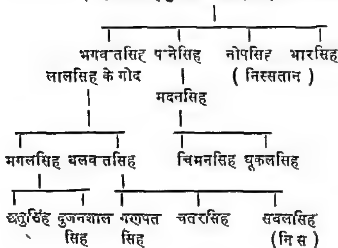
मगलसिह के पुत्र सूरजबक्ससिह चनाना के ऐसे सरदार थे, जिनको मकान बनाने इतिहास खोजने आदि बातों का बडा शोक था। इन्होंने शेखावाटी के इतिहास की काफी सामग्री एकत्रित की और उसे प झाबरमल जसरापुर वालों को सौंपा। प झाबरमल ने सेडली व सीकर का इतिहास लिखा, जिसमे इनका बडा योग था। इनके पुत्र ...सिह एव सवाईसिह को भी अपने पिता की तरह इतिहास में काफी रुचि है और आज भी ये ऐतिहासिक पत्रों को बडी सुरक्षा से रखे हुए हैं। मगवतसिह के सभी वशधरों की वंशावली यहां है।

पन्नेसिह

पन्नेसिह का जन्म वि स १८५६ ई स १८०२ में हुआ। रघुजीतसिह की मृत्यु पर इनको पिता का राज्य प्राप्त हुआ। यह शूरवीर सरदार थे। वि स १९०० ई स. १८४३ में सेडली गये हुए थे। पीछे से स्वरूपसिह के चारों पुत्र परस्पर लड पडे थे। रूपसिह व रतनसिह ने अपने भाई नथुसिह व गोपालसिह को ताना दिया कि रघुजीतसिह के पुत्रों ने बीदावतों की ... रघुजीतपुरा पर अधिकार कर रखा है उसे छुडवालो। यह बात गोपालसिह व नथुसिह ...

लग गई और वे दुल्हसिंह मलसीसर से मिल गये। दुल्हेसिंह ने उनकी सहायतार्थ पच्चीसा व दूकची भेज दिये। रणजीतसिंह के वंशधर तथा नथूसिंह व गोपालसिंह के बीच झगड़ा हुआ, जिसमें नोप सिंह (रणजीतसिंह के पुत्र) के २२ घाव लगे व नत्थूसिंह तथा गोपाल सिंह इतने घायल हो गये कि बाद इन्हीं घावों के कारण उनकी मृत्यु हो गई।

डाबड़ी के किसी चौकीदार ने पन्नेसिंह को अनुचित शब्द कहे। इस कारण वह चौकीदार इनके हाथों मारा गया। खेतड़ी के एक बदमाश चौकीदार ने किसी ब्राह्मणी के साथ बलात्कार किया। वह चौकीदार भी पन्नेसिंह के हाथों से मारा गया। अमरसिंह मलसीसर आपसी बैर भाव के कारण वि सं १८८८ ई सं १८३१ में इनके हाथों मारे गये। पन्नेसिंह का विवाह भीमराजोत बीका कुंदण वालों के यहां हुआ था। इनकी मृत्यु वि सं १९१९ ई सं १८६२ में हुई। इनके एक पुत्र मदनसिंह हुए। मदनसिंह के दो पुत्र चिमनसिंह व घूकल सिंह हुए। वि सं २०११ ई सं १९५४ तक रणजीतसिंह का राज्य इनके अधिकार में रहा। इनके वंशधरों की वंशावली इस प्रकार है।





बिशनसिंह (खेतड़ी)



भोपालसिंह (खेतड़ी)

अध्याय ?

किशनसिंह तथा उनके वंशधरों के ठिकाने

किशनसिंह

(वि स १७६६-१८०२ ई स १७४२-१७४५)

शादूलसिंह की राणी मेडतणीजी के गर्भ से वि स १७६६ ई स १७०९ मे किशनसिंह का जन्म हुआ। ये अपने पिता के समान वीर पुरुष थे। शादूलसिंह ने जब जयपुर और जोधपुर के बीच हो रहे युद्ध मे जयपुर की ओर से भाग लिया, तब ये भी अपने पिता के साथ थे। यह युद्ध वि स १७९७ ई स १७४० मे हुआ था। इस युद्ध मे किशन सिंह ने अपनी बहादुरी का परिचय दिया। इन्होंने चिडावा मे अनुमानत वि स १८०० में एक कच्चे गढ का निर्माण करवाया। ये बहुत उदार थे। इनकी उदारता के प्रसग मे लिखा है कि एक दिन में इन्होंने ३६० ऊटों का दान किया था[1]।

इनके मातृ पक्ष के भाई अखयसिंह का देहान्त युवावस्था मे ही हो

---

1 इनकी उदारता कवियों की वाणी से फूट पडी–

मेहा मोरां मदझरा राजा याही रीत।
किसन चढाया करहला चलै न चन्यिा भीत।।
कवियां भाग पधारज्यो कुवरजू भरुधर देस।
फलाणी लाखा किसो (को) सादाणी किशनेस।।
रसना म बहुरा रटया, दिसि दिसि रा दातार।
मन तृष्णा तो सू मिटी, कृष्णा राजकुमार।।

१. भूपालसिह (खेतडी)

(वि स १८०२-१८२८ ई स १८४५-१७७१

भूपालसिह का जन्म वि स १७६२ ई सन् १७३५ मे हुआ। पिता की मृत्यु के बाद इन्ही को गद्दी प्राप्त हुई। इनका विवाह जसरापुर के अमरसिह निरवाण की छोटी पुत्री से हुआ। जसरापुर से ६ मील की दूरी पर खेतडी बसा है, वहा एक विशाल पर्वत है तथा घोडो के चरने के लिए अच्छी घास होती है। भोपालसिह ने को यह भाग घोडो को चराने के लिए अच्छा लगा। धीरे धीरे वहा इन्होने अपना अधिकार जमा लिया। पहाड की ऊची चोटी, जो समुद्र तल से २३३७[1] फीट की ऊचाई पर है, वि स १८१२ ई स १७५५ में खेतडा मे पहाडी पर एक गढ़ बनवाया।[2] इसका नाम भूपालगढ रखा गया। वि स १८१४ ई स १७३६ मे खेतडी को अपनी नई राजधानी बनाया।

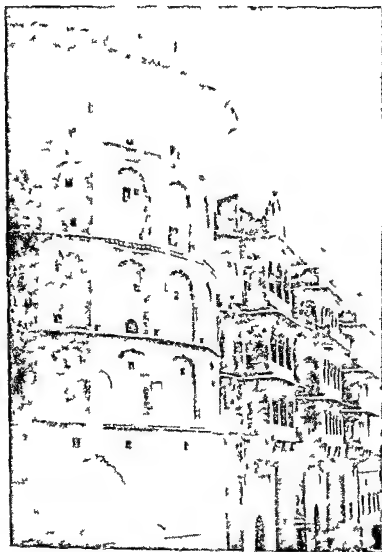


खेतडी महल (भू भट्ट)

1 प० भावरमल कृत खेतडी का इतिहास पृष्ठ ४४

2 खेतडी इतिहास के लेखक प० भावरमल शर्मा व शेखावाटी प्रकाश के लेखक रामचन्द्र शास्त्री का यह लेख कि खेतडी' का नामकरण खेतसिह निरवाण की ढाणी के नाम से हुआ सही नही है। क्यामखा रासा से सिद्ध होता है कि खेतडी विक्रम की १७ वी सदी से पहले का बसा हुआ था।

"हने खेतरी खरकरी, वीहाना कीर बैर।
पाटन रेवासौं मिले, यस कीनी आवेर ॥ ३६६ ॥
कया रासा, पृ० ३१



खेतड़ी महल झुझनू

अजीतसिह द्वारा सग्रहीत रिकार्ड के अनुसार दिल्ली बादशाह द्वारा इन्हे एक हजारी का मनसब मिला था।[1] वि स १८०५ ई स १७४८ मे जयपुराधीश सवाई ईश्वरसिह और मराठो के बीच युद्ध हुआ, जिसमे भूपालसिह ने बहादुरी दिखाई थी। वि स १८०७ ई स १७५० मे इन्होने जयपुर दरबार से सिघाना परगने का आधा हिस्सा प्राप्त किया था। वि स १८१२ के लगभग विजयसिह जोधपुर झु झनू आये थे। भूपालसिह ने इनका बहुत सम्मान किया।[2] वि स १८२४ मे जयपुराधीश माधवसिह एव मल्हाराव होल्कर का युद्ध बगरू नामक स्थान पर हुआ। इस युद्ध में होल्कर की सेना को भगाने का श्रेय भूपाल सिह को ही प्राप्त हुआ[3]

मावटा का युद्ध वि स १८२४ मे जयपुर और भरतपुर के मध्य हुआ। भूपालसिह जयपुर-पक्ष से लडे और भरतपुर के जाटो की एक तोप छीन लाये, जो आज भी खेतडी दुर्ग पर रखी हुई है। भोपालसिह ने झु झनू मे महल बनवाये, जो खेतडी महल के नाम से प्रसिद्ध हैं।

वि स १८२८ ई स १७७१ मे भूपालसिह ने लुहारू पर चढाई की। लुहारू पर उस समय कीर्तसिह और मेदसिह (भैरोजी) का अधिकार था। दोनो सेनाओं मे भयकर युद्ध हुआ। इस युद्ध मे लुहारू की ओर से कीर्तसिह और मेदसिह सहित २७ सिपाही मारे गये तथा भूपाल सिह विजयी हुए। युद्ध मे विजय की तिथि भादवा वदि वि स १८२८ ई स १७७१ थी। भूपालसिह विजयी तो हुये, लेकिन जब वे गढ पर जा रहे थे, तब किसी अज्ञात व्यक्ति की गोली ने इनका वही प्राणान्त

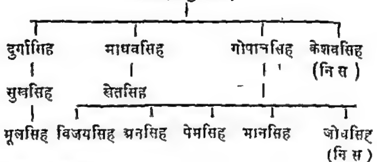
1 प० झाबरमल कृत खेतड़ी का इतिहास पृ० ४५

2 जोधपुर राज्य की ख्यात जि० २ पृ० ११ १२ जोधपुर राज्य का इतिहास द्वितीय खण्ड ओझा पृ०।७०४

3 प झाबरमल कृत खेतडी का इतिहास पृष्ठ ४४

(भुकाणा)

भुकाणा झुंझनूं से १६ मील पूर्व में स्थित है। रूपसिंह व इनके भाई गुलाबसिंह को यह जागीर के रूप में मिला। यह गांव वि सं २०११ ई स १९५४ तक इनके वंशजों के अधिकार में रहा। यहां के सरदारों की कुछ वंशावली इस प्रकार है।



दुल्हेसिंह (अडुका)

अडुका झुंझनूं से १८ मील पूर्व में स्थित है। इसको अमरसिंह चौहान (जो कयामखां के भाई जगमाल के चौथे वंशधर थे) ने वैशाख सुदि ३ वि स १५४५ वार सोमवार को बसाया।[1] पहाड़सिंह के चतुर्थ पुत्र दुल्हेसिंह को यह गांव जागीर के रूप में प्राप्त हुआ।

दुल्हेसिंह का जन्म अनुमानतः वि स १८२२ ई स १७६५ में हुआ। इन्होंने वि स १८५३ ई स १७९६ में यहां एक गढ़ बनवाया। इनकी मृत्यु वि स १८८३ ई स १८२६ में हुई। इनकी ठकुराणी बीदावतजी ने इनकी स्मृति में छतरी का निर्माण करवाया व वि स १९१२ में श्री गोपीनाथ जी का मन्दिर बनवाया। ये बड़े दानी

1 प्र द्रसौ पतालव, बार सोम बसाख।
अमर अडूकौ थापियो, तीज तिथि सुद पाख॥

थे, इन्होने छ हजार बीघा जमीन कोदेसर के चारणो को दान मे दी। इनके पुत्र मानसिंह और फतेहसिंह थे। मानसिंह का जन्म वि स १८४५ ई स १७८८ मे हुआ। मानसिंह का विवाह भान्रा ठाकुर पृथ्वीसिंह कान्लोत की पुत्री गुलाब कंवर मे हुआ। इनकी मृत्यु वि स १८९३ ई स १८३६ मे हुई। इनके तीन पुत्र माधोसिंह, पन्नेसिंह व महताबसिंह हुए। इन तीनो भाइयो मे बहुत स्नेह था। माधोसिंह का जन्म वि स १८७३ में, पन्नेसिंह का वि स १८७५ में व महतावसिंह का वि स १८७६ मे हुआ। खेतडी राजा फतेहसिंह के जन्म को लेकर जो विवाद उठा। उसमे राजदादी भटियाणीजी का माधोसिंह ने पक्ष लिया। इनके दोनों भाई भी इनके साथ थे। अलसीसर के ठाकुर विशालसिंह, जखोडा, गांगियासर,चनाना,मण्ड्रेला आदि के ठाकुर भी इनके पक्ष मे थे। इन्होने भटियाणी जी की मदद से खेतडी पर कब्जा कर लिया। राजमाता राणावतजी ने जयपुर पुकार की। जयपुर ने शेखावाटी ब्रिगेड के कमाण्डर मेजर फारिष्टर को खेतडी पर हमला करने भेजा। मेजर फारिष्टर का मुकाबला ये न कर सके। फारिष्टर ने खेतडी पर अधिकार कर लिया। इस बात पर जयपुर ने माधोसिंह का ठिकाना खालसा कर लिया और इनका हिस्सा इनके काका फतेहसिंह को दे दिया गया। माधोसिंह ने अपने ठिकाने को अधिकार मे लेने के लिए जयपुर से अर्ज की। जयपुर राजा ने इनको बुलाया पर ये जयपुर नही गये। वि स १९०७ ई स १८५० मे जयपुर राजा रामसिंह हरिद्वार पधारे। माधोसिंह ने साधु वेश मे जयपुर राजा को हरिद्वार मे नजर पेश की। राजा ने कहा, ' मैं साधुओ से नजर कसे ले सकता हूँ।" तब भेद खुला और माधोसिंह को अडूका का अपना हिस्सा प्राप्त हुआ। तीनो भाइयो (माधोसिंह, पन्नेसिंह, महताबसिंह)की मत्यु क्रमश वि स १९४६ १९५१ व १९५२ में हुई। माधोसिंह के दो विवाह हरसोरा के चौहानो के हुए। इनके

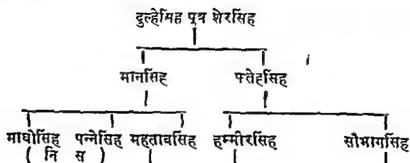
एक पुत्र वैरीशालसिंह हुए । वैरीशालसिंह की मृत्यु वि स १९६१ ई स १९०४ मे हुई । इनके एक पुत्र अमरसिंह थे । अमरसिंह के पुत्र न होने के कारण शिवनाथसिंह के बडे पुत्र जगतसिंह इनके गोद आये । इनको साहित्य से बहुत प्रेम था । बातचीत मे कविता का प्रयोग इस ढग से करते थे कि सुनने वाले मुग्ध हो जाते थे । इन्होंने कविताओ का अच्छा सग्रह किया था । वि स १९५६ ई स १८९९ मे भयकर अकाल पड़ा । जयपुर नरेश ने अकाल राहत कार्यों के साथ ही एक रिसाल खडा किया था, जगतसिंह इस रिसाले मे रिसालदार थे । वि स १९६७ ई स १९१० मे खेतडी के राजा जयसिंह की निस्सतान मृत्यु होने पर इन्होने हकदारी का मुकदमा लडा था पर तु सफल न हुए । राजा अमरसिंह खेतडी ने इनको जयपुर मे सीगडा हाउस से खेतडी हाउस मे बुलाकर कहा, "काकोसा । जो कुछ हो गया उसे मन सानिये और उनको खेतडी का काय भार सौप दिया । काफी दिनो तक खेतडी का काय सुचार रूप से चलाया । ये पचपाना कमेटी के सदस्य भी रह चुके हैं । राजा मानसिंह जयपुर ने २७ फरवरी, १९४२ को द्वितीय विश्वयुद्ध के समय युद्ध मे मदद देने हेतु अपने जागीरदारो की एक सभा बडे शामियाने मे रेल्वे स्टेशन झुझनू के पास की उसमे जगतसिंह को भी आमन्त्रित किया गया था ।[1] सेठ जुगलकिशोर बिडला व लुहारू नवाब से इनकी घनिष्ट मित्रता थी । जुगलकिशोर जी इनको अपना धर्म भाई मानते थे । लुहारू नवाब (वतमान) से भी इनका काफी मेला था ।

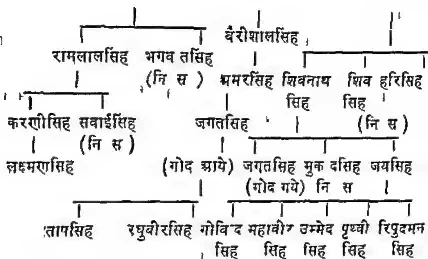
जगतसिंह के प्रथम ठकुराणी से प्रतापसिंह नामक पुत्र का ज म हुआ । पर तु प्रतापसिंह का निधन वि स १९८५ ई स १९२८ मे *

1 महकमा खास जयपुर (राजपूताना) द्वारा जगतसिंह के नाम भेजे गये पत्र दिनाक २४ फरवरी, १९४२के अनुसार

हो गया तब इन्होंने दूसरा विवाह किया। दूसरी ठकुराणी से रघुवीर सिंह का जन्म हुआ। यही रघुवीरसिंह अडूका के छोटे पाने के वर्तमान सरदार हैं। इनका जन्म पौष वदि २ वि स १६८६ तदनुसार १५ दिसम्बर, १९३२ को हुआ। इनकी शादी मिति फाल्गुन वदि ७ वि स २००५ तदनुसार १६ फरवरी १९१२ को ठा भीमसिंह रघुनाथसिंहोत मेड़तिया की पुत्री किरणकंवर से हुई। सार्वजनिक कार्यों मे रुचि के साथ साथ इनको इतिहास से भी प्रेम है। इनके चार पुत्र देवीसिंह, मोहनसिंह, दलीपसिंह और भगवानसिंह हैं।

फतेहसिंह के दूसरे पुत्र सौभागसिंह थे। सौभागसिंह के तीन पुत्र शिवनाथसिंह, शिवसिंह व हरिसिंह थे। शिवनाथसिंह के तीन पुत्र जगतसिंह, मुकन्दसिंह और जयसिंह थे। जगतसिंह, अमरसिंह के गोद गये। शिवसिंह व हरिसिंह के कोई सन्तान नहीं हुई। मुकन्दसिंह पुत्र शिवनाथसिंह अविवाहित ही मृत्यु को प्राप्त हुए। शिवनाथसिंह के तृतीय पुत्र जयसिंह को डायरी लिखने का बहुत शौक था। इन्होंने लगातार चालीस वर्षों तक डायरी लिखी। मौसम, अडूके में होने वाली गतिविधियां, जन्म मरण, उत्सव आदि बातों का उल्लेख इनकी डायरी से प्राप्त होता है। इनके पांच पुत्र गोविन्दसिंह, महावीरसिंह उम्मेदसिंह पृथ्वीसिंह व रिपुदमनसिंह हैं।




बैरीशालसिंह
रामलालसिंह
भगवंतसिंह
(नि स)
अमरसिंह
शिवनाथ सिंह
शिव सिंह
हरिसिंह
(नि स)
करणीसिंह
सवाईसिंह
(नि स)
जगतसिंह
लक्ष्मणसिंह
(गोद आये) जगतसिंह
(गोद गये)
मुकंदसिंह
नि स
जयसिंह
तापसिंह
रघुवीरसिंह
गोविंद सिंह
महावीर सिंह
उम्मेद सिंह
पृथ्वी सिंह
रिपुदमन सिंह

अध्याय ३

अखयसिंह

(वि स १७६६-१८०२ ई स १७४२-१७४५)

शार्दूलसिंह की राणी मेडतणीजी के गर्भ से अखयसिंह का जन्म वि स १७६६ मे हुआ था। ये अपने भाइयो की तरह से बहादुर नहीं थे, अधिकतर झुंझनू मे ही रहते थे एव मदिरा का अधिक सेवन किया करते थे। इस कारण वे बीमार रहने लगे थे। वि स १७९७ ई.स १७४० मे कयामखानियों एव शेखावतों का युद्ध लूमास नामक स्थान पर हुआ। इस युद्ध मे अपने काका सरदारसिंह के साथ इन्होने भी भाग लिया था। झुंझनू मे इन्होने अपने नाम से एक विशाल गढ अखय गढ के नाम से बनाना शुरू किया था। परन्तु वह इनके जीवन काल मे पूर्ण नही हुआ। अत इसे नवलसिंह ने पूर्ण करवाया। इनकी मृत्यु वि स १८०२ ई स १७४५ मे सब भाइयो से पहले हो गई।[1] इनके

---

1 शेखावाटी प्रकाश एव Shekhawats and their Lands के लेखक क्रमश रामचन्द्र शर्मा एव हरनाथसिंह जी डूडलोद इनकी मृत्यु वि स १८०८ में हुई मानते हैं। परन्तु यह सही नही है। विल्स रिपोर्ट और उसका उत्तर पृष्ठ १७२ पर लिखा है कि Pahar Singh the adopted of AkheySingh grand son of Sardul Singh write in 1745 A D ' Where as the entire share held by Akhey Singh has been bestowed on one by Shriji तथा इनकी मृत्यु के बारे मे एक अन्य विवरण पचपाना सिंघाना रिपोर्ट पृष्ठ २३,२४ पर इस प्रकार मिलता है ' One of Sardul Singh s sons named Akhey Singh died about 1745 A D without issue ' इन दोनो प्रमाणो से सिद्ध है कि अखयसिंह जी की मृत्यु वि-स १८०२ ई स १७४५ म हो हुई थी न कि वि स १८०८ म।

शतान नही थी। इस कारण इनकी मृत्यु होने पर इनका क्रियाकम पहाडसिह पुत्र किशनसिंह ने किया तथा पहाडसिह को इनका दत्तक पुत्र बनाया गया। अखयसिह का राज्य पहाडसिह को प्राप्त हो गया। पहाडसिह जयपुर दरबार को मामला (कर) न चुका सके। इस कारण वि स १८०५ ई स १७४८ मे अखयसिह का राज्य नवलसिह केशरीसिह एव भोपालसिह पुत्र किशनसिह को प्राप्त हो गया। सम्भवत पुन पहाडसिह ने जयपुर दरबार से अखयसिह का राज्य पाने हेतु प्राथना की थी। जयपुर दरबार ने उनकी प्राथना सुनी और पत्र पी एस १५८ के द्वारा पहाडसिह को लिखा कि अखयसिह का राज्य आपको पुन इन शर्तो पर दिया जाता है कि आप पीछे का बकाया मामला (कर)और आगे का



जोरावर गढ़ के उत्तर मे स्थित अखय गढ़ का भग्न

वार्षिक मामला देने का वचन दो तथा दरबार की सेवा करो। परन्तु शायद ये शर्तें पहाडसिह नवलसिह के प्रभुत्व के कारण पूण नही कर सके। अखयसिह का राज्य नवलसिह, केशरीसिह तथा भोपालसिंह के पास ही रह गया।



अलयगट, झु मनू



दुग नवलगढ

अध्याय ४

नवलसिंह व उनके वंशधरों के ठिकाने

नवलसिंह नवलगढ

(वि स १७६६-१८३७ ई स १७४२-१७८०)

नवलगढ, झुंझनू जिले का मुख्य कस्बा है। झुंझनू से दक्षिण की ओर २४ मील की दूरी पर बसा है। इसका प्राचीन नाम रोहिली था जो एक छोटी ढाणी के रूप में था। माघ शुक्ल २ वि स १७६४ ई स १७३७ में शार्दूलसिंह के चतुर्थ पुत्र नवलसिंह ने यहां एक गढ बनवाना शुरू किया और 'रोहिली' का नाम 'नवलगढ' रखा।

नवलगढ के संस्थापक नवलसिंह का जन्म शार्दूलसिंह की राणी मेडतणी जी के गर्भ से वि स १७७२ में हुआ। ये गंगवाणे के युद्ध मे अपने पिता के साथ थे और फिर इसी समय जब क्यामखानियों ने फतेहपुर पर हमला किया तो बख्तसिंह पुत्र जोरावरसिंह, किशनसिंह व चांदसिंह (सीकर) सबको साथ लेकर फतेहपुर पर चढे थे और लूमास की युद्ध भूमि मे शत्रु को परास्त किया था।

नवलसिंह की अपने भ्राता किशनसिंह से नही बनती थी और उनमे परस्पर अनबन रहती थी। वि स १८०२ मे अखयसिंह की मृत्यु हो गई। किशनसिंह ने अपने पुत्र पहाडसिंह को अखयसिंह का दत्तक पुत्र बनाना चाहा और इसीलिये अखयसिंह का क्रियाकर्म पहाडसिंह के हाथ से करवाकर उसका राज्याभिषेक कर दिया परन्तु नवलसिंह ने इसे स्वीकार नही किया। इस कारण अखयसिंह का हिस्सा भोपालसिंह पुत्र किशनसिंह, नवलसिंह और केशरीसिंह तीनो मे बराबर विभाजित हो गया।

सालिमसिंह और सुजानसिंह, अमरसिंह, ग्यानसिंह भाभड आदि ने युद्ध में बड़ी वीरता दिखाई। वाकयात कौम कयामखानी के अनुसार इस युद्ध में सैदुला खां, नथूखा, अब्दुलाखां, एतबार खा, फतेहखा आदि कयामखानी मारे गये। इस प्रकार दोनो सेनाओ के बीच भयकर युद्ध हुआ परन्तु शेखावत शक्ति के सामने शत्रु की सेना टिक न सकी और मैदान छोड़कर भाग पडी। नवलसिंह के नेतृत्व मे शेखावतों कि विजय हुई।

माघ सुदि ३ वि १७३१ जनवरी, १७७५ मे नवलसिंह बाघसिंह सूरजमल व हनुवतसिंह तथा नजबकुलीखां के बीच दिल्ली को कर चुकाने सम्बन्धी संधि हुई। इसी संधि अनुसार वि स १८३२ ई स १७७५ में सूरजमल, हनुतसिंह एव बाघसिंह व अन्य शेखावत सरदारों ने२२०००) रुपये की हुण्डी देकर नवलसिंह का कर चुकाने हेतु दिल्ली भेजा। जब वे रास्ते मे दादरी से होकर गुजर रहे थे उसी समय हसनपुर या बगड के महाजन की लडकी जो दादरी ब्याही थी की पुत्री का विवाह हो रहा था। इस लडकी ने जब नवलसिंह को वेश भूषा को देखा तो उसे अपने गांव की याद आई और यह कहती रो पडी कि उसके परिवार मे कोई जीवित होता तो आज 'भात' लाता। नवलसिंह को जब इस लडकी की जानकारी हुई तो इन्होंने उस लडकी को बहिन बनाया और२२०००) की हुण्डी जो दिल्ली कर चुकाने हेतु लेजारहे थे, भात में देदी। यहा इनकी बेहद उदारता दृष्टिगोचर होती है।

इसी वर्ष १८३२ ई स १७७५ में इन्होंने चोर्ई में एक गढ बनवाया। वि स १८३४ ई स १७७८ में एक गढ गुढ़ाना में भी बनवाया। वि स १८३४ ई स १७७८ में दिल्ली सम्राट शाहआलम ने ३००० का मनसब देकर इनको सम्मानित किया। मराठों का प्रभाव कम होने के



पट २१ भीत- नवलसिंह (नवलगढ़)



गरविन्द दास (गनगढ़)

कारण शाहआलम द्वितीय (बादशाह दिल्ली) का सेना पति नजब खां राजस्थान की ओर बढा। पहले उसने प्रतापसिंह (अलवर राजा) का दमन किया। इसके बाद यह फरवरी, १७७६ को जयपुर पहुँचा और १६ फरवरी को जयपुर नरेश प्रतापसिंह को इस बात के लिए बाध्य किया कि वह राजगद्दी पर बैठने का टीका बादशाह से कराये। इसके लिए बादशाह के स्वय जयपुर राज्य मे आने पर नवलसिंह बादशाह के दरबार में उपस्थित हुए। वि स १८३६ ई स १७७६ मे नजबकुली खा ने कानूड पर हमला किया। इस समय ये बीमार अवस्था मे कानूड के किले मे थे। कानूड के राजा बलवतसिंह व नजबकुली खा मे समझौता कराने हेतु सिंघाना गये जहा २४ फरवरी १७८० वि स १८३६ मे इनकी मृत्यु हो गई।

विवाह तथा सतति- इनके चार ठुकराणिया एव १० पुत्र थे।

ठुकराणिया

१ उदावत जी-देहा के सग्रामसिंह की पुत्री
२ बीकावत जी ददरेरा के हिम्मत सिंह की पुत्री
३ चापावत जी आउवा के हिन्दूसिंह की पुत्री
४ बीकावत जी भडौदा के देवीसिंह की पुत्री

पुत्र

१ नरसिंहदास २ नाहरसिंह ३ दलेलसिंह ४ जालिमसिंह ५ लालसिंह ६ अभयसिंह ७ सेवसिंह ८ फतहसिंह ९ जीवणसिंह १० खड्गसिंह

१ नरसिंहदास (वि स १८३६-१८४७ ई स १७८०-१७९०)

ठा नवलसिंह की मृत्यु के उपरान्त वि स १८३६ मे ये पिता की गद्दी के उत्तराधिकारी हुये। वि स १८३८ मे सीकर के राजा देवी सिंह ने रिणाऊ के युद्ध मे सल्हेदीसिंह के पुत्र अजीतसिंह को मार डाला

इसका नाम अपने नाम पर मुकुन्दगढ़ रखा। कस्बे की सुन्दरता, बाजार चौड़े और अच्छे राज भवनो का निर्माण करवाया। आबादी का विस्तार कर इसे कस्बे का रूप दिया। इनके कोई सन्तान नही हुई। अत दोरासर के ठाकुर बलवन्तसिंह के पुत्र अमरसिंह को दत्तक पुत्र बनाया और मार्गशीर्ष वदि १३ वि स १९३१ सन १८७४ को रस्म अदा की, पर वैरीसालसिंह के पिता दुजनशालसिंह ने यह नही होने दिया। वि स १९३३ ई स १८७६मे इनकी मृत्यु होगई। राजा जयपुर ने इनका दत्तक पुत्र वैरीसालसिंह को बनाया।

वैरीशालसिंह (वि स १९३३-१९६० ई स १८७६ १९०३)

वैरीसालसिंह दुजनशालसिंह के पुत्र थे। वि स १९३३ म मुकुन्दसिंह की मृत्यु के उपरान्त ये दत्तक पुत्र क रूप मे राज्य के अधिकारी हुए। इनका राज्य काय उस समय मीरमी कामदारी करता था। यह बड़ा स्वार्थी था। राज्य की बहुमूल्य वस्तुओ को वह स्वयं प्रयोग में लाता था। प्रजा इसके शासन से दुःखी थी। भाद्रपद वि स १९३६ मे बघोरा के ठाकुर की लड़की से वैरीशालसिंह का विवाह हुआ इनके एक कन्या उत्पन्न हुई। ये सन् १९५२ में युवावस्था में ही परलोक वासी होगये। इनके और कोई संतान नहीं थी। अत उत्तराधिकार का प्रश्न उठ खड़ा हुआ। इधर दुजनशालसिंह की भी मृत्यु होगई पर साथ दो स्थान खाली होगये। नरसिंहदास के पौत्र के प्रपौत्र कर्णसिंह के पुत्र शिवसिंह ने इन दोनों हिस्सों को अपने कब्जे म करना चाहा किन्तु इनको सफलता नहीं मिली। अन्त मे जयपुराधीश ने नरसिंहदास के तृतीय पुत्र पदमसिंह के प्रपौत्र अजीतसिंह के पुत्र बहादुरसिंह को वैरीशालसिंह का दत्तक पुत्र वि स १९६० में स्वीकार किया और इस प्रकार बहादुरसिंह, वैरीशालसिंह की जायदाद के उत्तराधिकारी बने।

बहादुरसिंह (वि स १९६० १९६७ ई १९०३ १९१०)

बहादुरसिंह, नवलसिंह के ज्येष्ठ पुत्र नारसिंह के तीसरे पुत्र पदमसिंह के प्रपौत्र अजीतसिंह के पुत्र थे । ये वि १९६०में देवीलालसिंह के राज्य के उत्तराधिकारी हुए । इनके समय मे वयामखानियो का जोर वढ रहा था, परन्तु जयपुर ने वयामखानियो को अलग कर दिया । इससे इ ह वडी प्रस नता हुई । इ ोन मुकु दगढ मे एक महल का निर्माण कराया । वि स १९६७ में इनका देहा त होगया कि तु इनकी ठकुराणी के गभ था । अत कुछ दिनो बाद एक बालक का ज म हुआ जिसका नाम रणधीरसिंह रख गया । वह राज्य का उत्तराधिकारी हुआ । कि तु १८ महीने वाद वह भी चल वसा । अत रूपसिंह नवलगढ ने बहादुरसिंह के राज्य को अपने राज्य मे मिलाना चाहा किन्तु रणजीतसिंह की माता इनसे सतुष्ट न होने के कारण महनसर के वाघसिंह को स्वेच्छा से दत्तक पुत्र बनाया जिसे जयपुर राजा ने स्वीकार किया ।

वाघसिंह (वि स १९६८-२०१० ई स १९१०-१९५३)

ठा वाघसिंह का ज म श्रावण वदि १२ वि स १९४६ में फूलसिंह के घर महनसर मे हुआ । मुकु दगढ के वहादुरसिंह व रणजीतसिंह की मृत्यु वालकपन मे हो जाने के कारण व रणजीतसिंह के उत्तराधिकारी हुए । वि स १९७२ ई स १९१५ मे महाराजा माधोसिंह II जयपुर के शासनकाल के पच्चीस वष पूरे होने पर सिलवर जुबली का उत्सव धूम धाम से मनाया गया । इस अवसर पर महाराजा माधोसिंह ने इनको 'रावल' की पदवी से विभूषित किया। ये विद्यानुरागी एव पटु राजनीतिज्ञ थे, कवियो का आदर करते थे तथा स्वय भी कविता लिखने का शौक रखते थे, इनकी मृत्यु ५ जनवरी १९५३ को हुई ।

६८राजस्थान का इतिहास (टॉड) भाग २ अनु० बलदेव प्रसाद मिश्र (रा इ टा)
६९राउ जइतसिंघ रो छंद—बीठू सूजा नगराजोत
७०वीर विनोद श्यामलदास (वी वि)
७१वचनिका राठौड़ रतनसिंघ जी महेशदासोतरी खिड़िया जगारी वही— स डा रघुवीरसिंह एवं काशीप्रसाद (व रा र म)
७२विल्स रिपोर्ट और उसका उत्तर-सी यू विल्स (वि रि उ)
७३वंश भास्कर-सूर्यमल मिश्रण (व भा)
७४विविध संग्रह-भूरसिंह मलसीसर (वि स)
७५शार्दूलसिंह जी शेखावत कु देवीसिंह मण्डावा (शा शे)
७६शेखावाटी प्रकाश प रामचन्द्र शास्त्री (शे प्र)
७७शेरशाह और उसका समय डा कालिका रंजन कानूनगो (अनु डा मथुरालाल शर्मा)
७८शिखर वंशोत्पत्ति गोपाल कविया (शि व)
७९शेखावतों की वंशावली-हरनाथसिंह डूंडलोद
८०शेखावतों के गीत (कु० रघुनाथसिंह का संग्रह)
८१सवाईसिंह धमोरा का काव्य संग्रह
८२सीकर का इतिहास प, झाबरमल शर्मा (सी इ)
८३हिन्दुस्तान हेमिल्टन (हि हि)

ENGLISH

84Archaeological Survey of India Vol 2
85A Brief Hisstory of Jaipur Narendra Singh Jobner
86A Reply to the Report on Land tenures and Special Powers of certain Thikanedars of the Jaipur State by C U wills
On behalf of the Panchpana Sardars (including khetri and Seekar) by JOHN JACKSON, Bar at Law LUCK NOW'(W R R)

न
ग
से

87 Ancient India Kanighum
88 Annals and Antiquities of Rajasthan Vol II Col Tod
89 Annals and Antiquties of Rajasthan Vol III Col Tod
90 Akbar the great Mughal V Smith
91 A list of Northern India Bhatnagar Survey of India Vol 2
92 Ain i Akbari(Blockman's Translation)
93 Buddhist India
94 Cambridge History of India Vol III
95 Downfall of Mughal Empire J N Sarkar
96 Early Chauhan Dynasties Dr Dasharatha Sharma
97 History of Kannauj R.S Tripathi
98 History of Medieval India–C V Vaidya
99 Imperial Gazetteer of India
100 Indian Antiquities
101 Journal of the Asiatic Society of Bengal Vol XXXII
102 Jaipur and its Environs Harnath Singh Dundlod
103 Later Mughals Irvin
104 Memorial of Thakur Gopal Singh Chokari
105 Maharana Kumbha Harbilash Sharda
106 Political History of Jaipur J C Broock
107 Political Administration Report of Rajputana- J C Broock
108 Report of Panchpana and Singhana of some Thikanedars of Jaipur State
109 Survey of India Vol 2
110 The Shekhawats & Their Lands-Harnath Singh
111 The great decisive battles of Jaipur Rawal NarendraSingh
112 Tour through the western States of Rajwara in 1835

शुद्धि–पत्र

पृष्ठ सख्या	पक्ति सख्या	अशुद्ध	शुद्ध
२	६	on c:stors	ancestors
४	१६	राजपूत	राजपुत्र
५	१६	एन्टीक्यूटीज	एण्टीक्यूटीज
६	२१	परमार	प्रतिहार
१०	१६	शस्तावत	शक्तावत
११	५	वाचाई	वचाई
११	१४	उपशासाऐ	उपशाखाए
१५	१६	क्षॆत्र	क्षेत्र
१६	१२	ईदा	ई दा
१८	२	जेष्ठ	ज्येष्ठ
२०	१०	यह	ये
२६	५	व्रनदामा	वज्रदामा
३०	८	साढादेव	सोढदेव
३०	टिप्पणी ४	Bajastha	Rajasthan
३६	१२	रुप	रूप
४३	टिप्पणी १	शार्दूलसिह	शादू लसिह
	पक्ति ७		
५०	२	१५२८	१५४५
६३	टिप्पणी ३ पक्ति २	चुरु मण्डल का शोधपूण	चूरू मण्डल का शोधपूर्ण
६५	टिप्पणी १ पक्ति ११	उमर	उम्र
८१	१६	चादावत	चादापोता
८७	१३	(चौहन)	(चौहान)
८७	१५	१६३५	१६२५
९१	११	रामदास कच्छवाह व रायसल जी	रामदास कच्छवाह
१०१	टिप्पणी ३ पक्ति १	नाम	नाम से
१०३	टिप्पणी १	hundred,	hundred jat and
१०८	८	भीमसिह	हरनाथसिह

१०६	१७	छटे	छठे
११३	६	दो पुत्र	एक पुत्र
"	"	भारमल	एक पौत्र भारमल
१२०	१४	ने जहर देकर	वख्तसिंह ने शस्त्र प्रहार से
१२४	टिप्पणी ३	जीवन	जन्म
१२५	११	विपति	विपत्ति
१२५	टिप्पणी २ पंक्ति ३	डूडलोद	डूण्डलोद
१२६	टिप्पणी १ पंक्ति १	मेवाड	मेवात
१२८	१३	नरुद्दीन	नरूद्दीन
१२८	टिप्पणी ३ पंक्ति २	Shekyawats	Shekhawats
१४०	टिप्पणी२	बेटे	पोते
	पंक्ति ६	पोते	पड़ोते
१५१	टिप्पणी २ (1)	alredy	already
१५७	४	चह	चाहते
१५६	२	पारम्भिक	प्रारम्भिक
१६४	टिप्पणी १ (३) पंक्ति ४	troabl	trouble
१८३	टिप्पणी १	envirans	Environs
१९०	१६	भू	रूप
१९३	१९-२०	वि स १७९७ ई स १७४१	वि स १८०५ ई स १७४८, नई शोध मेघराज कृत हस्तलिखित रचना करीब १८३८ मे लिखी गई, के आधार पर। वख्तरामा का पुत्र मगलराज पढ़ें व मगलराज की जगह कीर्तिराम पढ़ें।

वदि १

२१६	७	फोज	फौज
२२४	१४	बद्धसिंह	बुद्धसिंह
२३३	१६	रेजिडेन्ट	रेजिडेण्ट
२६४	२	मालसिंह	सबलसिंह
२६४	४	१३५०	११५०
२६७	६	१६८५	१६६०
२६७	१८	बख्तसिंह	सूरजमलजी
२७६	११	माधोसिंह	माधोसिंह
२८०	१३	सिघाते	सिधाते
२८०	६	वाघोद	वाघोर
,,	१३	जाल	जात
२८६	१६	बध	वध
२६१	१७	बिडयोसिंह	बिहदोसिंह
३०२	टिप्पणी १ पंक्ति २	मत्यु	मत्यु
३०६	टिप्पणी १	Shekbawats	Shekhawats
३१४	५	रामननाथजी	रामनाथजी
३१४	६	रज्यकाय	राज्यकाय
३१६	टिप्पणी १	as	as to
३२७	१७	द्वितीय	प्रथम
३४७	६	लक्ष्मण	लक्ष्मणसिंह
३४६	५	१६१२	१६४६
३५३	१३	सुचार	सुचारु
३६८	१५	बवीरा	बावरा
३६८	२२	अजीतसिंह	जतसिंह
	३	१८३७	१८३६
३८१	१३	समजाने	समझाने
३६२	२१	रणावत	राणावत
३६८	८	उपरान्त	उपरान्त
३६६	२१	मैं	मे
४०२	३	सतोली (मारवाड़)	सातोली (कोटा राज्य)
४०५	८	प्ररो	और
४०८	१६	अश्विन	आश्विन
४१५	१४	थी	थे